लद्दाख-यात्रा की डायरी

हिमालय के एक दुर्गम प्रदेश की रोमांचकारी यात्रा का सजीव वर्णन

लेखक

लेफ्टिनेंट कर्नल सज्जनसिंह

१९५५

सत्साहित्य-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मन्त्री, सस्ता साहित्य मण्डल
नई दिल्ली

पहली बार १९५५
मूल्य अढाई रुपये

प्रकाशकीय

हिन्दी मे यात्रा-साहित्य का बडा ही अभाव है। कुछ पुस्तके निकली हैं, लेकिन उनकी सामग्री और छपाई इतनी आकर्षक नही है कि पाठकों को उनसे विशेष प्रेरणा मिले। इसी कमी को दूर करने के लिए हमने यात्रा-साहित्य प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है। पहली पुस्तक 'हिमालय की गोद में' निकाली है, जिसमे गगोत्री-यमुनोत्री की यात्रा का वर्णन है। दूसरी पुस्तक 'जय अमरनाथ' प्रकाशित की है, जिसमे काश्मीर-स्थित अमरनाथ की यात्रा का रोचक हाल है।

हमे हर्ष है कि तीसरी पुस्तक लद्दाख पर निकल रही है, जहाँ जाने का बहुत कम लोग साहस कर पाते हैं। इस पुस्तक को पढकर पाठक स्वय अनुभव करेगे कि वास्तव मे यात्रा कितनी कठिन है और वहाँ जाने के लिए कितने परिश्रम, धीरज तथा कष्ट-सहिष्णुता की आवश्यकता है। लेखक स्वभावत फक्कड हैं और मुसीबतो से घबराते नही है। फिर भी पाठक देखेगे कि कई स्थानो पर उनतक का हौसला पस्त पड गया था।

लेखक शिकार खेलने के लिए उस बीहड और जनशून्य प्रदेश मे गये थे, लेकिन उन्होने यात्रा का इतना विशद वर्णन किया है कि उसमे वहाँ की भौगोलिक स्थिति के साथ-साथ वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य, लोगो के रहन-सहन और व्यवहार आदि पर भी काफी प्रकाश पडता है। एक प्रकार से लद्दाख-प्रदेश की झाकी इन पृष्ठो मे मिल जाती है।

लेखक की शैली बडी प्रभावशाली है और यही कारण है कि उनके वर्णन बडे ही रोचक बन पडे हैं। कोई-कोई चित्र तो इतना सजीव है कि पढकर ऐसा प्रतीत होता है, मानो हम स्वय अपनी आँखो से उस चित्र को देख रहे हैं।

इस पुस्तक की एक बडी खूबी यह है कि यात्रा का यह यथार्थ वर्णन है। लेखक ने जो कुछ अपनी आँखो से देखा, भला या बुरा, उसमे विना नमक-मिर्च लगाये उसे ज्यो-का-त्यो उपस्थित कर दिया। इस दृष्टि से यह

यात्रा-विवरण बहुत ही प्रामाणिक है।

जिस समय लेखक इस दुर्लभ यात्रा पर गये थे, उस समय वह ओरछा-राज्य के दीवान थे, परन्तु देश के स्वतन्त्र हो जाने पर ओरछा-राज्य का विध्य-प्रदेश मे विलय हो गया और अब वह एक स्वतन्त्र नागरिक के रूप में मध्यभारत के मदसौर नामक स्थान पर खेती-बारी का काम कर रहे हैं।

हमे आशा है कि इस पुस्तक को पढ़कर न केवल पाठको का मनोरजन होगा, अपितु उनको एक नये प्रदेश की जानकारी भी मिलेगी और वहाँ जाने की प्रेरणा भी।

पुस्तक मे कई सुन्दर चित्र दिये गए हैं, जिससे उसकी सजीवता और भी बढ गई है।

—मंत्री

भूमिका

लद्दाख-यात्रा का निश्चय किस प्रकार हुआ, इसके पीछे एक छोटी-सी कहानी है। सन् १९३६ के जून की बात है। मैं रायपुर (मध्यप्रदेश) से शिकार खेलकर लौटा था। सन्ध्या समय श्रीमान् ओरछेश की सेवा मे पहुँचा और अपनी यात्रा का हाल सुनाया। उस समय दो-तीन अग्रेज महाशय और एक महिला भी बैठी थी। शिकार का हाल सुनाते-सुनाते जब मैंने कहा कि साढे इक्यावन इच के सीग का एक अरना भैसा भी मारा था, परन्तु अरना भैसा मध्यप्रदेश मे मारना मना है, इसलिए वहाँ के जगल-विभाग के अधिकारियो ने सीग और चमडा ले लिया और मुकदमा चला दिया है तो उक्त महिला से न रहा गया। बोली, "क्या आपको शिकार का शौक है ?"

मैंने कहा, "जी हाँ ! शौक तो है।"

महिला बोली, "तब तो आपके पास शिकार की ट्राफिया[1] बहुत-सी होगी ?"

मैंने कहा, "सिवा छह-सात चीतल के सीगो के, जो किसी कोने मे पडे होगे, मेरे पास कुछ नही है।"

बातो के सिलसिले में जब महाराज और मैंने अपने विचार प्रकट किये कि हम लोग, जहाँतक हो सके, भारतवर्ष के जानवरो की ट्राफियो का अच्छा सग्रह करना चाहते हैं तो उक्त महिला ने कहा, "और सब ट्राफी आप हिन्दुस्तानियो के बस की है, परन्तु लद्दाख के शिकार और उसमे भी ओविस अमोन[2] को मारने का बूता आपका नही है।"

महिला की बात चुभ गई और उसी घडी से मैंने मन मे ठान लिया कि कुछ भी हो, ओविस अमोन की शिकार अवश्य करनी है। इसी उधेड-बुन

---

[1] मारे हुए जानवरो के सींग, चमड़ा, दाँत आदि।

[2] तिब्बत की एक प्रकार की बड़ी जगली भेड, जिसे लद्दाखवाले न्यान कहते है।

मे तिब्बत और लद्दाख के शिकार के विषय की जितनी भी पुस्तकें मिल सकी, पढ डाली और यह निश्चय किया कि गढवाल के नीतीमाणा दर्रे से मानसरोवर तथा कैलास पहुँचा जाय और वहाँ से सिधु के किनारे-किनारे शिकार खेलते हुए लेह, फिर मध्य एशिया के ट्रीटी-मार्ग से श्रीनगर (काश्मीर) पहुँचकर यात्रा समाप्त की जाय।

मैंने अपने विचार बुन्देलखण्ड के पॉलिटिकल एजेण्ट कर्नल वार्टन साहब के सामने प्रकट किए और उनसे अनुरोध किया कि वह तिब्बत राज्य से मेरे लिए राहदारी और शिकार की स्वीकृति मगवा दें। लिखा-पढी मे लगभग एक वर्ष लगने के पश्चात् उत्तर मिला कि मै कैलास से लद्दाख की यात्रा तो कर सकता हूँ, परतु शिकार की स्वीकृति नही दी जायगी। कुछ ही महीनो के पश्चात् मेजर कैम्पवेल पॉलिटिकल एजेण्ट हो गए। वह वडे मिलनसार आदमी थे और अच्छे शिकारी भी। उन्हे जव मैंने अपनी शिकार की योजना वताई तो वड़े खुश हुए और मुझे आश्वासन दिया कि वह मेरे लिए भरसक प्रयत्न करेंगे और मुझे तिब्बत से शिकार का परवाना अवश्य मँगवा देगे। फिर एक वर्ष की लिखा-पढी के वाद सन् १९३८ मे वही उत्तर मिला। मेजर साहव ने अपने पत्र-व्यवहार की पूरी फाइल दिखाई, जिससे मुझे भी विश्वास हो गया कि तिब्वतवाले शिकार की स्वीकृति कभी न देंगे। मैंने जव अपनी शिकार की जिज्ञासा प्रकट की तो कर्नल साहव ने समझाते हुए कहा, "तुम्हे ओविस अमोन ही तो मारना है। यह जानवर काश्मीर स्टेट के लद्दाख-प्रान्त मे मिल सकता है। वहाँ क्यो नही जाते? मैं काश्मीर के रेजीडेण्ट को लिखकर सब ठीक कराये देता हूँ।"

मेजर साहव की वात मान ली गई, परन्तु एक शर्त के साथ—अर्थात् लद्दाख की शिकार के परमिट (स्वीकृति-पत्र) में 'चाग चेन मो' का उल्लेख अवश्य होगा। तिब्वत का हिरन केवल 'चाग चेन मो' नदी के किनारे मिलता है। इस कित्ते मे प्रति वर्ष छह शिकारियो को परमिट दिया जाता था। जव कर्नल साहव ने लिखा-पढी आरम्भ की तो मैंने भी काश्मीर के अफसरो का परिचय प्राप्त करने का प्रयत्न किया और भाग्यवश वहाँ के गेम-वार्डन से भी पत्रो द्वारा परिचय कर लिया। गेम-वार्डन मेरे एक मित्र

के रिश्तेदार निकले। उन्होने मुझे मेरी इच्छानुसार आश्वासन ही नही दिया, वरन् १६३६ के मार्च मे परमिट भी भेजने का वादा कर लिया।

१६३८ के दिसम्बर मे मुझे पता चला कि मेरी लद्दाख-यात्रा के विषय मे सब तय हो गया है। अब रुपये और साथी की चिन्ता हुई। रुपयो की चिन्ता तो स्वाभाविक थी, परन्तु साथी की चिन्ता लगाई घर-वालो ने। सब कहने लगे कि इतनी लम्बी और दुष्कर यात्रा मे साथी होना अनिवार्य है। कई मित्रो से, जो शिकार के शौकीन थे, बात-चीत की गई और समझाया गया, परन्तु चार महीने की यात्रा और उस पर डेढ-दो हजार का खर्च करने के लिए कोई तैयार न हुआ। आखिर कुँवर हरवलसिहजी साथ चलने के लिए तैयार हो गये। मार्च के दूसरे सप्ताह मे दोनो के नाम के परमिट आ गये, जिसके लिए प्रत्येक को एक सौ पचहत्तर रुपये देने पडे। परमिट १० अप्रैल, १६३६ से १० नव-म्बर, १६३६ तक का था, जिसमे पृथक्-पृथक् जाति के सत्ताईस जानवर मारने का उल्लेख था। 'चाग चेन मो' के लिए १५ जुलाई से १४ नव-म्बर, तक शिकार खेलने की आज्ञा थी। हम दोनो ने तय किया कि जून के प्रारम्भ मे प्रस्थान किया जाय और एक महीना काश्मीर मे रहकर जुलाई के शुरु मे हिमालय पार किया जाय। किताबे पढ-पढकर जो कुछ उधर जाने के लिए बाते जान सके, उसीके अनुसार कई फुटकर वस्तुए, जैसे गरम पानी की रबर की थैली, थर्मामीटर, कुतुबनुमा, थर्मस, स्टोव, औषधियो की पेटी, काले चश्मे, दस्ताने, कीले लगाने के लिए मोटे तले के बूट आदि खरीदने के लिए अप्रैल मे बम्बई पहुँचा और सिवा ऊँचाई देखने के यन्त्र के सब वस्तुएँ खरीद लाया। अप्रैल के अन्ततक हम दोनो तैयार हो गये। इसी बीच एक समाचार-पत्र में पढा कि उस वर्ष बर्फ अधिक गिरने के कारण ट्रीटी-रोड, जो लद्दाख जाती है, मई में न खुल सकेगी। जोजीला[1] बर्फ से भरा पडा है।

गेम-वार्डन से पत्र-व्यवहार करने पर पता चला कि १५ जून तक

---

[1]ला तिब्बती में दर्रे को कहते हैं। लद्दाख जाते समय हिमालय को इसी दर्रे से पार किया जाता है।

मार्ग खुल जायगा, परन्तु फिर भी कही-न-कही जोजीला पर बर्फ पर होकर जाना पड़ेगा ।

२३ जून को हमलोगो ने टीकमगढ से यात्रा प्रारम्भ की । इस यात्रा का वर्णन मैंने आगे के पृष्ठो मे तिथिक्रम से किया है। काश्मीर तक का हाल बहुत सक्षेप मे दिया है, कारण कि काश्मीर के विषय मे कई पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं ।

यह यात्रा आज से लगभग सोलह वर्ष पूर्व की गई थी । तबसे अब-तक स्थिति मे काफी अन्तर पड गया है। उस समय देश परतन्त्र था और बहुत-सी विवशताएँ थी । अब देश स्वतन्त्र हो गया है। फिर भी मैंने उस यात्रा का ज्यो-का-त्यो वर्णन इस डायरी मे किया है, जिससे पाठको को उस समय की स्थिति का पूरा चित्र और परिचय मिल जाय । वस्तुत लद्दाख की भौगोलिक स्थिति में बहुत विशेष फर्क नही पडा है और न नियम-कायदो में परिवर्तन हो जाने पर भी वहाँ के लोगो के रहन-सहन आदि मे खास अन्तर आया है । इसलिए यह यात्रा-विवरण आज भी ताजा जान पड़ेगा ।

मुझे विश्वास है कि पाठको को यह डायरी रुचिकर प्रतीत होगी और इसे पढकर वे मेरे साथ एक नये प्रदेश में भ्रमण कर लेंगे ।

मन्दसौर (मध्यभारत)
२ अक्तूबर, १९५५

—सज्जनसिंह

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१. तैयारी और प्रस्थान	१३
२. श्रीनगर में	१६
३. नये-नये दृश्य	२३
४. जोजीला का रोमाचकारी अनुभव	२८
५. जोजीला के ऊपर	३०
६. कर्गिल पहुँचे	३७
७. बौद्धो के प्रदेश मे	४१
८. लद्दाख मे प्रवेश	४७
९. लेह मे	५४
१० शापुओ की टोह मे	६३
११. कसाले का रास्ता	६९
१२. लद्दाख का आखिरी गाँव	७४
१३ टोली बँट गई	८१
१४. शिकार के देश मे	८४
१५ नेग्री के मैदान में	९३
१६. दो हृदयस्पर्शी घटनाएँ	९९
१७. बिछुडे साथी मिले	१०४
१८ अमन की खोज मे	११०
१९ एक मजेदार अनुभव	१२६
२० तिब्बती चिकारे हाथ न आये	१२९
२१ गधक के सोतो और चक्रवाको के प्रदेश में	१३२
२२. फिर न्यानो के पीछे	१३३
२३ भरलो का शिकार	१४४
२४. शापू हाथ से निकल गये	१४९

विषय	पृष्ठ
२५ हिमिस का गोम्पा	१५२
२६. शे के मेले की मुसीबत	१५५
२७ फिर भरल मारे	१५६
२८. हमारा बुरा हाल	१६०
२९. शापू हाथ लगे	१७०
३०. वापसी	१७१

लद्दाख-यात्रा की डायरी

लद्दाख-यात्रा की डायरी

: १ :

तैयारी और प्रस्थान

शुक्रवार, २३ जून

आज प्रातःकाल से ही सामान बाँधना प्रारम्भ हुआ। किसी पुस्तक मे पढा था कि श्रीनगर मे अच्छी छालदारी नही मिलती। इसलिए और सामान के साथ-साथ एक छोलदारी भी साथ ले ली। एक रायफल, एक छर्रे की दुनाली, दूरबीन, केमरा, स्टोव, थर्मामीटर और कुतुबनुमा आदि जितनी भी आवश्यक वस्तुएँ थी, पेटी मे बन्द कर दोपहर के समय ओरछा-नरेश से विदा माँगने गया। उन्होने आज्ञा दी कि यात्रा की विस्तृत डायरी लिखूँ और जहाँ-कही अवसर मिले, डाक द्वारा उक्त डायरी को भेजता जाऊँ। चार बजे टीकमगढ से मोटर द्वारा प्रस्थान किया। कहने की आवश्यकता नही कि घरवालो ने अब भी हमें रोकना चाहा, परन्तु जैसे-तैसे पीछा छुडाकर हम लोग चल ही दिये। कुण्डेश्वर मे प० बनारसीदासजी चतुर्वेदी से मिलने गए तो वहाँ पर श्रीरामजी शर्मा से भेट हो गई। थोडी देर शिकार के विषय मे गपशप करके पाँच बजे ललितपुर स्टेशन के लिए चल दिये। साढे सात बजे दिल्ली-एक्सप्रेस से दिल्ली के लिए रवाना हुए।

सबेरे छह बजे दिल्ली पहुँचे और स्टेशन पर रिटायरिंग रूम मे ठहरे। नहा-धोकर भोजन किया, फिर शहर गये। बन्दूको के कारतूस और अन्य वस्तुएँ खरीदकर स्टेशन लौटे। मै तो सामान को पेटी मे बन्द कर रहा था और अपने साथी दाऊसाहब (हरबलसिहजी) से कहता जा रहा था कि यहाँ से श्रीनगर का वापसी टिकट ले लेना चाहिए। पखा जोरो से चल रहा था और हम लोग गर्मी के मारे पसीने से लथपथ लौटे थे। दाऊसाहब 'हाँ', 'ठीक है'

आदि के अतिरिक्त कुछ बोलते ही न थे। मैंने झुंझलाकर कहा, "आपको हो क्या गया है ?" वह बोले, "बारह बजे से बुखार चढा है। बुखार की हालत मे बाजार में आपके साथ घिसट रहा था। अब मैं सोऊँगा। आप टिकट और सामान बुक कराने का प्रबन्ध कर लीजिये।"

बाजार से लाये सामान को पेटी मे रखकर कुली को बुलाया और सब सामान को लेकर, नीचे उतरकर श्रीनगर का वापसी टिकट खरीदने के पश्चात्, सामान को बुक करा दिया। इस सब मे लगभग तीन घण्टे लग गये। पाँच बजे कमरे मे लौटकर पूछने पर दाऊसाहब ने बताया कि खूब पसीना आ रहा है और बुखार भी उतर गया। रात को नौ बजे की गाडी से चल दिये।

वजीराबाद मे गाडी बदलकर[1] लगभग तीन बजे जम्मू पहुँचे। हम दोनो साफाधारी थे और वह भी राजपूती ढग का। कुलियो की भीड़ लग गई और बात-की-बात मे हमारा सामान उतारकर मोटर-एजेन्सी के आफिस मे, जो स्टेशन के पास ही था, ले भागे। वे लोग हमे, हमारे साफो और सामान को देखकर किसी देशी राज्य के राजा समझते थे। मोटर-एजेसी के बाबू से पूछने पर मालूम हुआ कि उनकी लारी दूसरे दिन सवेरे चलेगी, परन्तु हम बीस रुपये अपने पास से दे दे तो हमें एक मोटर मिल जायगी, जिससे हम तुरन्त यहा से विदा हो जायगे। मैंने दाऊ-साहब की तबियत ठीक न देखकर यही उचित समझा कि आज ही चल दिया जाय। बीस रुपये देकर मोटर की। ड्राइवर से पूछने पर मालूम हुआ कि कस्टम के नाके से यदि हमने शीघ्र छुटकारा पा लिया तो सम्भव है कि अँधेरा होने से पूर्व बनिहाल पार करके श्रीनगर रात को पहुँच जायँ। दिन डूबने के बाद बनिहाल के चौकीवाले रास्ता बन्द कर देते है।

कस्टम के नाके पर यह कहने पर भी कि हम काश्मीर राज्य के कस्टम इन्स्पेक्टर जनरल के मित्र हैं, हमे आधा घण्टा लग ही गया। हमारा सामान अन्य यात्रियो की तरह देखा गया, दो-तीन जगह हस्ताक्षर भी करने पडे तब कही छुटकारा मिला। हाँ, राज्य के मेहमानो को जिनके

---

१. यह यात्रा भारत-विभाजन से पहले की गई थी।

लिए पूर्व ही से सूचना थी तथा यूरोपियन यात्रियो को सबसे पहले बिना किसी जॉच-पडताल के जाने दिया गया।

जम्मू काफी गर्म स्थान है। यहाँ से मीलो पहाड प्राय: छोटी छोटी झाडियो से ढके थे और सूखे मालूम होते थे, परतु कुद, जो जम्मू से ६६ मील है, पहुँचने पर चीड के वृक्ष मिलने लगे और ठडक हो गई। सध्या हो चली थी। कुद ५४०० फुट की ऊँचाई पर है। अँधेरा होते-होते कुद से १० मील चलकर बटोत के डाक बँगले मे जाकर ठहरे। यहाँ का बँगला बहुत अच्छा है तथा खाने-पीने का समुचित प्रबन्ध है। बटोत ५१०० फुट की ऊँचाई पर है।

सोमवार, २६ जून

रात को ठडक अच्छी होने के कारण मुझे तो खूब नीद आई, परन्तु दाऊसाहब को रातभर बुखार रहा। सबेरे चाय पीकर आगे बढे। मोटर के चलते ही दृश्य अच्छे नजर आने लगे। यहा से ठीक रामबन तक, जो चिनाब के किनारे बसा है, उतार है और साथ ही पहाडों और नदी का दृश्य मनोरम है। आगे बनिहाल गॉव आया। यहाँ थोडी देर रुककर आगे चले। बनिहाल से कुछ ही फासले से चढाई प्रारम्भ होती है, जो कई मील चढने के बाद बनिहाल की पीरपचाल सुरग पर पहुँचती है। यह सुरग लगभग ९००० फुट की ऊँचाई पर है। जब दृश्य अच्छे आने लगे और कही-कही चकोर दिखाई दिये तो तबीयत खुश हो गई। अभी-तक कही-कही बर्फ गला भी नही था। सुरग के पास पहुँचते-पहुँचते काफी जाडा लगने लगा, यहाँतक कि हमे कम्बलो की शरण लेनी पडी। सुरग के मुहाने पर फौजी गारद लगा था। ड्राइवर ने यहॉ गाडी रोक दी और कहा कि उतर कर थोडा दृश्य देख लीजिये। तबतक चढाई से गर्म हुआ गाडी का इजन भी ठडा हो जायगा। सुरग ९६० फुट लम्बी है।[1]

सुरग पार कर ड्राइवर ने पुन गाडी रोकी और कहा कि काश्मीर के दृश्य भी देख लीजिये। प्रात काल का समय था, इससे साफ दिखाई

---

१. अब तो बनिहाल की बस्ती के पास से एक और सुरंग तैयार हो रही है, जिसके तैयार होने पर श्रीनगर का रास्ता बारहो महीने चालू रहेगा।

नही दे रहा था। हमने रुकना पसन्द नही किया। कुछ ही मील के उतार के वाद काश्मीर की तलहटी मे पहुचे। अब पहाडो और मैदानो मे वृक्षों के घने होने के कारण खूब हरियाली-ही-हरियाली दिखाई देती थी। झेलम के सहारे-सहारे सडक श्रीनगर तक जाती है।

: २ :

श्रीनगर में

लगभग एक बजे श्रीनगर पहुचे। एक होटल मे ठहरे। एक तो हम-लोग श्रीनगर से अपरिचित थे, दूसरे आज दोपहर से ही दाऊसाहब को बुखार का जाडा लगने लगा था। नौकर ने हमारे विस्तरे फैलाने के लिए पूछा तो मैंने केवल दाऊसाहब का विस्तरा लगाने को कहा। हम लोगो के पास वन्दूकें और दूसरा सामान काफी था। दाऊसाहब कम्वल और रज़ाई मे जाड़े के मारे कॉप रहे थे और मैं मारे गर्मी के कमरे मे इधर-उधर टहल रहा था। अपने साथी को कोसता था कि भले आदमी ने टीकम-गढ मे क्यो नही वताया कि इन्हे बुखार आता है। बुखार ठीक होने के वाद चलते। इस अनजान जगह मे न मालूम कितने दिन पडा रहना पडेगा और व्यर्थ का कष्ट होगा। जवतक पूरे स्वस्थ नही हो जाते, ढाई-तीन महीने की यात्रा, वह भी टट्टू पर, बीहड स्थानो में, करना मूर्खता होगी।

दाऊसाहव को शाम को डाक्टर को दिखाया। उन्होने दवाई देकर सान्त्वना दी कि कोई फिक्र की वात नही, शीघ्र आराम हो जायगा और एक सप्ताह मे यात्रा करने के लायक हो जायगे।

होटल गदा होने के कारण उसे वदला। दूसरे होटल मे सामान जमा कर भोजन किया। तीन-चार दिन की थकावट थी। विस्तर पर लेटते ही नीद आ गई।

मगलवार, २७ जून

सवेरे उठे तो मित्र की तवीयत थोडी अच्छी थी।

दिन मे सवसे पहले मै अपने एक मित्र से मिलने गया, जो पन्ना के

रहनेवाले थे। काश्मीर मे केवल यही मेरे परिचित थे। बगले पर पहुँचने पर मालूम हुआ कि वह कस्टवार की ओर दौरे पर गये हैं और आठ दिन में लौटेंगे। वापसी मे कुछ अखबार और नक्शे खरीदे। एक तो पूरे काश्मीर राज्य का तथा दूसरा लद्दाख का। पास ही आर्मी एजेन्सी थी। श्रीनगर मे कई एजेन्सियाँ हैं, जो यात्रियो के लिए शिकार, भ्रमण, हाउसबोट, मकान आदि का प्रबन्ध करती है। एजेन्सी मे जाकर मैनेजर से मिला और उनको अपनी यात्रा का उद्देश्य बताया। वे सब प्रबन्ध करने के लिए तैयार हो गये और यहाँतक कहा कि अस्कर्दू के राजा उनके मित्र हैं, जो अपनी जागीर मे मारखोर और आयवेक्स[1] की शिकार की व्यवस्था कर देंगे। मैंने उनसे अगले दिन सोच-विचारकर अपना निर्णय बताने को कहकर विदा ली। यहाँ से मै गेम-वार्डन (शिकार अफसर) के दफ्तर मे पहुँचा।

बातचीत के सिलसिले मे मैंने शिकार-अफसर से कहा कि मध्यप्रदेश के वन-विभाग मे मेरे एक मित्र हैं। वह कहा करते थे कि काश्मीर-राज्य के वन-विभाग मे उनके एक सम्बन्धी है। वह बोले, "मुझे आपके विषय मे आपके मित्र ने लिखा है। अभी तो मुझे चीफ कसरवेटर के पास जाना है, अत. क्षमा करे। कल ग्यारह बजे आइये। लाइसेन्स आदि कागजी कार्यवाही सब ठीक कर दूगा।" उन्होने काश्मीर की शिकार की चार-पॉच सचित्र पुस्तिकाएँ दी और चीफ कसरवेटर से मिलने के लिए चल दिये।

लगभग दो बजे मैं होटल लौटकर आया और सब समाचार दाऊसाहब को सुनाया। अभीतक उन्हे बुखार नही चढा था। वह लेटे थे और मैं पत्र व डायरी लिखने मे व्यस्त हो गया। इतने मे किसी ने आकर कहा, "हुजूर, सलाम।" देखा तो कमरे के दरवाजे पर प्लसफोर का गरम सूट पहने तथा पट्टी और साफा बाधे एक काश्मीरी खडा है। वह बोला, "मेरा नाम मोस्तालोन है, मुझे गेम-वार्डन ने कर्नल सज्जनसिह के लिए नौकर रक्खा है। क्या आप ही कर्नलसाहब है?" मेरे 'हाँ' कहने

---

१. एक प्रकार का जंगली बकरा, जिसे काश्मीर में 'केल' और लद्दाख में 'इस्किन' कहते हैं।

पर उसने अपना वस्ता खोला और प्रमाण तथा प्रशसापत्र छाँटने लगा। मैंने कहा कि मुझे तुम्हारे पत्रादि देखने की आवश्यकता नही। गेम-वार्डन ने तुम्हारी सिफारिश की, यही काफी है। इसपर उसने प्रेसिडेट रूजवैल्ट के पुत्र का चीन देश के सेचुआन प्रान्त मे 'जाइट पण्डा'[1] की शिकार का पत्र तथा फोटो देकर कहा, "हुजूर, यह तो देख ही लीजिये। मै केवल काश्मीर मे ही नही, बल्कि चीन, वर्मा और मलाया मे भी साहव लोगो के साथ शिकार के लिए गया हूँ।" मैं इस शिकार के व्यौरे की पुस्तक पढ चुका था। अत मोख्तालोन से विशेष वाते करने की आवश्यकता न थी। उसने मुझसे कहा कि पहले-पहल काश्मीर आनेवाले साहव इतनी लम्वी यात्रा शिकार के लिए नही करते। जव मैंने उसे वताया कि हम लोग तो लद्दाख जाने की ही जिद पर डटे है तो उसने हमारे शिकार के व्लाको के नम्वर पूछे। वताने पर उसने कहा, "आपके साथी का शापू का व्लाक ठीक नही है। न० ११ का व्लाक लिया जाय। इसी प्रकार ओविस अमोन का मेरा व्लाक न० ८ ठीक नही, ६ लिया जाय।" इतने मे दूसरा शिकारी रमजानखाँ आ गया। इसने भी वही वात कही कि पहले-पहल हम लोगो का लद्दाख जाना उचित न होगा। लेकिन मेरा वही उत्तर पाकर वोला, "हुजूर, हम तो लद्दाख जाने के लिए तरसते हैं। तीन महीने का सफर हे, जिससे तनख्वा और इनाम काफी मिलता है, लेकिन साथ ही हम यह भी नही चाहते कि आपको तकलीफ हो और दुवारा यहाँ आने का नाम ही न ले। अगर आपको तकलीफ नही हुई और शिकार अच्छा हो गया तो हम लोगो को हर साल आप लोगो से आमदनी होगी। हम तो यही कहेगे कि अस्तोर, काजीनाग या कस्टवार मे शिकार खेलिये।" इस पर भी जव हमने विचार न वदला तो रमजानखाँ ने मोख्तालोन के कथनानुसार हमारे व्लाक वदलने की राय दी और कहने लगा, "हम लोग तो १६ तारीख से आपके इन्तजार मे हैं। आपको देर क्यो हो गई?" हमने उत्तर दिया कि जवतक जोजीला खुलने की खवर न मिली, कैसे आते। रम-

---

१. जाइंट पण्डा एक प्रकार का छोटा भालू होता है, जो वाँस के जंगलो में रहता है। इसे मारना वड़ा कठिन समझा जाता है।

जानखॉं ने एक साहब का पत्र देकर कहा, "देखिये, मैं इस साहब के साथ मार्च के अखीर मे लद्दाख गया था और ६ जून को लौटा हूँ। गजट मे जोजीला खुलने की खबर व्यापारियो के लिए छपती है और उसी तारीख से राज्य की तरफ से किराये के कायदे लागू होते हैं। शिकारी लोग तो आधे मार्च से हिमालय पार करने लगते हैं। यह बात जरूर है कि बर्फ की वजह से घोडो के पाँव फिसलते है, जिससे पैदल जाना पडता है। जोजीला दिन मे पार नही किया जा सकता, क्योकि बर्फ पिघलने से ऊपर से बर्फ के बडे-बडे ढेले गिरते हैं। रात को पार करने मे ठण्डी हवा का सामना करना पडता है। एक मर्तबा हिमालय पार होने पर शिकार भी निचाई पर और आसानी से मिल जाता है। ज्यो-ज्यो बर्फ पिघलता जाता है, शिकार ऊपर चढता जाता है। इस वक्त बर्फ और सर्दी कम होगी, लेकिन चढाई की तकलीफ ज्यादा होगी।" शिकार के ब्लाक बदलने के लिए रमजानखॉं ने भी वही नम्बर बताये जो मोख्तालोन ने बताये थे।

दोनो शिकारियो को लद्दाख के लिए चल देने की पड रही थी। वे कहते थे कि जितनी देर होगी, उतनी ही ऊँचाई पर जाना होगा। भेड-बकरीवाले भी ऊँची जगहो पर पहुँच जायगे और जगली जानवरो को छडका देंगे। दोनो ने हमारा कुल सामान देखा और बताया कि और तो सब ठीक है, लेकिन एक काश्मीरी पट्टू का सूट बनवा लीजिये। जब हमने गरम कपडे दिखाये तो उन लोगो ने कहा कि लद्दाख की यात्रा के बाद जितने भी कपडे होगे, हम पहन नही सकेगे। इसलिए बढिया सूट और कपडे क्यो खराब किये जायँ। यही हाल जूतो का बताया, साथ ही हमे तैयार होकर एक एजेन्सी मे चलने को कहा, ताकि खाना पकानेवाले नौकर, तम्बू और खाने-पीने आदि के सामान का सब प्रबन्ध शीघ्र हो सके। ये बातें हो ही रही थी कि इतने मे गेम-वार्डन का चपरासी आया और बोला कि साहब थोडी देर मे मिलने के लिए आ रहे हैं।

पाँच बजे के करीब शिकार-अफसर आये। उनसे ब्लाक बदलने के लिए हमने शिकारियो के कथनानुसार कहा। उन्होने नोट कर लिया और शिकारियो से कहा, "ये लोग हमारे मेहमान हैं। अगर शिकार ठीक न हुआ तो

दोनो का लाइसेन्स जब्त कर लूँगा।" फिर हमसे वोले, "यदि किसी प्रकार की गडवड दिखाई दे तो इनका वेतन काट लीजिये।" वह चले गये। कहते गये कि वह कल वाहर जा रहे हैं, हम लोग आफिस न जायँ। हमारे परमिट और लद्दाख के पास आदि परसो तक तैयार मिलेगे। अफसर के हम लोगो के होटल पर आकर मिलने का दोनो शिकारियो पर काफी प्रभाव पडा। गेम-वार्डन ही शिकारियो को लाइसेन्स देते थे, जिसके विना कोई भी शिकारी, साहव लोगो के साथ शिकारी वनकर नही जा सकता।

लगभग छ वजे मै दोनो शिकारियो को साथ लेकर एक एजेन्सी की दुकान पर गया। दुकान मे विशेप कुछ दिखाई न दिया। उसके मालिक ने हमारे शिकारियो द्वारा हमारी यात्रा का उद्देश्य सुनकर मुझे एक छपी हुई सूची दी और कहा, "इसमे से जिन-जिन चीजो की जरूरत हो, उनपर निशान लगा दे। कितनी भेजना, यह हमारा काम है। वावरची से पूछकर सव सामान याकदानो[1] मे वन्द मिलेगा।" सूची लम्वी थी। पढकर मैंने कहा, "इसमे तो ज्यादातर अग्रेजो की जरूरत की चीजे दी हुई हैं। मै तो हिन्दुस्तानी हूँ। मुझे तो तरकारी और रोटी चाहिए।" फिर भी शिकारी और खानसामा आदि के समझाने पर मैंने विस्कुट, चाकलेट और मक्खन के कुछ डिव्वे रखने को कह दिया। वे वोले कि यदि आप खर्च न करेगे तो उसी दाम पर वापस हो जायँगे, लेकिन ले चलने मे हर्ज क्या है ? चाय के सामान पर वडी जिद्द हुई। मैंने कहा कि हम दोनो चाय नही पीते। फिर चाय की सव चीजो का वोझा वेकार ले जाने से खर्च ही होगा। जव उन लोगो ने कहा कि लद्दाख मे चाय का पीना जरूरी है तो डर के मारे मैं राजी हो गया, परन्तु मन में यही समझता रहा कि नौकरो को चाय पीनी होगी, इसी से यह प्रपच रचा गया है। इसके पश्चात् कपडो की वात आई। एक सूट, दो कमीजें, पाजामे, दस्ताने आदि का इतजाम करने को कहा। जव विस्तरे की चर्चा आई तो एजेन्ट ने कहा कि लेह तक खास ठड न होगी, इसलिए वहीपर जाकर दो

---

१. याकदान लक्कड़ की पेटी होती है, जिसपर चमड़ा चढा रहता है और कड़े लगे रहते हैं, जिससे वह टट्टू पर आसानी से कसी जा सकती है।

कम्बल और दो नमदे खरीद लीजिये। लेह तक हमारे पास का एक-एक कम्बल काफी होगा। जब मैंने तम्बू-किराया, सफर-खर्च आदि के तखमीने की बात कही तो वे बोले कि कल दस बजे हमे पूरा हिसाब दे देंगे।

सध्या समय लौटकर होटल पहुँचा और दोनो शिकारियो ने दूसरे दिन नौ बजे सवेरे आने की कहकर विदा ली।

बुधवार, २८ जून

आज दाऊसाहब की तबीयत अच्छी है, नित्य नियम से नौ बजे तक फारिग हुए। इतने मे दोनो शिकारी आ गये। कुछ रुपये नकद तथा पैट्रोल देने की शर्त पर दिनभर के लिए होटल की मोटर किराये पर ली और हम चारो सामान के लिए एजेन्सी मे पहुचे। एजेन्ट ने तीन महीने की शिकार का पूरा हिसाब बनाकर तैयार कर रखा था। लगभग ११ बजे गेम-वार्डन के दफ्तर में पहुचे। असिस्टेण्ट गेम-वार्डन उपस्थित थे। मेरा अमन का ब्लाक तो वह बदल न सके, परन्तु दाऊसाहब का आयवैक्स का ब्लाक बदल दिया।

लगभग बारह बजे पुन एजेन्ट के पास पहुचे तो हमारे लिए एक-एक खानसामा और एक-एक नौकर तैयार मिले। उन्हे सामान बाँधने की आज्ञा देकर एक बजे होटल पहुँचे। खाना खाकर श्रीनगर के दर्शनीय स्थान देखने के लिए चल पडे। चश्माशाही, निशातबाग, शालामार बाग, हरवन आदि सबके चक्कर लगाये। सन्ध्या समय पुराने शहर के सरकारी बाग मे कुछ देर घूम कर वापस आये।

लगभग ८ बजे होटल पहुँचे। अंधेरा होता जा रहा था। शिकारी दूसरे दिन सवेरे आने की कहकर चले गये।

गुरुवार, २९ जून

आज सवेरे दाऊसाहब ने बताया कि वह अब बिलकुल ठीक हैं। अत कल चल दिया जाय। कहने की आवश्यकता नही कि डाक्टरसाहब ने हम बराबर मिलते थे और उन्होने ३० तारीख को जाने की अनुमति दे दी थी। आठ बजे के लगभग दोनो शिकारियो ने आकर हमारे सामान को पुन देखा और शस्त्र, दूरबीन, दवाई की पेटी, थर्मस इत्यादि के अतिरिक्त कपडे, बूट, छोलदारी आदि को यही छोड देने को कहा। छोलदारी

भारी वहुत थी। हमे खेद हुआ कि व्यर्थ मे यह सामान लाये और रेल-किराया दिया, परन्तु हम दोनो मे से किसी को अनुभव न था। श्रीनगर के सिले कपडे हमने पहन लिये और वाकी का सामान, और दोनो शिकारी, एजेन्सी मे छोडकर ग्यारह वजे लौटे। अब हमारे पास केवल एक विस्तर और एक छोटी पेटी थी, जिसमे दूरवीन, दवाई, हजामत वनाने का सामान, सावुन और मंजन था।

हम गेम-वार्डन के दफ्तर मे पहुचे। शिकार-अफसर लौट आये थे। मिले। हमे लाइसेन्स तथा लद्दाख जाने के पास आदि दिये। साथ ही एक चिट्ठी लद्दाख के शिकारियो के जमादार के नाम भी दी, जिसमे लिखा था कि वह हमे पूरी सहायता दे।

शुक्रवार, ३० जून

खाना खाकर एक वजे एजेन्सी मे जाकर सामान का निरीक्षण किया। सब सामान याकदानो मे वन्द था। एजेन्ट ने सारे सामान की सूची दी और हम दोनो को तीन-तीन सौ रुपये, जिसमे अधिकाश चिल्लर[1] थी, दिये। जब सामान लारी मे लादा जाने लगा तो रमजानखाँ वोला, "हुजूर, घोडे के लिए एक-एक काठी खरीद लीजिये, उससे आपको आराम मिलेगा। लद्दाख मे लक्कड की काठी होती है, जिसपर आप वैठ भी न सकेंगे।" हमारे अन्दाज से अधिक खर्च हो रहा था। इसलिए हमने कह दिया कि लद्दाखी यदि लक्कड की काठी पर चढ सकते हैं तो हम कौन रुई के वने हैं, जो न चढ पायंगे। रमजानखाँ वोला, "हुजूर, यहाँपर आपको दस-दस रुपये मे काठी मिल जायगी, लेह मे एक तो मिलना ही मुश्किल है, अगर मिल भी गई तो मुँहमाँगे दाम देने होगे।" इतने पर भी जब हम न माने तो वह चुप हो गया। एजेन्ट ने बताया कि लारी द्वारा वायल के पुल तक जाना होगा, जो १७ मील है। वहाँपर टट्टू तैयार मिलेंगे, जो हमे छ मील पर कगन ले जायँगे। आज की रात हमें कगन रहना था। हमारी टोली मे ये लोग थे :

मेरा शिकारी	मोख्तालोन
खानसामा	गफ्फारा

१. चिल्लर—इकन्नी, दुअन्नी आदि

नौकर	हबीबा
दाऊसाहब का शिकारी	रमजानखाँ
खानसामा	समदी
नौकर	अलिया

: ३ :

नये-नये दृश्य

लगभग छ बजे सिंध[1] के बायल पुल पहुचे। टट्टुओ पर सामान लादकर पहले चलता किया। हम दोनो के लिए १४ टट्टू सामान लादने के लिए और दो सवारी के लिए थे। इसी पुल के पास काश्मीरी पण्डितो की एक देवी है, जिन्हे 'खीर भवानी' कहते हैं। सामान के चले जाने के एक घटा बाद हम लोग चले। लगभग दो मील गये होगे कि एकाएक बादल उमड आये। काफी वर्षा हुई। हमारी बरसाती बिस्तरो मे थी, अत पानी मे सराबोर हो गये और जाडा भी लगने लगा। मुझे यह फिक्र हुई कि दाऊसाहब को कही फिर बुखार न आ जाय। पानी बन्द हो जाने पर शरीर मे गर्मी लाने के लिए शेष चार मील पैदल चलकर दिन डूबते-डूबते कगन के डाक-बगले पर पहुचे। सामान भी भीग चुका था। अत. शिकारियो ने यह सलाह दी कि तम्बू के बजाय डाक-बगले मे ठहरने से हमे आराम मिलेगा। कगन का डाक-बगला काफी बडा है। यहाँपर श्री-नगर के शौकीन प्राय एक-दो दिन के लिए आ जाया करते हैं। तीन कमरे भरे थे। चौथा खाली हमे मिल गया।

सूती कपडे पहनकर बरामदे मे डट गये। बगले पर एक मेज लगाकर कुछ स्त्री-पुरुष ताश खेल रहे थे। हम दोनो को चुपचाप देखकर एक सज्जन हमारे पास आये। बातचीत से मालूम हुआ कि वह काश्मीर राज्य की खानो के इजीनियर हैं तथा दूसरे ठेकेदार, और उनके बाल-बच्चे हैं। हमने भी अपना परिचय तथा यात्रा का उद्देश्य बताया। थोडी देर मे हम

---

१. बड़ी सिंध नहीं, काश्मीर की एक छोटी नदी

दोनो को भी पार्टी मे सम्मिलित कर लिया गया।

शनिवार, १ जुलाई

"हुजूर, सलाम, चाय तैयार है।" की आवाज पर हम दोनो उठ बैठे। देखा तो पलग की बगल मे दोनो के लिए चाय तैयार थी और शिकारी खडे थे।

शौच आदि से निवृत्त होकर चाय पीने लगे तो हमे बताया गया कि खाना तैयार है और पूछा कि क्या हम नाश्ता करेंगे ? हमने इन्कार कर दिया। एक शिकारी और एक नौकर, जिसके पास थर्मस मे हमारा खाना था, हमारे साथ रह गये। शेष सामान के साथ आगे चल दिये। लगभग साढे छ बजे हम भी चल दिये। आज हमे गूड पहुँचना था। इस समय आकाश साफ था और कल की वर्षा के कारण ठडक भी अच्छी थी। हमारा मार्ग सिध के किनारे-किनारे था। कई स्थानो पर मछली के शिकार खेलनेवाले साहबो के खेमे खडे थे। रास्ते मे भोजन करके लगभग दो बजे हम लोग गूड पहुँचे।

अब कुछ-कुछ बादल होने लगे थे, इसलिए चर्चा होने लगी कि तम्बू खडे किये जायँ या डाक-बँगले में रहा जाय। अत मे रमजानखाँ का प्रस्ताव माना गया कि लद्दाख की ठड और कष्टो को झेलने की आदत अभी से डाली जाय। अत तम्बू खडे किये गए।

थोड़ी देर बाद खदानों के इजीनियर साहब सामान के साथ आ पहुँचे। बातचीत मे उन्होने लद्दाख का ऐसा चित्र खीचा कि यदि कोई कच्चे दिल का होता तो लद्दाख जाने का विचार ही त्याग देता। उन्होने हमे डराने और हताश करने मे कसर न रखी, पर हम दृढ थे। सध्या होते-होते वर्षा प्रारम्भ हो गई, परन्तु तम्बू मे कोई खास कष्ट न हुआ।

रविवार, २ जुलाई

सवेरे से नौ बजे तक पानी बरसता रहा, अत जबतक बन्द न हुआ, रुकना पडा। नौ बजे के पश्चात् सब सामान को पहले चलता करके दस बजे के लगभग पिछले दिन की तरह हम दोनो तथा हमारे शिकारी चले। बहुत-कुछ ऊँचाई पर आ जाने तथा बादलो के कारण आज ठड थी। यहाँ से सोनमर्ग १४ मील दूर है। रास्ते में कई जगह सडक पर मजदूर लगे

हुए थे। मालूम हुआ कि राज्य सोनमर्ग तक मोटर की सडक वना रहा है।

दो मील निकलने के वाद हमने दोनो शिकारियो को सडक पर खडे भूमि पर पडी किसी वस्तु की जॉच करते हुए देखा। जब पास पहुँचे तो रमजानखॉ ने शीशे का एक टुकडा हमे दिखाते हुए कहा, "हुजूर, एक साहव का थर्मस तो टूट गया। देखिये, ये शीशे के टुकडे तथा खाना विखरा पडा है। दोनो छोटे शिकारियो के पास खाने का एक-एक थर्मस था। किसी एक ने गलती की है। हमने तो इसीलिए इन टूटनेवाली चीजो को टट्टू पर नही लादा था।" क्या कहते ? हमने कहा कि चलो, लेह मे दूसरा खरीद लेगे। मालूम हुआ कि वहॉं नही मिल सकता। अत जिसका थर्मस फूटा होगा, उसे आगे चलकर जब दोनो पृथक्-पृथक् व्लाको मे जायँगे तब गर्म खाने से छुट्टी लेनी होगी। जबतक साथ है तभीतक गर्म तरकारी का उपयोग कर सकेगे।

पॉच मील पर नदी के किनारे एक पेड के नीचे हवीवा और अलिया मिले। पूछने पर मालूम हुआ कि अलिया की पोटली की, जिसे वह पीठ पर वॉंधे था और जिसमे दाऊसाहव का थर्मस भी था, गॉठ खुल गई और सडक पर गिर पडी।

भोजन और कुछ देर विश्राम करने के वाद एक बजे के लगभग हम लोग चल दिये। कई जगह पहाडो मे वर्फ जमा दिखाई दिया। जब सोनमर्ग पॉच मील रह गया तो शुतकरी ग्राम के पास थोडी चढाई के पश्चात् एक-दम मैदान मिला। यह लगभग चार मील लम्बा और आध मील चौडा होगा। एक मील चलने के वाद दाहिनी ओर एक ग्लेशियर[1] के नीचे कुछ तम्बू देखे। शिकारियो ने वताया कि सडक की सुविधा न होने के कारण इस ओर यात्री कम आते हैं। जब सडक वन जायगी, यह स्थान भरा मिलेगा। ऐसे सुन्दर स्थान काश्मीर मे कम हैं। वास्तव मे यह उपत्यका चौडी तथा हिमाच्छादित पर्वतो से घिरी होने के कारण वहुत सुन्दर है।

जगह-जगह रुककर हम दृश्यो को सराहते थे। लगभग सात हजार

---

१. पहाड में इसे 'गल' भी कहते हैं। गल उस बर्फ के ढेर को कहते है, जो नए बर्फ के पडने तक गल नहीं पाता।

दोनो को भी पार्टी मे सम्मिलित कर लिया गया।

शनिवार, १ जुलाई

"हुजूर, सलाम, चाय तैयार है।" की आवाज पर हम दोनो उठ बैठे। देखा तो पलग की बगल मे दोनो के लिए चाय तैयार थी और शिकारी खडे थे।

शौच आदि से निवृत्त होकर चाय पीने लगे तो हमे बताया गया कि खाना तैयार है और पूछा कि क्या हम नाश्ता करेंगे ? हमने इन्कार कर दिया। एक शिकारी और एक नौकर, जिसके पास थर्मस मे हमारा खाना था, हमारे साथ रह गये। शेष सामान के साथ आगे चल दिये। लगभग साढे छ बजे हम भी चल दिये। आज हमे गूड पहुँचना था। इस समय आकाश साफ था और कल की वर्षा के कारण ठडक भी अच्छी थी। हमारा मार्ग सिध के किनारे-किनारे था। कई स्थानो पर मछली के शिकार खेलनेवाले साहबो के खेमे खडे थे। रास्ते मे भोजन करके लगभग दो बजे हम लोग गूड पहुँचे।

अब कुछ-कुछ बादल होने लगे थे, इसलिए चर्चा होने लगी कि तम्बू खडे किये जायँ या डाक-बँगले में रहा जाय। अत मे रमजानखाँ का प्रस्ताव माना गया कि लद्दाख की ठड और कष्टो को झेलने की आदत अभी से डाली जाय। अत तम्बू खडे किये गए।

थोडी देर बाद खदानो के इजीनियर साहब सामान के साथ आ पहुँचे। बातचीत में उन्होने लद्दाख का ऐसा चित्र खीचा कि यदि कोई कच्चे दिल का होता तो लद्दाख जाने का विचार ही त्याग देता। उन्होने हमे डराने और हताश करने मे कसर न रखी, पर हम दृढ थे। सध्या होते-होते वर्षा प्रारम्भ हो गई, परन्तु तम्बू मे कोई खास कष्ट न हुआ।

रविवार, २ जुलाई

सवेरे से नौ बजे तक पानी बरसता रहा, अतः जबतक बन्द न हुआ, रुकना पडा। नौ बजे के पश्चात् सब सामान को पहले चलता करके दस बजे के लगभग पिछले दिन की तरह हम दोनो तथा हमारे शिकारी चले। बहुत-कुछ ऊँचाई पर आ जाने तथा बादलो के कारण आज ठड थी। यहाँ से सोनमर्ग १४ मील दूर है। रास्ते मे कई जगह सडक पर मजदूर लगे

हुए थे। मालूम हुआ कि राज्य सोनमर्ग तक मोटर की सडक वना रहा है।

दो मील निकलने के बाद हमने दोनो शिकारियो को सडक पर खडे भूमि पर पडी किसी वस्तु की जॉच करते हुए देखा। जब पास पहुँचे तो रमजानखॉ ने शीशे का एक टुकडा हमे दिखाते हुए कहा, "हुजूर, एक साहब का थर्मस तो टूट गया। देखिये, ये शीशे के टुकडे तथा खाना बिखरा पडा है। दोनो छोटे शिकारियो के पास खाने का एक-एक थर्मस था। किसी एक ने गलती की है। हमने तो इसीलिए इन टूटनेवाली चीजो को टट्टू पर नही लादा था।" क्या कहते? हमने कहा कि चलो, लेह मे दूसरा खरीद लेगे। मालूम हुआ कि वहाँ नही मिल सकता। अत जिसका थर्मस फूटा होगा, उसे आगे चलकर जब दोनो पृथक्-पृथक् ब्लाको मे जायँगे तब गर्म खाने से छुट्टी लेनी होगी। जबतक साथ है तभीतक गर्म तरकारी का उपयोग कर सकेगे।

पॉच मील पर नदी के किनारे एक पेड के नीचे हबीबा और अलिया मिले। पूछने पर मालूम हुआ कि अलिया की पोटली की, जिसे वह पीठ पर बाँधे था और जिसमे दाऊसाहब का थर्मस भी था, गाँठ खुल गई और सडक पर गिर पडी।

भोजन और कुछ देर विश्राम करने के बाद एक बजे के लगभग हम लोग चल दिये। कई जगह पहाडो मे बर्फ जमा दिखाई दिया। जब सोनमर्ग पॉच मील रह गया तो शुतकरी ग्राम के पास थोडी चढाई के पश्चात् एकदम मैदान मिला। यह लगभग चार मील लम्बा और आध मील चौडा होगा। एक मील चलने के बाद दाहिनी ओर एक ग्लेशियर[1] के नीचे कुछ तम्बू देखे। शिकारियो ने बताया कि सडक की सुविधा न होने के कारण इस ओर यात्री कम आते हैं। जब सडक बन जायगी, यह स्थान भरा मिलेगा। ऐसे सुन्दर स्थान काश्मीर मे कम हैं। वास्तव मे यह उपत्यका चौडी तथा हिमाच्छादित पर्वतो से घिरी होने के कारण बहुत सुन्दर है।

जगह-जगह रुककर हम दृश्यो को सराहते थे। लगभग सात हजार

---

१. पहाड में इसे 'गल' भी कहते हैं। गल उस बर्फ के ढेर को कहते हैं, जो नए बर्फ के पड़ने तक गल नहीं पाता।

फुट की ऊँचाई पर पहुँच चुके थे। दिन लौट गया था और बादल तो थे ही, इससे ठड भी खूब थी। जब सोनमर्ग का डाक-बँगला एक मील रह गया तो वर्षा प्रारम्भ हुई। अत दृश्यो को सराहना तो गये भूल, बँगले तक पहुँचने की पडी। पहुँचते-पहुंचते मारे जाड़े के दाँत बज उठे।

लगभग पाँच बजे तक डाक-बँगले मे पहुँच पाये। वर्षा की वजह से तम्बू मे कष्ट होता। इस समय तापमान ६२ डिगरी था। काश्मीर राज्य की ओर से सोनमर्ग मे यात्रियो के सुभीते के लिए अप्रैल से सितम्बर तक डाकखाना, तारघर तथा खाद्य पदार्थ आदि की दुकाने खुल जाती हैं। यहाँपर प्राय सब प्रकार की तरकारी, मास आदि तो मिलते ही हैं, साथ ही सिगरेट, बिस्कुट, चाकलेट, चाय, काफी आदि भी मिल जाती हैं। अन्य डाक-बँगलो की अपेक्षा यहा का डाक-बँगला बहुत गदा है। कारण कि सराय भी इसी घेरे मे है। नौ बजे सोते समय थर्मामीटर देखा तो तापमान ५८ डिगरी था।

सोमवार, ३ जुलाई

काश्मीर मे मर्ग मैदान को कहते है, यही कारण है कि ग्राम तथा स्थानो के साथ जहाँ-जहाँ मैदान हैं, यह शब्द जोड दिया गया है, जैसे गुलमर्ग, खिलनमर्ग, टगमर्ग आदि। हमारे टट्टू चरते-चरते पहाडो पर काफी ऊँचे चढ गये थे, जिन्हे लाने मे देर होती देखकर हम दोनो ने इस समय को काम मे लाने की सोची। अतः दाऊसाहब बन्दूक लेकर बर्फ की कबूतरे मारने और मै कैमरा लेकर फोटो लेने चल दिया। दस बजे के लगभग दाऊसाहब चार फायर करके खाली हाथ लौटे, परन्तु मेरा प्रयास वृथा न गया। हमारा सामान लदकर चल चुका था, केवल सवारी के दोनो टट्टू और हबीबा और अलिया खाना लिये तैयार मिले। सोनमर्ग काश्मीरियो का लेह के मार्ग मे अतिम गाम है। यहाँ से अगला पड़ाव बालतल नौ मील है। सोनमर्ग ही से चढाई प्रारभ हो जाती है। बीच-बीच में भोटा (बेलूचिस्तानी) लोगो की झोपडियाँ दिखाई देती हैं। इन लोगो की आर्थिक स्थिति बहुत गिरी हुई है। बर्फ की अधिकता के कारण छः महीने बेचारे अपने-अपने घरो में पशुओ समेत घिरे रहते हैं। गर्मी के छ महीनो मे खेती-मजदूरी आदि, इनसे जो कुछ बन पडता है, करते हैं और अपनी

तथा पशुओ का जान बचाते रहते हैं ।

कई जगह गूजर लोग भी अपनी बकरियाँ लिये मिले । ये लोग छपुँ और पजाब से मार्च मे बकरी, भेड और गाय-भैंसे लेकर पहाडो की ओर चल देते है । इनके परिवार तथा खेमे टट्टुओ पर लदे रहते हैं । बकरिया की रक्षा के लिए बडे कुत्ते भी पाले रहते हैं । ज्यो-ज्यो बर्फ गलता जाता है, हरी घास चराने के लिए ये लोग भी अपने डेरे ऊपर ले जाते हैं । कही-कही तो इन लोगो ने लक्कड के मकान भी बना रखे है । नवम्बर के महीने तक जाड़े के आगमन के साथ-साथ ये लोग भी नीचे उतरते जाते हैं और अपने घर पहुँच जाते हैं । अन्य लोगो की अपेक्षा ये लोग काफी मालदार है । खूब घी, ऊन तथा बकरे बेचते हैं । कही-कही गूजर लोग बस भी गये हैं । पुरुप प्राय दाढी रखते हैं और सफेद साफा बॉधते हैं । स्त्रियाँ काले कपडे पहनती हैं । घी, दूध तथा भेडो का सम्पर्क और ठड मे रहने के कारण ये लोग बहुत गदे होते हैं ।

सोनमर्ग से तीन-चार मील चलकर एक जगह भोजन किया । एक काश्मीरी पडित अपनी स्त्री तथा छः महीने के एक शिशु के साथ सोन-मर्ग जा रहे थे । पूछने पर ज्ञात हुआ कि वे अमरनाथ से आ रहे है । दाऊसाहब ने विस्मय से जब पूछा कि क्या ऐसे शिशु भी अमरनाथ जा सकते हैं, तो पडित ने बताया कि अमरनाथ की यात्रा, जितनी कही जाती है, उतनी कठिन नही है । बालतल से एक दिन मे अमरनाथ जाकर वापस आ सकते हैं । हमने तै किया कि वापसी मे अमरनाथ अवश्य चला जाय ।

अब मार्ग मे बर्फ जगह-जगह मिलने लगी । दो मील की दूरी से बालतल का बँगला दिखाई दिया । बँगले से इसी ओर बॉई तरफ के पहाड से एक गूजर के कुत्ते ने बारासिघो के एक झुड को चपेटा । यह झुड हमसे दो सौ गज आगे रास्ते को काटकर जोरो से बहते नाले मे कूद पडा । मैंने मोख्तालोन से कहा कि इस झुड मे से एक-दो पानी की तेजी के मारे पत्थरो से टकरा कर मर जायँगे । मोख्तालोन ने बताया कि बारहसिंघे ऐसे नाले तैरने के आदी होते हैं । एक भी नही मरने का । बात ठीक थी । सब पार हो गये । इतने मे कुत्ता भी कूदा । वह भी पार हो गया

और देखते-देखते चपेटता हुआ लगभग तीन हजार फुट चढकर ऊपर के पत्थरो में भौंकने लगा। हम सब खडे होकर यह दृश्य देख रहे थे। बारह-सिंघा देखने का यह हमारा पहला ही अवसर था। इस झुंड मे एक नर था, जो लगभग ३९ इंच का होगा। इसी का पीछा कुत्ता कर रहा था। भौंकना सुनकर मोख्तालोन बोला, "अगर हिम्मत है तो मेरे साथ दौड लगाइये। बँगले के बराबर मे नाला पार करने के लिए पुल है। वहाँ से पहाड चढकर बारहसिंघे के पास पहुँच जाते हैं। कुत्ते ने पत्थरो के बीच उसे घेर लिया है। अगर दो कुत्ते होते तो पकड लेते। लेकिन कुत्ता अकेला है। बारहसिंघा पत्थर की तरफ पीछा किये कुत्ते को सीगो से डरा रहा होगा।" बँगले तक एक मील की दौड और तीन हजार फुट की चढाई देखकर हम दोनो ने यह कहकर टाल दिया कि इतनी मेहनत के बाद क्या ठीक कि जबतक वहाँ पहुँचे, कुत्ता बारहसिंघे को रोके रहेगा।

लगभग दो बजे बालतल के बँगले पर पहुँचे। यह बँगला अच्छा बना हुआ है। यहाँ कोई यात्री नही था। इधर-उधर जहाँ-तहाँ गूजरो के डेरे थे। तापमान ५८ डिगरी था।

पाँच बजते-बजते ठंड काफी हो गई। कमरे मे लकडी जलाई गई। यहाँपर संध्या समय हजारो चण्डूल बोलते हैं। हम तो यह समझते थे कि चण्डूल मैदान का पक्षी है। आठ बजे के लगभग जब आग के पास भोजन करने बैठे तो शिकारियो ने जोजीला के पार करने का वर्णन प्रारम्भ किया। तिब्बती मे 'ला' का अर्थ दर्रा है। अलमोडा की ओर दर्रे को 'विनायक' भी कहते है और बुन्देलखण्डी मे 'खदा'। लेह जाते समय हिमालय इस दर्रे से ही पार किया जाता है।

: ४ :

जोजीला का रोमांचकारी अनुभव

अप्रैल के प्रारम्भ में शिकारी गूड से कुली लेकर वहीं से बर्फ पर पैदल चलकर बालतल पहुँचते हैं। उस समय बर्फ बिछे रहने के कारण टट्टू नही चल सकते। जब बालतल में कम-से-कम सौ आदमियो के लग-

भग इकट्ठे हो जाते हैं तब जोजीला पार करने की हिम्मत की जाती है। यदि हम अप्रेल के प्रारम्भ मे आते तो सोलह टट्टुओ के बोझ को उठाने के लिए अस्सी कुली लगते। कारण, बर्फ पर एक कुली बीस सेर से अधिक नही उठाता। वैसे सूखे मे दो-दो मन तक उठा लेते है। जब राज्य की ओर से जोजीला खुला करार दिया जाता है तबसे राज्य के बोझ ढोने के नियम लागू होते हैं। वैसे जितना विशेष बर्फ होता है उसीके अनुसार कुली तथा शिकारी के बीच जो ठहराव हो जाय वही दाम देने पडते हैं।

जिस दिन बादल न हो और हवा कम हो, उस दिन रात के नौ बजे सब तैयार होकर बँगले से चल देते है। बर्फ के कारण सडक तो ढकी रहती है और सेहे मे पानी जमा रहता है, अत सीधे चढते है। सडक से चार मील चढाई है, परन्तु बर्फ पर सीधे दो ही मील है। दो-तीन जवान और मजबूत कुली आगे होते हैं। शेष उनसे सटे हुए भेडो की तरह हो लेते है। शिकारी तथा बूढे बीच मे रहते हैं और सबसे अन्त मे तगडे आदमी। ऊपर से शरीर को काटती हुई ठडी हवा नीचे को ढकेलती है और पीछेवाला आगेवाले की पीठ मे सिर टिकाकर आगे ढकेलता है। इस प्रकार यह यात्रियो का दल एक बडे कीडे की नाई रेगता हुआ चलता है। यदि भाग्यवश चार बजे तक दो मील चढकर ऊपर पहुँच गया तो ठीक, अन्यथा वापस हो जाता है। वापसी मे मुश्किल से एक घटा लगता है। वजह यह है कि एक तो उतार, दूसरे हवा ढकेलती है। यदि चार बजे तक ऊपर पहुंच जाय तो सूर्य की किरणो मे गर्मी आने के पूर्व पाँच मील चलकर मछोई के बगले तक लोग पहुच जाते है। यदि बँगले तक न पहुँच पाये तो एवलाश[1] के मारे कौन बच सकता है ?

इस प्रकार कभी-कभी काफिले को तीन-तीन चार-चार बार लौटना पडता है। कभी-कभी बादल होने और बर्फ पडने के कारण भी रुका रहना

---

१ सूर्य की गरमी के मारे पहाड़ो पर से कच्ची बर्फ पिघलकर बड़े-बड़े ढेले फिसलते है और वे ज्यों-ज्यो नीचे आते है, दूसरी बर्फ को साथ लेते हुए टेकरियों के बराबर हो जाते है। इन्हीं को अंगरेजी में 'एवलांश' और अल्मोड़ा में 'मन' कहते है।

पडता है। प्राय: शिकारी तथा उनके नौकर चढते समय थक जाते है और पेशाव करने के बहाने सुस्ताना चाहते हैं, परन्तु कुली बैठने नही देते। दस मिनट बैठे कि ठड मे अकडकर मरे। जोजीला पर कई अगरेजो के खानसामे और नौकर मरे थे। साहबो को तो काश्मीरी शिकारी तथा कुली सब देखते रहते हैं, परन्तु खानसामो को रात के उस धक्कमधक्के मे कौन देखता है ? दो गज दाएँ-बाएँ निकलकर बैठे कि मरे !

यह सब वृत्तान्त सुनाकर शिकारी बोले, "मगर हुजूर, यह सब तकलीफ सहने मे मजा भी तो आता है। एक बार जोजीला पार किया कि रास्ते मे पास ही दोनो तरफ शिकार मिलती है। पहाड चढना ही नही पडता। आज बर्फ की तकलीफ न होगी, लेकिन पहाड चढते-चढते दम फूल जायगा।"

रात के दस बजे तक अधेरा होते-होते खाना खाकर सो गये। ठड की अधिकता के कारण आज सिकुड गये।

: ५ :

जोजीला के ऊपर

मंगलवार, ४ जुलाई

आज सवेरे सात बजे तैयार होकर चले। उस समय तापमान ५४ डिगरी था। बगले से आध मील के बाद चढाई प्रारम्भ होती है जो चार मील तक दर्रे की चोटी तक पहुँचने तक बहुत सख्त है। रास्ते में कई लद्दू टट्टू आते-जाते मिले। अन्य प्रदेशो मे घाटी चढते समय जानवरो को बढाने के लिए चिल्लाते हैं या लकडी मारते हैं, परन्तु यहाँ केवल सीटी का प्रयोग किया जाता है। इन लोगो को जीभ को लौटा कर काफी जोर की सीटी बजाने की आदत है। जहाँ-जहाँ मोड आते है वहाँ अच्छे दृश्य दिखाई देते हैं। कई जगह मैंने फोटो भी लिये। मार्ग भी अच्छा बना हुआ है। ऊपर पहुँचते ही दृश्य एकदम बदल जाता है। दक्षिण की ओर पहाड़ पेड़ो से ढके हैं, परन्तु उत्तर की ओर पेडो का नाम नही, केवल

घास है । जहाँ-तहाँ गूजरो के डेरे हैं । जगह-जगह ठड से बचने के लिए छोटे-छोटे मकान बने हैं । कही-कही मरे हुए जानवरो के ककाल भी पडे थे । कुछ तो बर्फ पर पैर फिसलने के कारण मर गये होगे, कुछ निर्बलता के कारण भार न उठा सकने की वजह से बैठ जाते हैं और रात को ठड से सिकुड कर मर जाते है । ठड के सबब से कई दिनतक इनका मास सडता भी नही है ।

जोजीला के ऊपर पहुँचकर मैने दाऊसाहब से कहा कि अब आप हिमालय की विशालता को देखिये । जब उन्होने पहाडो की चोटियो को देखकर खड्ड की ओर नजर दौडाई तो चक्कर आ गया । हमे दस मिनट, जबतक उनकी तबीयत ठीक नही हुई, ठहरना पडा । अच्छा हुआ कि इस समय हम पैदल चल रहे थे । यदि टट्टू पर होते तो दाऊसाहब नीचे गिरते और चोट आ जाती ।

ऊपर पहुँचने के बाद मछोई के तारघर और बँगले तक बहुत मामूली चढाव-उतार है, परन्तु घास की हरियाली कम होती जाती है । बीच मे कही-कही भोजपत्र के पेड पहले मिला करते थे, परन्तु अब नही हैं । मछोई पहुँचने के समय हमे कई जगह दो-दो फर्लांग तक बर्फ पर चलना पडा, दो-तीन जगह नाले भी जमे हुए थे । मछोई के बगले से सटा हुआ एक बडा ग्लेशियर है । यहीपर हमने दोपहर का खाना खाया । तार-बाबू से बातचीत करने पर मालूम हुआ कि काश्मीर के प्रत्येक तार-बाबू को एक वर्ष जाडे के दिनो मे यहाँ रहना पडता है । बाबू के साथ लगभग बीस मजदूर रहते हैं । बॅगले पर चालीस फुट बर्फ जम जाती है । बर्फ पडते समय मजदूर पहरा रखते हैं, ताकि ऊपर का मुँह बन्द न होने पावे । इसी बर्फ मे सीढी काटकर ऊपर से नीचे बँगले मे पहुचते हैं । पाँच महीने की सामग्री जोडकर सब-के-सब कैद रहते हैं, परन्तु कही भी तार मे गडबड हुई कि इन मजदूरो मे से कुछ फौरन निकल पडते हैं और ठीक करते हैं। मार्च के महीने मे दिन के समय बीसियो एवलाश के धडाके होते रहते हैं । इस समय भी बँगले से बीस गज की दूरी पर बर्फ जमा था ।

बँगले से एक मील चलने पर उपत्यका चौडी दिखाई दी और मैदान मालूम हुआ । कई जगह बर्फ के कबूतर मिले । कही-कही मामट पैनी आवाज

लगाते दिखाई दिये। हमने पहले मामट कही नही देखा था। यह जान-वर ओद (जलमानस) से मिलता-जुलता, परन्तु उससे वजन मे आधा होता है। भूमि को खोदकर दल बना लेता है और रक्षा के हेतु खतरे के समय दौडकर दल के मुहाने पर बैठकर पैनी आवाज लगाता है, ताकि दूसरे मामट भी सावधान हो जायँ। परन्तु होता यह है कि वैसे चाहे कोई देख न सके, किन्तु आवाज सुनकर यात्री की निगाह स्वय ही आकर्षित हो जाती है। यह जानवर भोला होता है। जब चाहे ढूंककर मार लो। इसका रग गहरा कत्थई और रोम लम्बे व मुलायम होते हैं। पूछने पर मालूम हुआ कि भालुओ की भाँति मामट भी जाडे के दिनो मे समाधिस्थ हो जाता है।

जब सामने एक गाँव दिखाई दिया तो शिकारियो ने हमसे कहा, "देखिये, वह गाँव मटायम है, जहाँ हमे आज की रात रहना है। इसे यहाँ से कितनी दूर समझते हैं ?" हमने देखकर कहा कि वैसे तो एक या डेढ मील मालूम होता है, लेकिन पहाड पर चढने और आसमान साफ होने की वजह से पास दीखता है। बहुत-से-बहुत तीन मील हो सकता है। शिकारी बोले, "आप घडी देख लें। हमे कोई चढाई नही चढनी है, फिर भी वहाँ पहु-चते-पहुचते दो घण्टे लगेगे। पाँच मील से कम नही है।" वास्तव मे शिका-रियो की बात ठीक निकली। हम लोग तीन बजे के लगभग मटायम पहुचे। एक नाले के सहारे हमारा पडाव था। पानी कुछ गदला था। कैमरा में दूरबीन का लेन्स लगाकर कई फोटो लिये। एक पलग टूट गया था, दोनो ने जमीन पर बिस्तरे लगाये।

बुधवार, ५ जुलाई

सवेरे चाय लेकर शिकारी आये और बोले—"हुजूर, सलाम। मिजाज कैसे हैं ? नीद अच्छी आई ?"

मैने कहा, "नीद कहाँ से आती ! जमीन पर सो रहे थे और पास ही नाले की गड़गडाहट थी।"

आज सवेरे तापमान ५९ डिगरी था। लगभग सात बजे तैयार होकर चल दिये। रास्ते में कई जगह वल्ती लोगो की वस्ती मिली। अब चढाई-उतराई कम थी और वर्फ भी कम मिला। आकाश निर्मल होने के कारण सूर्य की किरणो मे काफी तीक्ष्णता थी, यहाँतक कि हमको कोट,

स्वेटर आदि उतारने पडे। चौदह मील चलकर लगभग दो बजे द्रास पहुचे। द्रास पहाड की बस्तियो के लिहाज से काफी बडा ग्राम है। यहा-पर डाकखाना, तारघर, थाना और दूसरे दफ्तर भी है। हमारा पडाव डाकखाने के पास ही एक बगीचे मे था। सर्दी के कारण आज सात दिन के बाद दाढी बनाई और स्नान भी किया।

काश्मीर के टट्टू और कुली द्रास तक ही आ सकते हैं। यहा से प्रत्येक पडाव पर टट्टू बदलने पडते है। राज्य की ओर से लेह और गिल-गित के मार्ग पर प्रत्येक पडाव पर यह नियम है कि आस-पास के टट्टू-वाले और कुली इकट्ठे रहते हैं। बारी-बारी से ये लोग यात्रियो का सामान लेकर दूसरे पडाव तक जाते हैं। इन लोगो मे झगडा न हो, इसके प्रबन्ध के लिए प्रत्येक पडाव पर एक जमादार होता है, जो बारी के अनु-सार नौकरी लगाता है। इधर इस प्रणाली को 'रेस' कहते है। वायल-पुल से अपना सामान लानेवाले काश्मीरी टट्टूवालो को नियमानुसार हिसाब करके हमने दाम चुकाये।

यहा का पडाव अच्छा है। काफी पेड हैं और चश्मे का पानी है। सध्या समय पोस्टमास्टर तथा दो-तीन और बाबू लोग मिलने आये। उन्होने बताया कि इधर प्राय अग्रेज ही आते हैं। जब कभी दो-चार वर्ष मे कोई महाराजा भी आ जाते हैं। बातचीत करने पर मालूम हुआ कि द्रास मे जाडे के दिनो मे बर्फ जमने की डिगरी से भी तापमान चालीस डिगरी नीचे तक पहुच जाता है। यहा के लोग मुसलमान है और काश्मीरियो से इनकी आर्थिक दशा बहुत गिरी हुई है। आज सध्या समय तापमान ७६ डिगरी था।

गुरुवार ,६ जुलाई

सवेरे ६ बजे चाय पीते समय तापमान ५२ डिगरी था। मोख्तालोन चाय लेकर आया। अपने नौकरो को जोर से बोलते सुनकर हम समझ गये कि वे ठेकेदार अथवा अन्य किसीसे लड रहे होगे। कारण पूछने पर मोख्तालोन बोला, "मै अकेला बाँदीपुर का रहनेवाला हूँ। शेष पाचों मानसबल के हैं और एक गोल के हैं। मुझे इन लोगो के साथ रहना है। इसलिए, हुजूर, मुझसे न पूछिये। अगर इजाजत हो तो तार-बाबू को

बुलाये लाता हूँ । वे आपको सब बातें बता देंगे ।" हमने मोख्तालोन को बुलाने भेजा । इतने में हल्ला-गुल्ला बढकर ऐसा मालूम हुआ, मानो मार-पीट हो गई । अत हम दोनो तम्बू के बाहर निकल आये । देखते क्या हैं कि हमारे पाँचो नौकर यहाँ के कुछ लोगो से लडने पर उतारू हैं । इधर टट्टूवाले हमारे सामान को खीचे-खीचे फिर रहे हैं और साथ ही ऊपर से छ इंच की पानी की धार आ रही है । हमें देखकर हमारा खानसामा गफ्फारा बोला, "देखिए, इन बदमाशो ने ऊपर से पानी खोल दिया और सब सामान पानी मे भीग गया ।" रमजानखा शिकारी बोला, "हमने इन गाँव-वालो को दो आने कम मे तै किया है, लेकिन यह ठेकेदार इन्हे नही जाने देता और कहता है कि फलाँ गाँववाले जायँगे और पूरे दाम लेगे ।"

हमे भी यह घटना देखकर क्रोध हो आया । पूछने पर ठेकेदार बोला, "आपका शिकारी इन लोगो से कमीशन खा गया है । ये लोग कल ही बोझ लेकर आये हैं । आज नही जा सकते । जब इनकी बारी आयगी तब जायँगे । आज इस गाँववाले जायँगे । देखिये ये 'रेस' के कायदे । मै जमादार हू और मेरा फर्ज हे कि मैं बारी के हिसाब से इन लोगो को काम पर लगाऊँ ।"

इतने मे पोस्ट-मास्टर और मोख्तालोन आ गये । बाबू ने भी ठेकेदार की बात की पुष्टि की और उन लोगो से कहा, "पानी तुरन्त बन्द करो ।" मैने अपने पास के कागजो को देखा तो उसमे गेम-वार्डन की दी हुई 'रेस' की नियमावली भी मिली । पढने पर क्रोध शान्त हो गया और रमजानखा को डाँट दिया कि भविष्य मे इस प्रकार झगडा न करे । यह सुनकर ठेके-दार भी खुश हो गया और बोला, "इसमे हुजूर का कुसूर नही है । यह शिकारी रमजानखाँ हर साल आता है और अक्सर झगडा करता है । यह ठेकेदारो से भी कमीशन माँगता है । मैं इसकी रिपोर्ट करगिल के तहसीलदार साहब से कर रहा हूँ ।"

झगडा शात होने पर जो चूल्हे पानी से बुझ गये थे, पुन जलाये गये । इसीसे आज हम लोग खाना बनाकर नौ बजे चल पाये । आज भोटो के टट्टू पर लक्कड की काठी थी, जैसीकि पजाब मे लद्दू ऊँट की होती है । जब सवार हुये तो मोख्तालोन बोला कि लक्कड की काठी पर काफी

तकलीफ होगी । लेकिन हमने कह दिया कि कोई परवा नही ।

अब तो दोनो ओर पहाड पर घास भी नही दीखती । केवल पत्थर और मिट्टी है । जहाँ ग्लेशियर का पानी वहता है, वहाँ जगली गुलाब दिखाई देता है । उसके अतिरिक्त कोई पेड या पौधा नही है । गाँव के पास दूर-दूर से नाली काटकर बडे परिश्रम से किसान पानी लाकर थोडी-बहुत खेती करते है । वहीपर विलो के पेड लगाये गये हैं, जिनके पत्ते काट-कर जाडो मे चौपायो को चराते है । यहाँ की गाये भी दूसरी जात की हैं । इन्हे इधर 'झोम्बा' कहते हैं । यह काश्मीरी गाय और याक (सुरा गाय) के बीच की नस्ल है । याक बहुत वडा और केवल काले रग का और झब्बेदार पूँछ का होता है, जो १५००० फुट के ऊपर पालतू या जगली दशा मे पाया जाता है । परन्तु 'झोम्बा' काश्मीरी गाय के बराबर तथा सब रग की होती है । इसकी पूँछ याक की भाँति झब्बेदार होती है, परन्तु बाल बहुत छोटे होते हैं । यही कारण है कि इसकी पूँछ के चँवर नही वनते ।

द्रास से कुछ दूर चलने पर हमे कई जगह उधर से आते हुए लद्दा-खियो के कान मे पीले-पीले फूल, जो गेंदे-से थे, नजर आये । पूछने पर मालूम हुआ कि गाँव से चार मील पर एक किसान के घर पर पीला गुलाब है, जिसका फूल बिल्कुल गेंदे की शक्ल और रग का होता है । वात ठीक थी । चार मील पर जब मार्ग द्रास नदी की ओर उतरा तो देखते क्या है कि बाएँ हाथ को एक किसान के घर के पास गुलाव की वाड लगी है, जिसमे बिल्कुल गेंदा की शक्ल और रग के फूल है । हम दोनो ने सलाह की कि वापसी मे यहाँ से इस गुलाव की कलमे और पौधे घर ले जायँगे ।

कल की और आज की तीखी धूप के मारे जो अग खुले थे, जैसे मुँह, हाथ और घुटने, काले पड गये, यहाँतक कि नाक का चमडा निकलने लगा और फुन्सियाँ भी हो आई । क्वार की घाम से भी यहाँ सूर्य की किरणो मे विशेष तेजी थी । आज का पडाव भी वाईस मील लम्बा था । लगभग पाँच वजे शमसाखर्वू पहुँचे । तवतक लक्कड की काठी पर वैठने के कारण नीचे का धड अकड गया था । पडाव पर घोडे से उतरने

पर चलते नही वना। हम अपने-आपको कोस रहे थे कि शिकारियो का कहना मानकर श्रीनगर मे काठी क्यो नही खरीद ली।

थोडी देर मे तम्वू खडे करने के पश्चात् चाय लेकर शिकारी आये और आस-पास के शिकार का हाल सुनाने लगे, परन्तु यहाँ तो मारे दर्द के जी नही लग रहा था।

कहने की आवश्यकता नही कि प्रतिदिन सूर्यास्त या अँधेरा होने के पूर्व खाना खाकर सो जाया करते थे। आज भी झुटपुटा हो आया था। सिगरेट पीकर सोने जा रहे थे कि इतने मे एक कनफटे नाथ साधु एकाएक हमारे पास आकर वोले, "वावा, क्या तुम हिन्दू हो ?" हमारे 'हाँ' कहने पर उन्होने हमसे थोडा खाना और रात के लिए लकड़ी माँगी। हमने उनके इधर आने का उद्देश्य पूछा तो उन्होने वताया कि वे पजाव मे घूमते रहते हैं। कुछ दिन पूर्व उनके गुरुजी ने स्वप्न मे कहा कि नेमूमोतू मे मिलेंगे। उन्हीकी खोज मे जा रहे हैं। सुनकर रमजानखाँ वोला, "नेमूमोतू तो लेह से भी आठ पडाव आगे है।" मैने नकशा उठाकर देखा तो वात ठीक पाई। परन्तु साधु वोला कि यह नेमूमोतू नही। वह तो लेह से चालीस दिन परे है। हम समझ गये कि यह सनकी है। जव हमने उससे ठड से वचने के लिए वस्त्रादि की वात पूछी तो उसने वताया कि उसके पास लम्वे कुरते और लगोट के अतिरिक्त कुछ नही है।

हमने उसे वहुत समझाया कि लेह तक, सम्भव है, हिन्दू मिल जायँ और तापने को लकडी भी, परन्तु आगे तो कुछ नही है। इससे वापस लौटना अच्छा होगा, परन्तु वह एक न माना। हमने भी रोग असाध्य देखकर वावा को लकडी और खाना देकर विदा किया।

आज सन्ध्या समय तापमान ६६ डिगरी था। रमजानखाँ ने वताया कि इसी गाँव से पोलो का खेल शुरू हो जाता है। हर हफ्ते हर गाँव-वाले पोलो खेलते हैं। खेल दिन के दस वजे से चार वजे तक होता है। पूरे वल्तिस्तान और गिलगित तक पोलो का काफी प्रचार है।

: ६ :

कर्गिल पहुँचे

शुक्रवार, ७ जुलाई

आज सवेरे तापमान ७३ डिगरी था। लक्कड की काठी पर सवार होने के कारण जाँघो में काफी पीडा थी। सात बजे निवृत्त होकर जब टट्टू पर बैठे तो मारे दर्द के नानी याद आ गई। कुछ पैदल और कुछ दूर सवारी करते-करते चार-पाँच मील के बाद गर्मी आने पर दर्द कम हुआ। तब कही टट्टुओ पर जमकर बैठ सके। इधर मारे धूप के खुले अग मे जलन, उधर लक्कड की काठी के कारण जाँघो मे दर्द। अन्य दिनो की भाँति आज हमारा गिरोह चहकता हुआ नही था। ऐसा कोई भी दृश्य न था, जिसे लेकर बात करते। जब हम शिकारियो से पूछते तो यही पूछते थे कि कर्गिल कितनी दूर है? वे भी हमारी बेचैनी समझते थे।

लगभग तीन बजे के 'राम-राम' करते कर्गिल पहुँचे। यह ग्राम सूरू नदी के तट पर बसा है। नदी मे काफी पानी था और बडी तेजी से बह रही थी। कर्गिल गाँव भी बडा है और इसके निकट कई छोटे-छोटे गाँव हैं, जिनके खेतो और पेडो की हरियाली बडी सुन्दर थी, परन्तु हमारी तो हालत बिगड रही थी। किसे फुरसत थी कि इसे सराहते? शिकारियो ने हमें सकेत कर कई बार चाहा कि हम कुछ बातचीत करे और प्रसन्न हो, परन्तु यहाँ तो केवल यह पूछने के कि पडाव कितनी दूर है और किसी बात में जी ही नही लग रहा था। पूरे ग्राम को पारकर एक छोटे से खेत के पास हमारे सामान के टट्टू दिखाई दिये। अन्य दिनो की भाँति आज खेमे नही लगे थे। सब सामान बँधा पडा था। टट्टूवाले पतली-पतली लकडियो से झाडू लगा रहे थे। कहने की आवश्यकता नही कि पहाडो में खेत छोटे होते है और प्राय चारो ओर पत्थर की दीवार से, जो लगभग दो से चार फुट ऊँची होती है, घिरे रहते हैं। खेत को समतल बनाते समय जो पत्थर निकलते हैं, उनसे

दीवारे बना ली जाती हैं, जो खेत की रक्षा करती हैं। हम भी टट्टू से उतरे और हवा को बचाकर दीवार पर बैठ गये। झाड़ू लगाने के कारण काफी धूल उड रही रही थी। कुछ कुली इसी धूल मे झाड़ूवालो से आगे पत्थर उठा-उठाकर फेक रहे थे। अभीतक हमे जितने पडाव मिले, प्राय गाँव से बाहर और काफी बडे थे। कर्गिल मे तहसील है और गाँव भी बडा है। फिर क्या कारण है कि इतना छोटा पडाव और वह भी खेतो से घिरा हुआ है ? पूछने पर शिकारियो ने बताया कि गाँव से दो मील लेह की सडक पर नदी के पार नई बस्ती बसाई गई है, जहाँ सरकारी दफ्तर आदि है। वहीपर पडाव तथा डाक-बगला भी है। जब हमने वहीपर जाकर ठहरने को कहा तो शिकारियो ने बताया कि बस्ती दूर पड जाने के कारण टट्टू तथा दूध-लकडी जुटाने मे देर लगेगी। सामान भी टट्टुओ से उतर चुका था। अतः यही उचित जंचा कि अब तो रात यही बिताई जाय। हम लोगो की टागे भी काफी अकड चुकी थी।

जब झाड़ू लग जाने पर धूल कुछ कम हुई तो दीवार के सहारे कई जगह शौच पडा दिखाई दिया। देखकर दाऊसाहब नाराज होकर बोले, "यहाँ तो सब जगह शौच पडा है। हम ऐसी गदी जगह मे कैसे रह सकते हैं ? मालूम नहीं, लोग यहाँपर पडाव की जगह को क्यो गदा करते हैं ?" रमजानखाँ ने कहा, "देखिये, एक-एक मील तक खेत-ही-खेत दिखाई देते हैं। बेचारे टट्टी कहाँ जायँगे ? यहाँ तो गनीमत है, लेह के पास तो ईधन की कमी के कारण लोग सूखी टट्टी को जलाते हैं।"

थोडी देर बाद जब धूल कम हुई तो तम्बू लगाये गए। इतने मे एक दस-ग्यारह वर्ष का सुन्दर बालक हमारे पास आकर पूछने लगा, "क्या आप हिन्दू हो ?" हमने 'हाँ' कहा। उससे पूछा तो मालूम हुआ कि वह काश्मीरी बालक है और उसके पिता अध्यापक हैं। उसने वही से इशारा करके पाठशाला तथा अपना घर दिखाया। पास ही कुछ पादरी भी रहते थे, जो अपने मकानो की छतो पर खडे हमे देख रहे थे। इधर जितने भी मकान हैं, उनपर खपडे नही छाते हैं। छतो पर मिट्टी डालकर पानी और खासकर बर्फ से रक्षा की जाती है। लकड़ी अभाव के कारण बहुत

मंहगी है । अत गरीब लकडी का काम लम्बे-लम्बे पत्थरो से लेते हैं ।

कुछ देर के बाद बालक घर की ओर गया और दूध ले आया । हमे चाय के लिए दूध की आवश्यकता थी ही । दूध देकर वह बोला, "मेरी माता ने यह दूध आपके लिए भेजा है और कहलाया है कि मेरे पिता गॉव मे कहीं गये हैं । अभी वापस आनेवाले हैं, तब आपसे मिलेंगे । हम लोगों के लायक कोई सेवा हो तो बताइये ।" इस बालक की शिष्टता देखकर हमे बडी खुशी हुई । जब हम चाय पी रहे थे, वह घर से इलायची और सुगधित छालिया ले आया ।

मोख्तालोन से टट्टू, लकडी तथा खाने की सामग्री गॉव से जुटाने को कहकर रमजानखा ने हमसे हमारे शिकार के लाइसेस तथा राहदारी के परवाने मॉगे और बोला, "तहसीलदार साहब का पेशकार मेरा जाना-पहचाना है । सूरज डूबने के पहले ही मै तहसीलदार साहब से परवाने पर दस्तखत कराये लाता हूँ, ताकि कल सवेरे दफ्तर खुलने तक हमे ठहरना न पडे और सवेरे ही यहाँ से चल दे ।"

मोख्तालीन बोला, "कायदे से तो साहब लोगो को खुद तहसील मे जाना चाहिए । तहसीलदार, मुमकिन है, इनसे कुछ पूछे ।" परन्तु रमजानखॉ ने कहा, "कोई जरूरत नही है ।" हमारी टॉगे भी दो दिन लकडी की काठी पर बैठने के कारण बेकार-सी हो गई थी । जब दोनो शिकारी अपने-अपने काम मे चले तो हमने उनसे कहा कि कहीपर चमडे की काठी या जीन मिल सके तो किसी भी दाम पर खरीद ली जायँ। उन्होने बताया कि गॉव मे सिख, पजाबी तथा काश्मीरी सौदागरो के पास काठी है । मुमकिन है, कोई अच्छे दामो पर बेच दे । तहसील के मुलाजिम भी काठी रखते हैं । उनसे भी पूछा जायगा ।

आज सन्ध्या के छ बजे तापमान ७४ डिगरी था । सूर्यास्त से कुछ पूर्व पडितजी तथा उनके पुत्र आये । हमारे साथ उन्होने हिन्दू के नाते बडा प्रेम जताया । हमने भी उनसे इस प्रदेश के विषय मे कई प्रश्न किये और उन्होने भी हमसे बहुत-सी बाते पूछी । वे हमे काश्मीरी शिकारियो से सावधान रहने को कहते हुए बोले, "पिछले साल बूंदी (राजपूताना)

के महाराजकुमार आयवेक्स की शिकार को यहाँ आये थे। एक मरतबा एक जख्मी आयवेक्स को शिकारी दूसरे दिन ढूढ लाये, जिसपर महाराजकुमार के सरदार शका करते थे कि यह महाराजकुमार का जख्मी नही है। आप तो जख्मी जानवर की पूरी जाँच कर ले तभी ले।" हमने पडितजी को आश्वासन दिया कि इस मामले मे हम काफी अनुभव रखते है। पडितजी ने बताया कि जाडे के दिनो मे कर्गिल के पास ही आयवेक्स मिल जाते हैं। ठड इतनी होती है कि लोहे की कोई चीज छूने पर हाथ बेकार हो जाता है।

भोजन के समय मेरे मित्र बोले कि वह पडित हमारी इतनी खातिर क्यो कर रहा है? इसका कोई मतलब तो नही है? मैंने कह दिया कि बेचारा इस बीहड देश मे पडा है तो अपने सहधर्मियो के प्रति प्रेम होना स्वाभाविक है। व्यर्थ की शका करना उचित नही।

शनिवार, ८ जुलाई

आज सवेरे छ बजे तापमान ६२ डिगरी था। कल सन्ध्या समय तहसील मे परवाने पर हस्ताक्षर हो गये थे। तहसीलदार साहब बाहर गये हुए थे। अत तहसील मे हमारे जाने की आवश्यकता नही हुई। टट्टुओ का भी प्रबन्ध हो गया था, परन्तु काठी एक भी नही मिली। चाय के लिए दूध लेकर पडितजी आ गये थे। साथ ही वे कल की भाँति इलायची और सुगन्धित छालिया भी लाए थे। रात-भर के विश्राम के बाद हम भी प्रसन्न थे। फोटो लिये गए और प्राकृतिक दृश्य भी सराहे गये। कर्गिल गाँव के आस-पास सूरू नदी के किनारे के गाँव काफी हरे-भरे हैं। खेतो मे गेहूँ की फसल खडी थी और विलो के पेड भी बहुत थे। आज पडितजी खिन्न थे। जब हम चाय पीकर फोटो ले चुके और चलने की तैयारी करने लगे तो वह बोले, "क्या बताऊँ, आपकी मैं अच्छी तरह से खातिर नही कर सका। मेरी स्त्री अभी-अभी निमोनिया मे ठीक हुई है, नही तो रात को भोजन अपने घर कराता। डाक्टर कहता है कि दवाई में ब्राण्डी की आवश्यकता है। यहाँ से श्रीनगर आठ दिन मे पहुँचते हैं। मैंने लिखा हैं। देखे, कबतक ब्राण्डी आती है। मै गरीब आदमी हूँ। कहाँ से इतना पैसा लाऊँ कि एक कुली भेज सकूँ?" मैंने अपने पास

से एक चौथाई बोतल ब्राण्डी उनका देकर कहा "जबतक श्रीनगर से ब्राण्डी न आ जाय तबतक इससे काम चल जाएगा।" चलते-चलते पडितजी बोले, "फोटो की एक-एक कापी जरूर भेजिये और वापसी मे कर्गिल पहुँचने की खवर दीजिये, ताकि आपकी खातिर कर सकूँ।"

विदा होकर चले तो दाऊसाहब बोले, "देखा आपने ! आखिर चार रुपये की ब्राण्डी ले ली न ?"

मैंने कहा, "पडितजी ने हमारे लिए इतना कष्ट उठाया। दूसरे, उनकी स्त्री बीमार थी। ऐसी दशा मे थोडी ब्राण्डी दे दी तो क्या हुआ ?"

: ७ :

बौद्धों के प्रदेश में

पडाव से दो मील चलकर नदी के किनारे नई बस्ती मिली। यहाँपर तहसील तथा राजकर्मचारियो के लिए अच्छे मकान बने हैं। डाकबगला भी अच्छा है तथा थोडी-सी दूकाने भी हैं, जहाँ आवश्यक वस्तुएँ मिल जाती हैं। इसी नई बस्ती के पास सूरू नदी को पुल द्वारा पार किया। तहसील ऊँची जगह पर है, जहाँ से कर्गिल गाँव का दृश्य बडा सुन्दर दिखाई देता है। यहीं से लोगो के मगोल चेहरे हो गये हैं। वही छोटी-छोटी आँखे, चपटी नाक तथा मुँह पर बाल कम। तहसील से चलकर एक पथरीला मैदान, जो लगभग तीन मील लम्बा और दो मील चौडा था, मिला। इसे देखकर हम लोगो ने कहा कि यहाँ तो कम खर्च मे हवाई जहाज उतरने का अड्डा बन सकता है। इसी मैदान से हमने सूरू नदी छोडी और वखा नाले के सहारे चले। दो-तीन मील के बाद हमे एक दर्रा मिला जिसको पार करने के बाद एकदम बौद्धो की बस्ती प्रारम्भ हो गई। अभीतक बल्ती मुसलमानो की बस्ती थी। यहाँ से का प्रदेश है। पहला बौद्धो का गाँव शरगोला है। यहीपर पहले-पहल गोम्पा दिखाई दिया। गोम्पा को स्तूप भी कहते हैं। इसी प्रकार पत्थर पर 'ओ३म् मणि पद्म हुँ' के मत्र लिख-लिख उन पत्थरो के लम्बे-लम्बे ढेर लगाये जाते हैं, जिसे वे 'मानी' या 'माने' कहते हैं। तीसरा चिह्न

तीन गुम्बज पास-पास बनाये रहते हैं। एक लाल, एक सफेद और एक काला। इसे वे तीन ईश्वर के प्रतीक समझते हैं। जहाँतक मालूम हुआ, लद्दाख के बौद्ध तीन ईश्वर मानते है। सम्भव है, हिन्दू-धर्म के त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश) की नकल यहाँ की गई हो।

गरगोला से बखा नाले की उपत्यका काफी चौडी हो गई है और पहाड भी केवल मिट्टी के बने दिखाई देते हैं। यहाँ से चार मील की दूरी पर 'मुलबेख' लगभग चार बजे पहुँचे। यहाँ का पडाव और गाँव दोनो अच्छे हैं। गाँव से उत्तर की ओर एक ऊँचे पहाड पर दो गोम्पा हैं।

गारगोला से धर्म के साथ-साथ लोगो का पहनावा और शक्ल भी एकदम बदल गई। मैंने खेतो मे काम करते हुए स्त्रियो और बच्चो के फोटो लेने चाहे, परन्तु सबने बख्शीश माँगी। यह देखकर हमारे शिकारी बोले कि यूरोपियन यात्रियो ने इन्हे इनाम दे-देकर रुपये माँगने का आदी बना दिया है। दाम भी मामूली नही माँगते थे। जैसी सूरत वैसे दाम। यहाँ के किसान जानते है कि राहगीर या तो सुन्दर स्त्री या बहुत बूढे की फोटो लेना चाहेगे। साधारण चेहरा कोई पसन्द नही करता। कोई विशेषता होनी चाहिए। हमसे दस रुपये तक माँगे। मैंने भी यह सोच-कर कि आगे सस्ते दामो मे फोटो ले लूँगा, केमरा रख दिया। खेमे खडे करने के पश्चात् हमने शिकारियो को तम्बू के नीचे के हिस्से को पत्थरो से दबाता देखकर पूछा तो मालूम हुआ कि यहाँ प्रतिदिन सूर्यास्त के पूर्व से लेकर रात भर बडी जोर की हवा चलती है। इन लोगो की बात ठीक निकली। कारण पूछने पर वे तो नही बता सके, परन्तु मेरा अनु-मान है कि झासकार के पहाडो मे ग्लेशियर विशेष हैं। वही से बर्फ की ठण्डी हवा आती होगी।

रविवार, ९ जुलाई

आज हमारे टट्टूवाले सब बौद्ध थे। इनका वेष तथा भाषा भी एक-दम बल्तियो से पृथक थी। इनके शरीर भी पुष्ट थे। लगभग छ बजे हम चले थे। गाँव से निकलते ही तीस फुट की एक चट्टान मे लगभग बीस फुट की मूर्ति खुदी मिली। लोग कहते हैं कि यह बुद्ध भगवान की है, परन्तु मुझे तो यह विष्णु की-सी मालूम दी। मै पुरातत्व का विशेपज्ञ

नही हूँ और न कही मैंने यह भी पढा है कि हिन्दू-धर्म-प्रचारक इतनी दूर गये थे। अत. मैंने भी वहस करना ठीक न समझा। फोटो लिये, लेकिन बादल होने के कारण साफ नही आये। मूर्ति चतुर्भुजी थी, वही विष्णु के समान गदा, शख, चक्र, पद्मधारी थी।

बौद्ध कुली वल्तियो से तगडे और खुशमिजाज है। अभीतक द्रास से यहाँतक हमारे कुली चुपचाप टट्टुओ के साथ चले आते थे, परन्तु मुलबेख के बौद्ध आपस मे काफी हँसी-मजाक करते जाते थे। वल्तियो की स्त्रियाँ हम लोगो को देखकर खेतो मे काम करती हुई हमारी ओर पीठ कर लेती थी, परन्तु बौद्धो की हमे देखकर सडक के सहारे आ जाती थी। हमारे कुली भी उनसे हँसी करते थे। वे वरावर उत्तर देती थी। कहने का अभिप्राय यह कि लोग हमको सुखी मालूम हुए। इन लोगो का पहनावा भी भिन्न था। पुरुप कान मे वडी-वडी वालियाँ, जिनमे दो या तीन काँच के रगीन टुकडे होते हैं, पहनते हैं। ऊन का पाजामा तथा एक लवादा (लम्बा कोट), यही इनकी पोशाक है। पाँव मे नमदे के घुटनो तक के वूट। जव कभी विश्राम करते हैं तो आप प्राय इन्हे अपने वूट के तलो को सीते हुये पायगे। इस प्रदेश मे न तो कोई चमडा पकाना जानता है और न मिट्टी के वर्तन बनते है। भेड-वकरो के कच्चे चमडे को वूट के तले मे सी लेते है। ज्यो-ज्यो चमडा घिसता जाता है, उनपर दूसरा चढा दिया जाता है। कुछ ही महीनो मे इनके जूते हाथी के पाँव से गोल हो जाते हैं। पुरुपो के वस्त्र प्राय सफेद ऊन के होते हैं और स्त्रियो के काले रग के। केवल सिर की टोपी मे अन्तर है। पुरुपो की टोपी मथुरा के मन्दिर के पुजारियो की-सी (कनटोपी) होती है, परन्तु स्त्रियो की कनटोपी मे ऊपर पीरोजा के टुकडे आभूपणो की भाँति जडे होते हैं तथा टोपी के दोनो ओर कान भी होते है, जिसमे ऐसा मालूम होता है मानो इनके सिर पर चील पख फैलाये वैठी हो। स्त्रियो की पीठ पर एक भेड का चमडा भी वँधा रहता है। पहाडियो की भाँति यहाँ के बौद्ध भी पीठ पर ठोकनी लटकाये रहते हैं, जिससे वे बोझ ढोते हैं।

मुलबेख से ग्यारह मील चलकर हम 'नेमिकाला' पहुँचे। ऊपर गये

तो वहाँ हमने पत्थर का एक ढेर पाया, जिसपर कुछ फटे कपडे पडे थे और एक छोटी-सी छडी भी थी। एक कुली 'लो सलो हरगलो—कै कै सलो' के नारे लगाने लगा। पूछने पर मालूम हुआ कि जब किसी पहाड की चोटी पर पहुँचते हैं तो वे अपने पीरो को धन्यवाद देकर जय-जयकार के नारे लगाते हैं। सबने उक्त पत्थर के ढेर के समक्ष नत-मस्तक होकर प्रणाम किया।

लगभग दो बजे हम लोग बौद्ध खर्बू पहुँचे। यहाँ का पडाव अच्छा नही है। रमजानखाँ कई बार लद्दाख आ चुका था। इससे प्राय सब गाँव के खास-खास आदमियो को जानता था और वे भी इससे परिचित थे। इसने कुत्ते और घोडे खरीदने की बात छेडी। पूछने पर उसने बताया कि लद्दाख के कुत्ते और घोडो की काश्मीर में माँग है। अत साहब लोग से आज्ञा लेकर यहाँ से सस्ते दामो मे खरीदकर उन्हे काश्मीर मे नफे से बेचता है।

तम्बू लग जाने पर शिकारी बोले कि इस गाव मे जितने शिकारी आते हैं, अपने शस्त्रो की परीक्षा करते हैं। कारण, अगले पडाव से शिकार मिलने लगती है। हमने भी अपनी बन्दूक निकाली। चलाकर देखी तो मेरी सात मे से केवल दो गोलिया ठीक लगी। शेष सब चढ गई। दाऊसाहब की आठ मे से पाच लगी। पूछने पर मालूम हुआ कि प्रत्येक वस्तु पास दीखने का यह परिणाम है। मैदान से आनेवालो का यही हाल होता है। हम भी समझ गये कि जानवर पर बन्दूक चलाते समय ध्यान रक्खा जाय कि बन्दूक चढती है। अच्छा हुआ कि यहापर थोडे फायर कर लिये।

चाय पीने के पश्चात् पाच बजे हम लोग पोलो का खेल देखने गये। लगभग बारह आदमी पहाडी टट्टुओ पर हमारे पडाव के पीछे लेह के मार्ग पर पोलो खेल रहे थे। पहाडी-प्रदेश होने के कारण उन्हे चौडा मैदान नही मिल सकता। यह मैदान भी लगभग पचास गज चौडा था, परन्तु लम्बाई दो फर्लांग होगी। गोल के खम्भे नही होते। विपक्षी की सीमा पार कर देने मे ही गोल हो जाता है। नेरती (Foul) भी कोई नही है। गोल हो जाने पर सब खिलाडी एक कतार में अपने-अपने

टट्टुओ पर खडे हो जाते है। हारे पक्ष के खिलाडियो मे से जिसका टट्टू अच्छा होता है, वह गेद लेकर भागता है। लगभग तीस गज जाने-पर वह गेद को आगे फेक देता है। ज्योही गेद फिकी कि सब खिलाडी घोडे दौडा देते हैं। इन लोगो के पास न घोडे वदलने को हैं और न सात मिनट के वाद विश्राम की सीटी वजती है। गेद भी चोथडो की वनी होती है। वही हाल लकडी का है। वे भी हाकी की स्टिक-जैसी होती है। लम्वी लकडी में नीचे एक टुकडा चमडे से वँधा रहता है। फल यह होता है कि आप किसीको लकडी बाधते पायगे तो किसीको रकाव टूटने से उतरकर ठीक करते हुए देखेगे। जब गेद के चिथडे निकल जाते हैं तो खेल, जवतक गेद ठीक नही होती, वन्द रहता है। लिखने का अभिप्राय यह है कि आप सव खिलाडियो को एक साथ घोडे पर सवार वहुत कम देखेंगे। खेल के समय की अवधि भी नही है। किसीका घोडा थक गया तो कुछ विश्राम करने लगा और दम आने पर फिर जा मिला। इस प्रकार वे लोग घटो खेलते हैं। लक्कड की काठियो के मारे हम स्वय परेशान थे, परन्तु इन लोगो को वही लक्कड की काठियाँ ठीक थी। अव हमारी टागे कुछ-कुछ ठीक हो चली थी। आज सन्ध्या समय छ वजे तापमान ६६ डिगरी था।

सोमवार, १० जुलाई

वौद्ध खर्वू से सवेरे ६ बजे चलकर ग्यारह मील की दूरी पर हेमिस-कोट ग्राम मे हमने भोजन किया। इस ओर अव पहाडो मे पत्थर बहुत कम दिखाई देते हैं। कही-कहीपर पौधे भी है। यही से चढाई प्रारम्भ होकर 'फोतूला' पार किया जाता है। 'फोतूला' तेरह हजार पॉच सौ फुट की ऊँचाई पर है। इस जगह ऊँचाई के मारे कुछ-कुछ चक्कर-सा मालूम हुआ और सिगरेट भी अच्छी नही लगी। अव जितने भी लोग हमे मिलते थे, वे सब 'जू लेक' कहकर हमारा अभिवादन करते थे। 'जू लेक' वौद्धो का 'राम राम' है। इसी 'फोतूला' पर हमे एक फकीर मिला जिसने हमसे सिगरेट माँगी। पूछने पर मालूम हुआ कि वह लेह जा रहा था। 'फोतूला' के ऊपर पहुँचने पर वही 'लो सलो हर गलो' के नारे लगे। हम भी चढाई पूरी होने की खुशी मे सवके साथ शरीक हो गये। वल्ती मुसलमानो

से लद्दाख के बौद्ध कही ज्यादा जिन्दादिल है। यहाँवाले कुली बरावर हमसे बाते करने का प्रयास करते थे। कोई गाता था तो कोई हँसता था। हम भी इन लोगो से बरावर बाते करते हुए वहाँ की बोली के कुछ शब्द सीखते जा रहे थे। हमारा पहला पाठ था गिनती सीखने का। आज हम पाँच तक सीख चुके थे।[१] 'फोतूला' पार कर जब हम एक नाले की उपत्यका मे पहुँचे तो हमारे स्वागत के लिए तीन पुरुष और एक स्त्री मिले। स्त्री कुछ गाती जाती थी। पुरुष डफ, शहनाई और एक छोटा-सा नक्कारा लिये था। पूछने पर हमारे शिकारियो ने बताया कि हमारे आने की सूचना पाकर वे लोग हमारा स्वागत कर रहे हैं। काश्मीर की भाँति बौद्ध लोग कभी इनाम के लिए अपना हाथ पसार कर नही माँगते और न पीछे-पीछे चलते हैं। परीक्षा के लिए हम बिना कुछ दिये, नाच देख-कर चल दिये। जब लगभग सौ गज निकल गये तो देखा कि वे लोग भी अपने गाँव की ओर जा रहे हैं। हमने रुककर उन्हे बुलाया और इनाम दिया। इसी प्रकार बच्चे भी गाँव मे प्राय. फूल या फल लेकर आपका स्वागत करते हुए मिलेंगे, परन्तु कुछ कहेंगे नही। यदि आप उनसे लेना चाहे तो वे फल-फूल देंगे, अन्यथा चुप खडे रहेंगे। हाँ, कभी-कभी छोटे बालको से तुतली जबान 'बछी-बछी' कहलवा देते हैं, जो अपना फूल दिखाकर कहता है, बडा प्यारा मालूम होता है और आपसे बिना दिये रहा नही जाता। परन्तु बडे बालक कभी कुछ नही कहते। फल-फूल लेकर केवल बालक आते हैं।

'फोतूला' पार करते ही सिंधु की उपत्यका मिलती है। इधर नालो मे पौधे भी विशेष हैं।

---

१. १. चिक, २. निस, ३. सुम, ४. जी ५. अगा।

: ८ :

लद्दाख में प्रवेश

लामायुरु लगभग दो बजे पहुँचे। कैम्प मे विलो के काफी पेड थे और नाले मे झाऊ की प्रकार के पौधो का जगल-सा था। पास ही टिक-टिक की आहट मिली, जिससे मालूम हुआ कि यहाँ चकोर बहुत है। लामायुरु से ही लद्दाख-प्रदेश प्रारम्भ होता है, वैसे बौद्धो की बस्ती शरगोला से प्रारम्भ हो जाती है। लामायुरु के आस-पास शापू मिल जाते हैं।

मैने चौकीदार से बातचीत की। पहले शिकार के बारे मे पूछा। चौकीदार ने बताया कि अगर हम दो दिन ठहर जाय तो शापू की शिकार हो सकती है, परन्तु यहाँ का ब्लाक हमारे नाम नही था। लामायुरु का मठ लद्दाख मे प्रसिद्ध है। जिन यात्रियो को समय कम होता है वे यही से मठ आदि देखकर वापस श्रीनगर चले जाते हैं। चौकीदार ने बताया कि कुछ ही महीनो में लासा से महन्त आने वाले हैं। लासा का नाम सुनकर मै चौका। जब मैंने पूछा कि यह तो काश्मीर का राज्य है, यहाँपर लासा के दलाई लामा का क्या काम ? तो उसने बताया कि लद्दाख 'छोटा तिब्बत' कहलाता है। तिब्बत से काश्मीर के राजाओ ने यह प्रदेश भले ही छीन लिया, लेकिन यहाँ के गोम्पा के शासन की जिम्मेदारी लासा पर है। वही से महन्त भेजे जाते है। इस तरह का समझौता भारत सरकार द्वारा दोनो राज्यो मे है। लासा से लामायुरु आने मे चार महीने से कुछ ऊपर ही लगता है। चौकीदार ने तीर्थयात्रा के हेतु लासा जाने की इच्छा प्रकट की। मैंने उससे कहा कि बौद्ध गया आदि स्थानो पर क्यो नही जाता ? इसपर उसकी बातो से मुझे मालूम हुआ कि लद्दाख के बौद्ध यह भी नही जानते कि भगवान बुद्ध कहाँ के थे और भारतवर्ष में कौन-से तीर्थ हैं।

चौकीदार से महात्मा और योगियो के विषय मे पूछा गया तो उसने बताया कि लामायुरु से चार-पाँच मील के फासले पर दो योगी गुफाओ मे

बन्द है। भावुक लोग गुफा के मुहाने पर खाने की चीजे रख आते हैं। वे लोग किसीसे नही मिलते, यहाँतक कि शौच आदि भी गुफा के अन्दर ही करते हैं। यह सुनकर जब दाऊसाहब ने देखने के लिए जाने की इच्छा प्रकट की तो मै सहमत नही हुआ। मैने कहा, "केवल गुफा के दर्शन करने के लिए एक दिन रुकना व्यर्थ है। जब योगी के दर्शन न हो और हो भी गये तो वह बोलेगा नही, ऐसी दशा मे जाने से क्या लाभ ? यदि आपकी यही इच्छा है तो लामायुरु के मठ को देखने चलिये। वहाँपर, सम्भव है, कोई महात्मा मिले, जो हिन्दुस्तानी जानता हो।" यह सुनकर चौकीदार ने कहा, "यदि आप इस इरादे से गोम्पा जाने का विचार रखते हैं तो आपका जाना बेकार होगा। आप देखते आये है और आगे चलकर और भी देखेगे कि इस हिस्से से जितनी जमीन मे खेती हो सकती है, आदमी कुदरत से लड-लडकर उसमे पैदा करता है। जिनके पास जमीन नही है वे याक, भेड या बकरी पालकर अपना निर्वाह करते हैं। इसके दूसरे मानी यह हैं कि हम अपनी सख्या को वढा नही सकते। अगर बढ जाय तो खायगे क्या ? इन सब बातो को देखकर हमारे पुरखो ने यह ठीक ही समझा कि एक कुटुम्ब से दूसरा कुटुम्ब न हो, यानी पिता की मिल्कियत के टुकडे न हो। सबसे वडा लडका सारी जायदाद को पाता है। उसीका व्याह होता है। उसकी स्त्री सब छोटे भाइयो की स्त्री होती है। यदि कोई खुश न हो तो वह लामा बनकर पास के किसी गोम्पा या मठ मे चला जाता है। यही दशा औरतो की होती है। अगर व्याह हो गया तो ठीक, नही तो क्वारी रहकर अपने भाइयो के घर रहती हैं। अगर भावज या भाई से न बने तो वह भी औरतो के गोम्पा में जाकर "चौमो' बन जाती है। हमारे लामा और चौमो अलग-अलग मठो मे रहते हैं। हर गाँव या दस-बीस गाँवो मे जरूरत के हिसाब से इस तरह के फालतू मर्द-औरतो के लिए गोम्पा हैं, जहाँपर रहकर वे लोग काम करते हैं और जिन्दगी बिताते हैं। यह सब बच्चे पैदा होने से रोकने का तरीका है। इन पर शासन करने के लिए लासा से पढे-लिखे लामा भेजे जाते हैं। हर गोम्पा में काफी जमीन खेती के लिए है। साथ ही याक और भेड-बकरी भी हैं। मठाधीश कावलियत के मुताबिक इन लोगो से खेती, ढोर

चराना और भीख का काम लेता है। यही हाल औरतो के मठो का है। वहाँ की चौमो औरतो से ऊन कातना, बुनना और भिक्षा का काम लेती हैं। इन गोम्पो मे सबसे बडा पाप व्यभिचार है, जिसके लिए कई महीनों तक पिटाई की जाती है। अगर आप गोम्पा को देखने इस मतलब से जाना चाहते हैं कि वहाँ साधुओ के दर्शन होगे तो आपको मायूस होना पडेगा। वहाँपर आपको सिर्फ मामूली किसान मिलेगे। औरतो के मठ मे आदमी नही जा सकते।" जब यह समाचार सुना तो केवल मकान देखने के लिए मील-भर चलकर गोम्पा देखने जाना हमने उचित नही समझा। दूसरे, वापसी में हमे इधर आना ही था।

मगलवार, ११ जुलाई

लामायुरु से छ: बजे प्रस्थान किया। ग्यारह मील तक अर्थात् सिंधु के पुल तक एकदम उतार है। यहाँ मिट्टी इतनी मुलायम है कि जहाँ कही पत्थर पडे है, वहाँ उनके बोझ के मारे खम्भा-सा बन गया है। जहाँ कही पत्थर है उसके आस-पास की मिट्टी तो बह गई, परन्तु पत्थर के तले की बोझ के मारे रह गई। फल यह हुआ कि रास्ते मे कई जगह खम्भे-से खडे दिखाई देते है।

सिंधु का पुल लोहे के तारो के रस्सो पर बना है। वैसे तो इसे कहते हैं झूला-पुल, परन्तु जिस प्रकार झूला स्थिर नही रह सकता, वह बात इस पुल में नही है। पुल लगभग चालीस गज चौडा होगा। सिंधु के दोनो किनारे काफी गाँव हैं और निचाई के कारण यहाँपर गर्मी भी काफी पडती है। खेतो में हमे खेती भी खूब उत्तम दिखाई दी। पुल से एक मील चलने के पश्चात् हमे खल्त्सी मिला। यह गाँव काफी बडा है। यहाँपर डाकखाना और तारघर भी है। यहाँपर खेती के अतिरिक्त अखरोट और खूबानी के पेड भी यथेष्ठ हैं। खल्त्सी की ऊँचाई ८००० फुट के लगभग है। यहाँ के रहनेवाले सिंधु के किनारे पर खल्त्सी से ऊपर मार्सलग (हिमिस) तक को ही लद्दाख मानते हैं। इस प्रकार खल्तसी सबसे नीचे होने के कारण उष्ण है। गर्मी के कारण लोग स्नान भी करते हैं और धनिको की स्त्रियाँ रेशमी कपडे भी पहनती हैं। यहाँवालो का रग भी बहुत गोरा है तथा स्नान के कारण औरो की अपेक्षा कही स्वच्छ हैं। स्त्रियो के कपड़े

काले रग के वजाय कासनी रग के विशेष नजर आये । गॉव मे छोटे-छोटे वालक वडे सुन्दर दिखाई दे रहे थे । मुझे यहॉवालो को गौर से देखते हुए देखकर रमजानखॉं ने मोख्तालोन से कहा, "साहब को दो-तीन रुपये की इकन्नी दे दे । साहव को यहॉवाले अच्छे मालूम दे रहे हैं । वे जरूर वख्शीश देगे ।"

रमजानखॉ ने पते की बात कही थी । यहॉ के स्त्री-पुरुषो की सफाई और रग को देखकर मुझसे न रहा गया । मैंने उससे कहा, "रमजानखॉ, यह क्या बात है कि खल्त्सीवाले औरो की वनिस्वत एकदम अलग मालूम देते है ? क्या इस गॉववाले दूसरी जाति के हैं ?" सुनकर वह बोला, "नही-हुजूर, ये सव बौद्ध हैं और एक ही जाति के हैं, लेकिन सब फर्क आवोहवा का हैं । न मालूम क्यो, सिधु के किनारे खल्त्सी से लेकर मार्सलग (हिमिस) तक के रहनेवाले एकदम गोरे हैं । खल्त्सी नीचे होने की वजह से गरम है । इसलिए यहॉवाले नहा-धोकर साफ रहते हैं, लेकिन जैसे-जैसे ऊपर जाइये, ठण्ड के मारे लोग थोडे गन्दे मिलेगे । देखिये, पहाडो मे रहनेवाले, जो भेड-बकरी रखते हैं, कभी भी विला-वजह १६००० फुट से नीचे नही आते । जव इतनी ठण्ड मे रहते हैं तो उन्हे जरूर गोरा होना चाहिए, लेकिन वे सब काले हैं । आप जब लेह से आगे शिकार को जायगे तव मैं आपको वताऊँगा । उन लोगो की व्याह-शादी इन लोगो में काफी होती है । वे इन लोगो की सुन्दर लडकियॉ ले जाते हैं, लेकिन वे सव तो भी काले ही रहते हैं ।"

हम लोग खल्त्सी लगभग दस वजे पहुँच गये थे । अत. यहॉपर भोजन करने के पश्चात् यह तै हुआ कि सात मील और चलकर नुर्ला पहुँचा जाय । रास्ते मे एक अँग्रेज और एक मेम लेह से श्रीनगर जाते मिले । उनसे थोडी देर वाते हुई । वे लद्दाख देखने गये थे । थोडा और जाने के वाद साहव के दो नौकर तथा दो लद्दाखी स्त्रियाँ टट्टू पर वैठी मिली । उन्हे वुरके पहना रखे थे, परन्तु वे बेचारी क्या जाने परदा करना ! दोनो युवा और सुन्दरी थी । हमारे शिकारी उन्हे रोककर वाते करने लगे । जब वे हमारे पास आये तो बोले, "हुजूर ने देखा होगा, जो साहव गया वह लाहौर का डाक्टर था । उसके ये खानसामा और वैरा हैं ।

दोनों ने लेह से इन स्त्रियो से निकाह कर लिया है। मेम-साहब ने खुश होकर विवाह का सब खर्च दिया है।"

मैंने कहा, "बौद्ध स्त्रियाँ क्या मुसलमान से निकाह कर लेती हैं? निकाह के लिए तो उन्हे मुसलमान बनना पडता होगा? लाहौर सरीखी गरम जगह मे तो लद्दाख की स्त्री शायद ही बचती होगी।" रमजानखाँ बोला, "पहले तो साहब लोगो के नौकर वैसे ही औरतो को भगा ले जाते थे। यहाँ के लोग बडे भोले हैं। उन्हे क्या मालूम कि कहीपर ११६ डिगरी गरमी भी होती है। अगर पजाब जाकर मर गईं तो उनकी बला से। यह भी होता था कि औरतें पजाब और काश्मीर मे बेची जाती थी। एक औरत के बहुत-से खाविन्द होने की वजह से बौद्धो मे काफी लडकियाँ कुँवारी रह जाती हैं। इन्हे भगा ले जाना मुश्किल नही है। जब काश्मीर राज्य मे शिकायत होने लगी तो अब लद्दाख में यह नियम हो गया है कि कोई भी किसी औरत को ले जाय तो विवाह करके ले जाय। उसे मजिस्ट्रेट के सामने अपनी औरत को ले जाना पडता है। मजिस्ट्रेट औरत से कई सवाल करके यह यकीन कर लेता है कि दरअसल व्याह हुआ है और वह अपनी खुशी से व्याह करके आदमी के साथ जा रही है। उसे यह भी बता दिया जाता है कि हिन्दुस्तान में काफी गर्मी पडेगी।" मैंने कहा, "इस तरह निकाह और व्याह के लिए बहुत अडचन पडती होगी।" रमजानखाँ बोला, "नही हुजूर, लेह, खल्त्सी तथा कर्गिल वगैरा में मौलवी, ब्राह्मण, पादरी, सब है। वे बडी खुशी से व्याह करा देते हैं। आप जब चलेंगे, आपको सब बताऊँगा। लेह में तो काफी मुसलमान है। कुछ तो बना लिये गये हैं और कुछ काश्मीर और दूसरी जगहो से आकर बस गये है। लद्दाख मे दूसरे धरमवालो को यहाँ के बौद्धो को शुद्ध करने का काफी मौका मिलता है।[1] रमजानखाँ ने जो बताया उससे पता चला कि धर्मोपदेशक लोग खडे होकर कहते हैं कि हमारे धर्म में प्रत्येक पुरुष पृथक्-पृथक् एक ही नही वरन् कई स्त्रियाँ रख सकता है तो उसे आसानी से लोग मिल जाते हैं, परन्तु वे सब बिना घरबार के हैं। बौद्ध धर्मानुसार

१ बहु-पति-प्रथा अब कानून द्वारा बन्द कर दी गई है।

केवल वडे लडके को जायदाद मिलती है। वही विवाह करता है। उसी-की स्त्री सव भाइयो की स्त्री होती है, परन्तु वच्चे जितने भी हो, सव वडे के कहलाते है। जहाँ विवाह के हेतु छोटा भाई अन्य धर्मावलम्वी हुआ कि वह और उसकी स्त्री दोनो जाति तथा अपने-अपने घरो से निकाल दिये जाते है। फल यह होता है कि उनके उदर-पोषण का साधन सिवाय मजदूरी के कुछ नही रहता। भूमि तो जितनी जोतने लायक है, जुती है। जितने बौद्ध हैं, सबके पास भूमि हैं, तथा भूखे भी नही रहते, परन्तु दूसरे धरमवाले मजदूरी या व्यापार करते हैं।

खल्तसी से नुर्ला सात मील है। कई जगह मैंने वच्चो से फूल ले-लेकर पैसे दिये। आज हम नुर्ला मे ठहरे। रात को काफी गर्मी थी।

बुधवार, १२ जुलाई

आज सवेरे छ बजे तापमान ५८ डिगरी था। नुर्ला से लगभग छः बजे चले।

सिन्धु के किनारेवालो का रग, खासकर वच्चो का, यूरोपियनो से भी कही खुला हुआ है। वच्चो के गाल तो सेब के समान लाल हैं। यहाँ का जलवायु वहुत ही उत्तम मालूम देता हे। वच्चे अपने-अपने हाथ पसारकर फल अथवा खूवानी दिखाते हैं और "जूलेक" कहकर ध्यान आकर्पित करते हैं। इन्हे कुछ दिये विना नही रहा जाता।

दिन-पर-दिन पहाडो मे पत्थर की मात्रा कम होती ही जा रही है। अब तो जहाँ-कही हमे देखकर मवेशी भागते हैं तो धूल के गुव्वारे उडते दिखाई देते हैं।

नुर्ला से चार मील चलने के पश्चात् वाँई ओर को पहाड के अधवारे मे हमसे लगभग दो हजार फुट की ऊँचाई पर दस-वारह शापू दिखाई दिये। लद्दाख मे जगली जानवरो को, जिनकी शिकार के लिए हम निकले थे, देखने का यह प्रथम अवसर था। मैं टट्टू से उतरकर पत्थरो पर वैठ गया और दूरवीन से लगभग एक घण्टेतक खूव देखा। सव मादाएँ थी। वड़ी चर रही थी और वच्चे चरने के साथ खेल मे एक-दूसरे के पीछे दौड़ रहे थे। जव वे दौडते थे तो उनके खुरो से धूल उड़ती थी। शापू एक प्रकार की जगली भेड़ है। इससे मिलती-जुलती जात

पजाव के केम्वलपुर के पहाडो मे भी मिलती है, जिसे वहाँ 'उरियाल' कहते है।

नुर्ला से शुशपुल तक सिन्धु के किनारे घनी बस्ती है और खेतो मे बराबर गेहूँ की फसल खडी है, जिसकी हरियाली नगे पहाडो के कारण बहुत ही सुन्दर मालूम देती है। आज हम शुशपुल मे ठहरे। यहाँपर भी काफी गर्मी है। हमने मछली खाने की इच्छा प्रकट की तो मालूम हुआ कि लद्दाखी किसान न तो मछली पकडना जानते है और न खाते ही है।

सन्ध्या समय भोजन के पश्चात् हमारे शिकारी गाँववालो से आस-पास के नालो मे शापू और आयवेक्स की खबरे पूछ रहे थे। सिन्धु के दोनो किनारो पर शापू के ब्लाक बनाये हुए है। जितने शिकारी लद्दाख आते है, उनको ओविस अमोन के ब्लाक के साथ एक शापू का ब्लाक भी मिलता है।

गुरुवार, १३ जुलाई

आज सवेरे छः बजे तापमान ६८ डिगरी था। शुशपुल भी काफी गर्म है। रास्ते मे बजगू एक बडा गाँव मिला। इस ग्राम मे, जब लद्दाख का राजा था, एक किला था। गोम्पा बडा है और गाँव भी। हमने यहाँ पर दोपहर का खाना खाया और लगभग दो बजे के नेमू पहुंचे। नेमू से शुशपुल केवल ग्यारह मील है। आज हम गर्मी के मारे हैरान थे। हमारे मुँह और हाथ-पाँव का चमडा सूर्य की कडी धूप से झुलसकर निकल चुका था। नाक का चमडा तो निकलकर नीचे का लाल रग निकल आया था, जो दूर से तिलक-सा प्रतीत होता था। त्रास से लक्कड की काठियो पर बैठ-बैठकर जाँघे नीली हो गई थी। श्रीनगर से यहाँतक, अर्थात् दो सप्ताह हो गये थे, नहाये भी नही थे। हाँ, दाढी एक वार अवश्य बना ली थी।

नेमू पहुँचकर रमजानखाँ बोला, "हुजूर, आज यहीपर ठहर जाइये न ? कैसा अच्छा पडाव है! गर्मी भी काफी है। हम सब दो हफ्ते के सफर के मारे थक भी गये हैं। आज खूब स्नान किया जाय और कपडो मे साबुन लगाया जाय, ताकि कल लेह मे घुसते वक्त थोडे भले आदमी नजर आवे। न मालूम कल बादल हो जायँ और ठण्ड के मारे स्नान न

कर सके। लेह अठारह मील है। अगर सवेरे पाँच बजे चला जाय तो दो बजे तक पहुँच जायँगे। वैसे भी सब सामान जुटाने के लिए लेह मे तीन दिन रहना ही है।"

शिकारियो का प्रस्ताव माना गया और आज यहीपर दो बजे दोपहर को ठहर गये।

आज स्नान करने से और वसन्ती ठण्ड के कारण बडा अच्छा मालूम होता था। सवेरे जल्दी जाना था। अत सूर्यास्त होते-होते खाना खाकर सो गये।

: ६ :
लेह में

शुक्रवार, १४ जुलाई

आज सवेरे पाँच बजे चल पडे। कारण दस मील जाना था और शिकारियो ने बताया था कि आज मार्ग मे रेत और धूल विशेष मिलेगी। वास्तव मे उनकी बात ठीक निकली। चढाई या उतार तो नही के बराबर था, परन्तु रेत और धूल बहुत थी। सिंध के किनारे तेरह मील चलने के पश्चात् हमे एक चौडी उपत्यका मिली और बाँई ओर पाँच मील की दूरी पर लेह दिखाई पडा। लेह को बताकर शिकारियो ने पूछा कि कितना अन्तर होगा ? हमने दो मील से ज्यादा नही बतलाया, परन्तु हमे पहुँचने मे दो घण्टे लग गये। इस मैदान मे धूल बहुत अधिक थी। जगह-जगह मानी और चोरतेन बने थे। जब गाँव एक मील रह गया तो पत्थरो की दीवारो से घिरे छोटे-छोटे खेत और बगीचे मिले, जिनमे खूबानी के पेड थे। लेह मे सेब और अखरोट के पेड नही हैं। लेह के पास पहुँचने पर शिकारियो ने हमे बताया कि गाँव से डाक-बँगला एक मील दूर है। वहाँपर प्राय. यात्री आकर ठहरा करते हैं। अत कभी कमरा नही मिलता। यदि गाव के पास ठहरा जाय तो सामान आदि के खरीदने मे आसानी रहेगी। इसलिए गाँव मे एक बगीचे मे ठहरने का निश्चय हुआ। हम लोग बस्ती में दक्षिण की ओर से घुसे थे। थोड़े-से घरो को पार कर बगीचे मे पहुँच गये।

यह बगीचा लगभग एक एकड का होगा। इसके पश्चिम की ओर सीमा पर उत्तर से दक्षिण की ओर एक नाला बहता है। चारो ओर छ फुट की दीवार से घिरा है और इसमे खूबानी के पेडो की काफी छाया है। पूर्व दक्षिण के कोने पर एक छोटे-से मकान मे यहाँ की देख-रेख करने के लिए एक स्त्री रहती है। स्त्री थी तो अवेड, परन्तु देखने मे सुन्दरी थी। बारह आना रोज किराया ठहराकर टट्टुओसे सामान उतारा जाने लगा। शहर होने के कारण इस बगीचे मे जगह-जगह टट्टी पडी थी, यहाँतक कि तम्बू लगाने की जगह भी खाली न थी। दाऊसाहब को यह पसन्द नही आया, परन्तु जब उनसे कहा गया कि सब जगह ऐसी ही पाओगे तो विवश होकर राजी हो गये। जहाँ-जहाँ हमे ठहरना था, वह स्थान साफ करने के लिए उस स्त्री से कहा। वह सूखी टट्टी अपनी पीठ पर बँधी ठोकनी मे इकट्ठी करने लगी और गीली को उठाकर दीवारो के सहारे फेक दिया। इसके पश्चात् झाड़ू लगाई। तब कही टट्टू पर से सामान उतारा गया। नाले के सहारे नौकरो की झुँगियाँ और बीचोबीच हमारे दो तम्बुओ के लिए जगह साफ की गई। अभीतक हम एक ही तम्बू मे ठहरते आये थे, परन्तु यहाँ तीन दिन रहना था। अत पृथक्-पृथक् तम्बू लगाने की ठहरी, ताकि बैठने-उठने और सामान रखने मे सुविधा रहे। दो जगह सामान उतरा गया। एक जगह हमारे तम्बू और सामान तथा दूसरी जगह नौकरो की झुँगी और खाने-पीने का सामान। मै तम्बू और दाऊ-साहब झुँगी तथा दूसरे सामान की देखरेख कर रहे थे। तम्बू लगने पर सामान रखने की बारी आई। इतने मे वह स्त्री झाड़ू लगाकर मेरे पास आई। इमे प्रतिदिन नये आदमियो से पाला पडता था। अत काफी वाचाल थी। हिन्दुस्तानी अच्छी बोलती थी। उसने मुझसे कहा, 'बाबू-जी, मैं भी मदद करूँ?" मैने दाऊसाहब के तम्बू की ओर सकेत करके कहा, "वह साहब का तम्बू है। उसीमे सामान जमा दे और बिस्तर भी लगा दे।" दाऊमाहब की पेटी आदि लगाकर बिस्तर लगा रही थी कि इतने मे दाऊसाहब आ गये और उसे गालियाँ देकर भागने के लिए कहा। वह कब माननेवाली थी? बोली, "बाबूजी, आपको तो मेरा शुक्रिया अदा करना था। उल्टे नाराज़ होते हैं।" दाऊसाहब निरुत्तर हो गये।

मुझसे भी न रहा गया। बोला, "बात तो इसने पते की कही, बेचारी एक तो आपका सामान लगा रही थी, ऊपर से आप इसे डॉटते है।" दाऊसाहब ने कहा, 'आपने देखा नही, अभी तो वह टट्टी उठाकर फेंक रही थी और विना हाथ धोये मेरे सामान के हाथ लगा दिये और अब मेरा विस्तर लगा रही है। क्या इसे कोई सहन कर सकता है ?" मै कुछ कहना ही चाहता था कि इतने मे वह बोली, "नाराज न होइये, यहॉपर लकडी की कमी की वजह से हमे टट्टी जलानी पडती है। इसीसे मैंने सूखी टट्टी ठोकनी मे और गीली दीवार के सहारे फेंक दी। जब सूख जायगी तब उठा लूंगी। हिन्दुस्तान मे इससे बहुत नफरत करते है। अच्छा, मै आज गुसल कर लूगी।" कहकर वह हँसती हुई चली गई।

सामान ठीक हो जाने पर हम सब इकट्ठे हुए और सौदा खरीदने की बातचीत हुई। यही से आटा, दाल, सिगरेट आदि कुछ लेना था। लेह के कुछ ही पडाव बाद जनशून्य प्रदेश मे शिकार को जाना था और छः सप्ताह के बाद लौटकर इसी गॉव में सामान मिल सकता था। सबसे पहले तो हमने अंग्रेजी काठी खरीदने के लिए कहा। अन्य सामान की खरीद को हमने शिकारियो पर छोड दिया।

लगभग तीन बजे हमारे नौकर और शिकारी बाजार गये और छ बजे लौटकर बताया कि और सामान तो सब ठीक हो गया, परन्तु आटा रविवार अर्थात् परसो तक मिल सकेगा, अत हमने सोमवार को चलने का निश्चय किया।

लगभग सात बजे हम यूरोपियन स्टोर मे सामान खरीदने गये। सिगरेट, बिस्कुट तथा चाकलेट खरीदकर लाये। वहीपर ब्रिटिश इण्डिया के सी० आई० डी० के इन्सपेक्टर साहब, जो मुसलमान थे, मिल गये। उन्होने कहा कि वे हमसे मिलने आ ही रहे थे। पूछने पर मालूम हुआ कि लेह मे एक अफसर रहता है, जिसे ब्रिटिश ज्वाइंट कमिश्नर कहते हैं। यही लद्दाख का सर्वेसर्वा है। बाहर (चीन, तिब्बत तथा रूस) से आनेवाले और भारत मे जानेवाले यात्री तथा व्यापारियो की देखभाल तथा पासपोर्ट आदि का प्रबन्ध यही करता है। लद्दाख का गवर्नर, जिसे यहाँ के लोग 'वज़ीर' कहते हैं, इस अफसर का एक प्रकार का मातहत

है। इसी कमिश्नर की सहायता के लिए खुफिया पुलिस भी रहती है। जब ज्वाइट कमिश्नर बाहर होता है तब साधारण काम यहाँ के मोरेवियन मिशन के पादरी कर लेते हैं। आजकल कमिश्नर यहाँ नही था। हमे भारत की सीमा पर जाना था। अतः हमे मि० वाल्टर एसवो से, जो मोरेवियन मिशन के सुपरिन्टेण्डेण्ट थे, मिलना था। यह सब हमे उक्त इन्सपेक्टर ने बताया। उन्हे हमारा सब पता था। उक्त साहब को हम अपने डेरे तक लाये और कल मि० एसवो से मिलने का प्रबन्ध करा देने की कहकर उन्हे विदा किया।

हमारे तम्बू से बीस गज पर अपने मकान के दरवाजे मे हमारी चौकीदारिन बैठी हुई मोजे बुन रही थी। इस समय वह स्नान आदि करके साफ कपडे पहने तथा सुरमा लगाये बडी सुन्दर मालूम दे रही थी। जब इन्सपेक्टर साहब चले गये तो वह उठकर हमारे पास आई और बोली, "कहिये, अब तो मै गन्दी नही हूँ।" दाऊसाहब नाराज थे ही, बोले, 'यह सब रमजानखॉ की बदमाशी है। मालूम होता है उसने इसे सिखा दिया है। तू यहाँ से चली जा, नही तो पुलिस मे रिपोर्ट करता हूँ।" वह बोली, "अच्छा बाबूजी, मै जाती हूँ। मुझे मालूम है कि आपके बीवी नही है। लद्दाख से अच्छी बीबी हिन्दुस्तान मे कभी नही मिलने की। मेरे भी शौहर नही है। मै कसीदा और बुनने का काम भी अच्छा जानती हूँ।" यह कहकर वह घर की ओर गई और बहुत-सा सामान ले आई और दिखाकर बोली, "कुछ खरीदोगे?" दाऊसाहब को नाराज देखकर मै बोला, "इसमे चिढने की कौन-सी बात है? यदि कोई चीज पसन्द आए तो ले लीजिए। आखिर देखने मे क्या हर्ज है?" कुछ देर बातचीत करने के बाद वह अपना भोजन पकाने चली गई।

लगभग दस बजे हम लोगो ने भोजन किया और सोने के लिए अपने-अपने तम्बुओ मे गये। थोडी ही देर बाद दाऊसाहब अपने तम्बू से बिस्तरा लेकर मेरे तम्बू में आ गये और बोले कि मै भी आपके तम्बू मे सोऊँगा। पूछने पर बताया कि वहाँ हमारी चौकीदारिन पहुँच गई है। मेरे शिकारी मोख्तालोन और नौकर हबीबा को बुलाकर दाऊसाहब ने कहा कि वे उनके तम्बू मे सोएँ। हम दोनो एक ही तम्बू मे सो गये।

शनिवार, १५ जुलाई

लेह का बाजार लम्बा और काफी चौडा है, परन्तु रूस का व्यापार बन्द होने से अधिकाश व्यापारी चले गये थे। दस दुकानो मे से आठ मे ताले पडे थे। बाज़ार सुनसान था। कुछ देर इधर-उधर भटककर लगभग ग्यारह बजे डेरे पर आये और अपनी डाक पढने तथा पत्रो का उत्तर देने मे लग गये। उधर हमारे नौकर भी छ. सप्ताह के लिए सामान जुटाने मे लगे थे। बराबर कुलियो द्वारा सामान आ रहा था। दो काठियाँ बडी खोज के बाद मिल सकी। एक के दाम चालीस रुपये तथा दूसरी के पच्चीस रुपये बताये। सिवाय लेने के दूसरा चारा न था।

लगभग तीन बजे बादल हो गये और बूदा-बाँदी प्रारम्भ हुई, जिससे ठण्ड भी काफी हो गई। हमारे खुफिया इन्स्पेक्टर साहब ने कहला भेजा था कि मि० वाल्टर एसबो पाँच बजे बँगले पर मिलेगे। अत हम नियत समय पर उनके बँगले पर पहुँचे। इधर-उधर की बाते होने के पश्चात् हमने उनसे अखबार माँगे और ससार के समाचार पूछे। इनके पास बैटरी से चलनेवाला रेडियो भी था। साहब ने हमे कई अखबार दिये तथा रेडियो की खबरे सुनाई। इन्हीसे मालूम हुआ कि ज्वाइट कमिश्नर तथा इनके अतिरिक्त यहाँ तीसरा यूरोपियन नही है। नवम्बर मे कमिश्नर काश्मीर चला जाता है और मई मे आता है, अर्थात् जाडो मे साहब अकेले रह जाते हैं। गर्मी के दिनो मे कई यात्री आते हैं तब उन्हे अग्रेजी बोलने का अवसर मिलता है। साहब ने हमारा काफी सत्कार किया और बाद मे हमे अपना कार्यालय दिखाने ले गये। ये लोग बौद्धो को कोरे क्रिस्तान नही बनाते। उनको शिल्पकारी सिखाकर खाने-कमाने के योग्य भी बना देते हैं। बच्चो को नि शुल्क पढाते हैं। कार्यालय मे कताई और बुनाई पर काफी ध्यान दिया जाता है। बौद्ध लोग चर्खा और करघा नही जानते। वे तकली पर ऊन कातते हैं और आठ इच चौडी पट्टी बुनते हैं, जिसमें काफी समय लगता है और परिश्रम भी बहुत करना पडता है। साहब के कार्यालय मे कई स्त्री-पुरुष बडे अच्छे ढग मे चर्खे और करघे पर काम कर रहे थे। हम लोगो ने एक-एक बालदार कम्बल और दो-दो नमदे खरीदे। कम्बल के दस और नमदे के चार रुपये देने पडे। ऐसी वस्तु भारतवर्ष में

दूने दाम पर भी नही मिल सकती थी। हमने साहब को धन्यवाद दिया और कहा, "आप इन लोगो का उपकार कर रहे हैं। आप इन्हे क्रिस्तान बनाने के साथ खाने-कमाने के लायक भी बना रहे है।" साहब बोले, "इस हिस्से मे बौद्ध तो नाम को हैं। वे धर्म की परवा नही करते। यहाँपर सबसे पहले तबलीगवाले मुसलमान और बाद मे हिन्दुओ के आर्यसमाजी आये। ब्याह के आनन्द की दुहाई देकर कई बौद्धो को अपने धर्म मे मिलाया जा रहा है, परन्तु वे यह नही सोचते कि इसका नतीजा सिवाय माँगनेवाले कुली या दुराचारी औरतो के क्या होगा ? कुदरत यहाँपर इतनी कठोर है कि खेती करने के लायक जितनी जमीन थी सब काम मे लाई जा रही है। बढती आबादी क्या करेगी, इसपर कोई धर्मोपदेशक विचार नही करता। हम लोग या तो इन्हे कारीगर बनाते हैं, या कुछ रुपया देकर भेड-बकरी खरीद देते है, ताकि उनकी गुजर-बसर हो सके। रूस का माल बन्द होने से कुलियो को भी अब काफी मजदूरी नही मिलती।" हमने उनसे कहा, "हम सब सुन चुके हैं। तभी तो आपके काम की तारीफ कर रहे हैं। जबतक बढती हुई आबादी के खाने का इन्तजाम नही होता तबतक बौद्धो का एक से ज्यादा खाविन्द रखने का रिवाज़ अच्छा है।"

सन्ध्या होते-होते हमने भोजन कर लिया। बादल काफी थे। थोडी वर्षा भी हो रही थी। अतः तम्बू के भीतर मोमबत्ती जलाकर हम लोग समाचार-पत्र पढने लगे।

रविवार, १६ जुलाई

सवेरे चाय पीकर तम्बू मे बैठे लगभग ९ बजे हम जब पत्र आदि लिख रहे थे कि पडोस से डफ के साथ किसी स्त्री के गाने की आहट आई। मैंने शिकारियो से बुलाकर पूछा तो बोले—यह छगवान्नी है, जिसे फारसी मे साकी (मधुवाला) कहते है। इस प्रदेश मे तरुणियाँ एक डफ, सुराही तथा कुछ प्याले लेकर घूमती हैं। जो चाहता है उसे शराब का प्याला पीने को दे देती हैं और जबतक वह पीता है, उसके सामने बैठकर डफ बजाकर गाती हैं और हाव-भाव द्वारा उसका मनोरजन करती हैं। थोडी ही देर मे रमजानखाँ छगवाली को बुला लाया। सुन्दर तो थी ही, परन्तु अन्य स्त्रियो की अपेक्षा वस्त्रादि से खूब सजीधजी थी। एक-एक गिलास

के आठ-आठ आने ठहरे। उसने हमे गिलास मे शराब डालकर गाना प्रारम्भ किया। शराब बहुत बदबूदार थी। अत हम पी न सके। गाने मे भी कुछ नही समझे, परन्तु उसका गाने का ढग अच्छा लगा। लगभग आध घण्टे के बाद एक रुपया देकर उसे जाने को कहा। भरे प्यालो की शराब उसने वापस सुराही मे डाल ली और चल दी। दाऊसाहब बोले, "देखिये, इसने हमारी भूठी शराब सुराही मे डाल ली। इस प्रकार न मालूम कितनो की भूठी शराब यह हमे पिलाना चाहती थी।"

लगभग दो बजे वर्षा बन्द हुई और बादल भी फटने लगे। रमजान-खॉ आकर बोला, "हुजूर, आज मौसम अच्छा है। घूमने बाजार न चलियेगा? काठी का सामान टूटा था, जिसे ठीक कराने मै एक तुर्क (मध्य एशियाई) के पास गया था। वह रूस से भागकर आया है और बडी अजीब बाते सुनाता है। आपको उससे मिलकर कई बाते मालूम होगी।" हम भी राजी हो गये। कारण, ठड और वर्षा के मारे बैठे-बैठे उकता गये थे। वैसे कल यहॉ से चल देना था। हमे गॉव मे घूमना और फोटो आदि भी लेना था।

जैसा कि पहले लिख चुका हूँ, लेह मे धर्म-प्रचारको के कारण फालतू बौद्ध अन्य मतावलम्बी होते जा रहे हैं। इस्लाम सबसे बाजी मार रहा है। यहाँ के अधिकाश व्यापारी पजाब के हिन्दू थे, जो रूस और सिक्याग (चीन का प्रान्त) के व्यापार के बन्द हो जाने के कारण चले गये है। एक कारण यह भी है कि लेह मे अधिकाश लोग मुसलमान ही दिखाई देते हैं। बाजार मे कुछ हिन्दू (आर्यसमाजी) कार्यकर्त्ता भी मिले और मुझसे समाज-भवन मे चलकर व्याख्यान देने के लिए आग्रह किया, परन्तु मैंने इन्कार कर दिया और कह दिया कि जबतक किसीके निर्वाह का प्रबन्ध नहीं होता, भीख मॉगनेवाले हिन्दुओ की सख्या बढाने मे क्या लाभ?

चलते-फिरते हम उक्त रूसी (तुर्क) मोची की दूकान पर पहुँचे। सफेद वस्त्र तथा साफाधारी बुड्ढा बडा ही सौम्य मालूम देता था। उसकी पोशाक तथा एक फुट लम्बी दाढी सुन्दर थी। वह चप्पलें बना रहा था और उसके पीछे काला बुरका डाले उसकी लडकी नमदे पर रेशम का

काम कर रही थी। बुड्ढा सत्तर वर्ष के लगभग होगा और उसकी पुत्री बीस वर्ष की। हमने भी अपनी बन्दूको की स्लिग आदि ठीक करने का काम देकर बुड्ढे से बातचीत प्रारम्भ की। रूस का हाल पूछने पर वह गम्भीर होकर बोला, "मै समरकन्द का रहनेवाला हूँ। जिस वक्त रूसी आये, मैं अपनी इस छोटी लडकी के साथ ताशकद की तरफ रिश्तेदारी मे गया था। वहाँपर सुना कि एक दिन सवेरे रूसी फौज ने समरकद घेर लिया है। उनके साथ पाँच हजार हज्जाम (नाई) थे और पाँच हजार औरते फौजी वरदी मे थी। ऊपर आसमान मे हवाई जहाज मँडरा रहे थे। सब लोगो को बडी मस्जिद मे इकट्ठा करके हज्जामो द्वारा दाढी-मूँछ मुँडवा डाली गई। फौजी औरतो ने परदानशीन औरतो को पकडकर बाहर निकाला और उनके बुरके फाड डाले। तुर्कस्तान मे इस समय शैतान की हुकूमत है। इस्लाम का कही पता नही है। मसजिदो मे लोग बूट पहनकर नाचते और गाते हैं। मेरा घर, औरत, बेटे-बेटियो से भरा था। न मालूम उनका क्या हुआ होगा। मै और मेरी यह छोटी बेटी पाँच वार नमाज पढते हैं। हम लोग अपने ईमान को बचाने की खातिर यारकद आये, लेकिन दो बरस बाद सुना कि रूसी वहाँ भी पहुँच रहे है। तब जान बचाकर लेह मे अँग्रेज सरकार की पनाह ली।"

मैंने बूढे को रोककर कहा, "बाबा, यारकद तो चीनी लोगो के सिक्याग सूबे मे है। वहाँ रूसियो का क्या काम ?"

बुड्ढा बोला, "आपको सिक्याग का क्या पता है ? यह कहने को चीनी सूबा है, लेकिन वहाँपर रूसियो ने सड़के बनाली हैं और उनके हवाई जहाज रोजाना आते-जाते है। उन्ही लोगो का वहाँ बोलबाला है। एक दिन आनेवाला है, जब दुनिया से सब मजहब गायब होगे और शैतान की हुकूमत होगी। सुनता हूँ, लद्दाख को लेकर हिन्दुस्तान पर भी हमला करने की तैयारी रूसी कर रहे हैं। दुनिया के हर हिस्से मे इनके आदमी पहुच चुके हैं। अल्लाह बचावे इन शैतानो से।"

हमने बूढे से बहस करना उचित नही समझा। उसकी 'हाँ' मे 'हाँ' मिलाते गये। वह कहने लगा, "इन रूसी लोगो के न ईमान है, न कोई समाजी बधन। चाहे औरत हो या मर्द, जब चाहे बिना निकाह के, जब-

तक जी मे आया मियाँ-बीवी बन कर रहे। किसीको अपनी हुकूमत मे नही आने देते और न किसी को अपने यहाँ से बाहर जाने देते हैं। मुझे पता नही कि मेरे खानदान का क्या हुआ? पहले सौदागर आया-जाया करते थे। उनसे कुछ हालात मालूम होते थे, अब तो वे भी बन्द हैं। अपनी लड़की की शादी के लिए परेशान हूँ, कोई ईमानदार मिलता ही नही।"

मैंने कहा, "यहाँपर काफी मुसलमान हैं और उनमें कई व्यापारी हैं। क्यो नही लायक आदमी ढूढ लेते!" बूढा उत्तेजित होकर बोला, "जनाब हिन्दू मालूम देते हैं। यहाँ के मुसलमानो की न पूछिये। जितने यहाँ आते हैं, एक-एक लद्दाखी औरत रखे हुए है। उनकी औलाद को यही छोडकर चले जाते है। न उनके खाने का और न उनके रहने का इतजाम करते है। ऐसे बदमाशो को मै अपनी लडकी, जो पाँच मरतबा नमाज पढती है, कैसे दे सकता हूँ? मैंने कई मरतबा इससे अफगानिस्तान चलने को कहा। वहाँ पर सुनता हूँ कि हमारी तरफ के तुर्क भागकर बसे हुए है, लेकिन यह नही मानती। हमेशा क्वारी रहकर खुदा की इबादत करना चाहती है।"

इस प्रकार उसके विचार सुनकर हमने बूढे से विदा ली। आपस में कहते जा रहे थे कि लडकी पाँच फुट नौ इच से कम ऊँची न होगी। ऐसी दशा मे यहाँपर इसका जोड मिलना भी तो कठिन था। हम लोग पुन. यूरोपियन स्टोर में पहुँचे। कुछ सामान लेने पर हमने स्टोर-कीपर से पूछा कि यहाँ से भारत से बाहर की वस्तुएँ इतनी दूर टट्टू पर लाने पर भी श्रीनगर की अपेक्षा सस्ती क्यो हैं? मालूम हुआ कि लद्दाख के लिए जो सामान आता है, उसपर काश्मीर राज्य कस्टम नही लेता। यदि हमारे पाठक उस ओर शिकार को जाय तो लद्दाख से ही उक्त वस्तुएँ खरीदने मे उन्हे सस्ती पडेगी तथा व्यर्थ को श्रीनगर से सामान लादने का कष्ट बचेगा। केवल अग्रेजी शराब के लिए स्टोर को पहले से सूचना देनी पडती है। वैसे तो इतनी ऊँचाई पर न इसकी आवश्यकता है और न कोई पी सकता है। फिर भी हमने जानकारी के लिए लिख दिया है। स्टोर में कप्तान मोबरले मिल गये, यह भी लद्दाख की

शिकार के लिए आज ही लेह पहुँचे थे । इनको चागचेनमो मे तिब्वती हिरन का परमिट नही मिला था, परन्तु अमन का नम्बर दस और शापू का नम्बर ग्यारह व्लाक मिला था । हमे कल जाना था । इन्हे अभी दो दिन सामान खरीदना था । शराव न मिलने से वे चिंतित थे, परन्तु जव हमने उनसे पूछा कि जोजीला पार करने के पश्चात् कितनी पी सके तो वे वोले कि ऊँचाई के मारे थोडी-सी शराब से सिर चक्कर खाता है । तव हमने उनसे कहा कि शिकार की जगह तो और भी ऊँची है । वहा कैसे पी सकोगे ? तव कही वे सन्तुष्ट हुए ।

सन्ध्या होते समय हम लोग लौटकर डेरे पर आ गये और भोजन किया । दाऊसाहव ने मोख्तालोन को बुलाकर कहा, "देखो, आज खुला है । अतः तुम अपने तम्बू के परदे खुले रखना और देखते रहना कि रात को कोई आने न पावे । मैने इन्हे वता दिया कि दो दिन रमज़ानखाँ ने आपसे मजाक की थी । यहाँ कोई नही आने का । आप निश्चिन्त सोइये ।

: १० :

शापुओं की टोह में
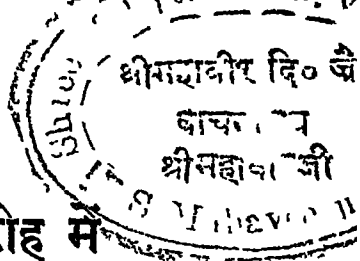
सोमवार, १७ जुलाई

आज सवेरे लेह की खरीद का सव सामान, जो रात को बाँध चुके थे, लेकर सात वजे चले । नौकरो ने वताया था कि लेह के वाद यह दस्तूर है कि प्रत्येक शिकारी साहव अपने तीन नौकरो के वीच सवारी के लिए दो घोडे देते हैं । हमने भी एक घोडा शिकारी को तथा एक घोडा दोनो नौकरो को दिया । अभीतक सव नौकर पैदल ही आये थे । इस प्रकार आज सामान के घोडो के अतिरिक्त सवारी के छ घोडे थे । लगभग बारह वजे हम तेरह मील चलकर रनबीरपुर पहुँचे, जहाँ आज हमें ठहरना था । मार्ग विल्कुल समतल था । कारण, हम सिधु के किनारे जा रहे थे । लेह से छ मील पर शै नाम का एक अच्छा ग्राम मिला,

जह पर एक पहाडी पर सुन्दर गोम्पा बना है। लेह और शँ के बीच कई मानी मिली थी। लेह से रनवीरपुर तक वरावर खेत मिलते गये। रनवीरपुर पहुँचने पर रमजानखाँ ने प्रस्ताव रक्खा कि सरकारी पडाव ग्राम से एक मील उस पार है, जहाँ से सामान जुटाने मे कठिनाई होगी। अत गाँव मे ही क्यो न ठहरा जाय ? उसने वताया कि उक्त गाँव मे अब्दुल अजीज नाम का एक किसान रहता है, जो उसका परिचित है तथा यारकद की ओर कई वार जा चुका है और उस ओर की शिकार को काफी जानता है। यह सुनकर मेरे शिकारी मोख्तालोन ने मुझसे धीरे से कहा, "हुजूर, सरकारी पडाव पर ठहरना ठीक होगा। रमजानखाँ के सव दोस्त ठग है। सवेरे आपसे वख्शीश माँगी जायगी। न देगे तो वेकार कहा-सुनी होगी।" रमजानखाँ ताड गया। वोला, "नही, ऐसा नही होगा। वह तो महज़ पडाव के जो दाम सरकार को देते हैं, लेगा। वाकी सामान, जो उससे खरीदा जायगा, उसके दाम लेगा। मै उसे अच्छी तरह से जानता हूँ। भला आदमी है।" अन्त मे यही ठहरा कि अब्दुल अजीज के वगीचे मे, जो रनवीरपुर ग्राम से लगा हुआ है और लेह-मार्सलिग (हिमिस) के मार्ग पर है, ठहरा जाय और वही हम लोग ठहरे। लेह के परे रेस सिस्टम नही है। यहाँ से जहाँतक के टट्टू किराये पर किये जायँ, वहीतक जाते है तथा किराया भी निश्चित नही है। हमारे टट्टू साकटी, अर्थात् अगले पडाव तक के लिए किये गये थे।

अब्दुल अजीज सफेद सलवार, कुर्ता तथा कुल्ला पर सफेद साफा वाँधे सफेद दाढी युक्त वड़ा भला मालूम दिया। उसकी दोनो स्त्रियो तथा उसने तुरन्त हमारे ठहरने की जगह साफ की। वगीचे मे विलो के काफी पेड़ थे तथा नहर का पानी वह रहा था। यही कारण था कि अच्छी ठडक थी। जव डेरे लग चुके तो हमने अब्दुल अजीज से वातचीत प्रारम्भ की। उधर हमारा शिकारी रमजानखाँ उन लोगो से हिलमिल गया था। वह कई वार इधर आ चुका था और इन लोगो से उसकी घनिष्ठता थी। अब्दुल अजीज ने वताया कि किस प्रकार वह यारकन्द से इधर आया और परिश्रम करके वगीचा खरीदा और शादियाँ की। वह वार-वार इस वात पर खेद प्रकट करता था कि उसके कोई

सन्तान नही थी । सन्तान के लिए ही तो उसने तीन वर्प पूर्व एक पत्नी ग्रौर की थी ।

खेती के अतिरिक्त उसका निर्वाह यात्रियो को ठहराने तथा सत्कार पर भी निर्भर था । एक घर यात्रियो के लिए भी उसने बना रक्खा था । चीन तथा मध्य एशिया के व्यापार के दिनो की प्रशसा करता था तथा ग्रव बन्द हो जाने से उसकी ग्राय यात्रियो से लगभग नही के बराबर हो गई थी । उसके कहने से यह मालूम होता था कि यदि यही हाल रहा तो उसे ग्रपनी भूमि तथा मकान बेचकर पजाव या काश्मीर जाना होगा । हम भी उसकी दुख-गाथा सुनकर सहानुभूति प्रदर्शित करते गये । जब हमने इच्छा प्रकट की कि हमे यहाँ की स्त्रियो, वच्चो, लामा तथा चोमो (साधु-स्त्रियाँ) ग्रादि के फोटो लेने है तो उसने सन्ध्या को सब ठीक कर देने का वचन दिया । हमने मोख्तालोन से कहा कि ग्रब्दुल ग्रजीज भला ग्रादमी मालूम देता है तो वह हँसकर चुप हो गया ।

लगभग छ बजे हमारी इच्छानुसार उसने फोटो के लिए सब प्रवन्ध ठीक कर दिया । जिन्हे हम चाहते थे, वे सव लोग उपस्थित थे । जब मैं फोटो ले रहा था तो मोख्तालोन ने चुपके-से पास ग्राकर कहा कि जिस स्त्री का मैं फोटो ले रहा हूँ, वह ग्रब्दुल ग्रजीज की नई बीवी है । जब फोटो लिये जा चुके तो मैंने उन लोगो को कुछ दाम देने चाहे । इसपर ग्रब्दुल-ग्रजीज ने टाल दिया । उसने कहा, "ऐसे कामो के लिए लेह ग्रौर उससे ग्रागे यानी श्रीनगर की तरफ के लोग दाम लिया करते हैं । `यहाँ कौन ग्राता है ? यह तो मामूली वात है । ग्रगर ग्राप कुछ देना ही चाहते है तो वापसी मे दीजिए ।"

सन्ध्या होते-होते जोर से हवा चलने लगी और रात-भर खूब चलती रही । ठण्ड विशेप न थी । चीनी-तुर्कस्तान की शिकार की वाते होती रही । अब्दुल अजीज यारकन्द को सबसे वडा शहर मानता है । वह समझता है कि ससार मे उसके समान कोई नगर नही है । वह यात्रियो के साथ लगभग तीस वार यारकन्द की यात्रा कर चुका है ।

मगलवार, १८ जुलाई

ग्राज बडे सवेरे उठ बैठे ग्रौर ग्रब्दुल ग्रजीज को ठहरने के तथा दूध,

लकडी आदि वस्तुओ के दाम चुकाकर छ. बजे चल दिये। दाम आदि चुकाने में और स्थानो की तरह यहाँ कोई झगडा नही हुआ। यह देख-कर हमे अब्दुल अजीज बहुत पसन्द आया। विचारा हम लोगो के लिए काफी दौड़ा था। इसलिए हमने उसे कुछ देना चाहा, परन्तु उसने इन्कार कर दिया। बोला, "हुजूर, अभी कुछ नही लूँगा। लौटते मे जो जी मे आये दे दीजियेगा।" हम भी क्या कह सकते थे?

जब हम लगभग सात मील निकल गये होगे तो हमारे शिकारियो ने टट्टूवालो से सलाह कर हमसे कहा कि बाँई ओर के नाले मे शापू मिला करते है। सामान के टट्टुओ को आगे जाने दिया जाय और हम कुछ दूर जाकर शापू देखे। हमने उक्त प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

नाले मे सवारी के छहो टट्टू खडे करके हम लोग बाँई ओर की उपत्यका मे बढे। यह लगभग आध मील चौडी और तीन मील लम्बी है। आध मील चलने के पश्चात् एक टीले की ओर से उत्तर की ओर उपत्यका मे दूरबीन से देखा तो आठ शापू लगभग एक मील पर दिखाई दिये। वे चरते हुए ऊपर की ओर जा रहे थे। हम भी तेजी से नाले के भीतर-भीतर उधर बढे, परन्तु ज्यो-ज्यो ऊपर की ओर जा रहे थे त्यो-त्यो नाला छोटा और उथला होता जा रहा था। जब हम उनसे लगभग आधा मील रहे होगे, तब नाला दो फुट से अधिक गहरा नही रहा था। उधर शापू पहाड़ के निकट पहुँच चुके थे। दूरबीन से देखने से मालूम हुआ कि सबसे बडा शापू लगभग तीस इन्च का होगा। जब हमने यह देख लिया कि सीधे पहुँचना असम्भव है तो यह सलाह हुई कि पीछे हटा जाय और बाँई ओर की पहाडी पर चढकर उन शापुओ का रास्ता रोका जाय। जैसे-तैसे हांफते हुए जब उक्त पहाडी पर चढे और दूरबीन से देखा तो हमें शापू भागते हुए दिखाई दिये। मालूम होता है, उन्हे हमारी गन्ध पड गई। हमें बाँई ओर की पहाडी न चढकर पूर्व की ओर की, अर्थात् दाहिनी पहाडी चढना था। यदि वायु का रुख देख लेते तो यह भूल न होती। पहाड मे शिकारी को बार-बार वायु का रुख देखना आवश्यक है। कारण, उपत्यकाओ से बहुधा वायु उलट-पुलट बहती है। यहाँ के सब जानवरो की नाक बहुत तेज है। शापू पाने की आशा छोड हम

टट्टुओ की ओर लौट पडे, जो हमसे दो मील दूर होगे। मोख्तालोन यह कहकर आगे बढ गया कि वह हमारे लिए टट्टू लायगा। टट्टू नाले मे खडे थे। अत हमको नही दीखते थे। जब हम उनसे चार-पॉच फर्लांग रहे होगे तो हमने एकाएक टट्टू इधर-उधर भागते देखे तथा एक भोटे का पीछा करते हुए मोख्तालोन दिखाई दिया। हमारी समझ मे नही आया कि यह झगडा क्यो हुआ? मोख्तालोन टट्टू हॉकने की पतली लकडी का प्रहार करता जाता था और भोटा भागता जा रहा था। दोनो मोड पर रनवीरपुर के मार्ग पर ओझल हो गये। जब हम टटटुओ के पास पहुँचे तो हमने अपने खाने की खुरजी नीचे पडी देखी। थर्मस फूटा पडा था और तरकारी फैल जाने से खुरजी खराब हो गई थी। अब पूछने की आवश्यकता न थी कि मोख्तालोन उस भोटा का पीछा क्यो कर रहा था। हम दोनो के पास केवल दो थर्मस थे, जिनमे हम तरकारी गर्म रखने को भर लेते थे। दाऊसाहब का तो गूँड के पास टूट चुका था और रहा-सहा मेरा भी टूट गया। अभी शिकार की जगह पहुँचे भी न थे। वहाँ की ऊँचाई और ठण्ड का विचार करके बडा खेद होता था कि रोटी के साथ तरकारी भी बर्फ के समान ठण्डी मिलेगी। चाय तो सिवाय डेरे के रास्ते मे असम्भव हो गई।

बडी देर के बाद लगभग बारह बजे मोख्तालोन तथा वह भोटा हाँफते हुए लौटे। मोख्तालोन ने लौटते ही दूसरे दोनो भोटो के हटर जमाए और बोला, "तुम सब सूअर हो। हम तुमको इसीलिए छोड गये थे कि कोई नुकसान न हो। अब थर्मस कहाँ से आयगा और अपने साहब को गरम खाना हम कहाँ से लाकर देगे?" इस समय मैं भी आपा खो बैठा था। ज्यो-ज्यो शिकार मे बर्फ के समान ठण्डे खाने का विचार आता था, रोना-सा आ जाता था। अभीतक हम इस थर्मस मे मास या तरकारी भर लेते थे, जो गरम रहती थी। केवल रोटिया ही ठण्डी मिलती थी। इन ठण्डी रोटियो को चबाने मे काफी कष्ट होता था। यह देखकर रमजानखाँ बोला, "मैने साहब के थर्मस के खोखे मे बजाय काच के, जो फूट गया है, नमदा लगा दिया। तुम भी बडे साहब के थर्मस के साथ ऐसा ही करो।" मैने अपने शिकारी मोख्तालोन को ऐसा करने से रोक

दिया। काश्मीर का नया नमदा मिलता तो बात दूसरी थी, परन्तु इस गन्दे भोटे का दिया हुआ नमदा और वह भी काम मे लाया हुआ, उसे तो छूना भी कठिन था। उसमे रक्खा हुआ भोजन कैसे खाया जा सकता था। जब कुछ शान्त हुए और चलने की सोचने लगे तो रमजानखाँ बोला, "हुजूर, खाने का समय हो रहा है। दूसरे थर्मस फूटने से शोरबा गिर चुका है और काँच के टुकडे भी मिल गये है। इसलिए यहीपर बैठकर खाना खा लिया जाय तो ठीक हो।" हम सहमत हो गये। जब पेट मे अन्न पहुँचा तो क्रोध भी शान्त हुआ और बाते होने लगी। रमजानखाँ उधर की बोली मे भोटो से बात करता जा रहा था। साथ ही खाना भी खाता जाता था। जब हम चलने को उद्यत हुए तो रमजानखाँ बोला, "हुजूर, शापू को अपनी हवा नही पडी थी। इस नाले मे टट्टू आपस मे लड गये और लाते मारने लगे और नाले के बाहर भाग निकले। उस समय भोटे पानी के किनारे बैठे सत्तू खा रहे थे। इसी लतियाव मे थर्मस फूट गया और इन्हे भी टट्टुओ के पकडने के लिए बाहर निकलना पडा। उस समय हम लोग बाँई ओर को पहाडी पर चढ रहे थे। शापुओ ने टट्टुओ को दौडते तथा उनके पीछे इन भोटो को देख लिया और भागकर पहाड पर चढ गये।" यह सब रमजानखाँ को उन भोटो से मालूम हुआ था। यह सुनकर और भी दुख हुआ कि थर्मस तो फूटा ही, परन्तु उन्होने शिकार भी बिगाड दी।

जोज़ीला पार करते ही तीन मील की दूरी पर मनुष्य को देख लेना मामूली बात है। थोड ही आगे जाने के पश्चात् सिन्धु का किनारा तथा मार्स-लिग या हिमिस तक मार्ग अच्छा है और एक मील आगे चलकर सिन्धु को पुल द्वारा पार करके मार्सलिग पहुँचते हैं। वहाँ का वर्णन आगे दिया जायगा।

अब हम बराबर ऊपर चढ़ते जा रहे थे और उपत्यका सँकरी होती जाती थी। दो मील बढने पर हमें कुछ चकोर दिखाई दीं। मैंने दो फ़ैर किये, परन्तु दोनो बच गईं। जब साकटी लगभग आधा मील होगा तब दाहिनी ओर की एक छोटी-सी पहाडी पर एक किला दिखाई दिया। यह लद्दाख के राजाओ का बनवाया हुआ था और उत्तर की ओर से

चौथा था। यह सिक्याग के डाकुओ को रोकने के लिए था। वे लोग चॉगला के रास्ते यही होकर लद्दाख जाते थे। किले के नीचे कई बकरियाँ चर रही थी, जिनका तथा किले का फोटो लिया। अब हम काफी ऊँचाई पर आ चुके थे। कई जगह हमे वर्फ के कवूतर मिले।

लगभग तीन बजे हम साकटी पहुँचे। टट्टूवाले तुरन्त वापस जाना चाह रहे थे। मोख्तालोन कहता था कि थर्मस के दाम काटे जाय, परन्तु मैंने गरीवो का पैसा काटना अन्याय समझा। काफी झगडने के पश्चात् टट्टू-वालो को दाम चुका कर विदा किया।

चॉगला के पार ऊँचाई अधिक होने के कारण वताया गया कि आगे लकडी बिलकुल नही मिलेगी। हमे पडावो पर पडे हुए गोबर अथवा वुर्त्मी या वुर्तजी नाम के पौधो की जड से काम निकालना होगा। मैंने शिकारियो को समझा दिया कि गरिष्ट भोजन नही करेगे, उससे ऊँची जगह सिर मे दर्द होता है। साथ ही यह भी कह दिया कि कल चलते समय जेव मे सोठ के टुकडे तथा प्याज रख दिए जाएँ, ताकि ऊपर पहुँचते समय सोठ मुँह मे डालकर रस चूसा जा सके और प्याज सूघा जाय। यह हमे लेह मे मि० एसवो ने वताया था। वे कहते थे कि ऐसा करने से बहुत ऊँचाई पर सिर नही चटकता।

जहाँ हम ठहरे थे, वहाँ से दृश्य वहुत अच्छा था। आज ऊँचाई के कारण दिन डूवते ही काफी ठण्ड हो गई।

: ११ :
कसाले का रास्ता

वुधवार, १९ जुलाई

आज सवेरे छ वजे तापमान ४८ डिगरी था। सवेरे सात बजे साकटी से प्रस्थान किया। आज पडाव से ही चढाई थी तथा और दिनो की अपेक्षा ऊँचाई के कारण ठड भी अधिक थी। गॉव से एक मील निकलने के वाद जगह-जगह चकोर दिखाई देने लगे। ज्यो-ज्यो वढते जाते थे, सेहा तग होता जा रहा था और पहाड ठॉठे होते जा रहे थे।

दाऊसाहब ने कई बार प्रयत्न किया कि चकोर मार ले, परन्तु न मार सके। एक तो छिपकर जाने के लिए न कोई पेड़ था और न बड़े पत्थर, दूसरे पहाड इतने ठाँठे थे कि चढना भी कठिन था। हमारी चढाई भी धीरे-धीरे कठिन होती जा रही थी। अत हमारी गति बहुत धीमी थी। रास्ते मे भोटो से शिकार की पूछ-ताछ होती जा रही थी। यही से पूर्व की ओर दाऊसाहब का शापू का ब्लाक था। सात मील पहुँचते हमे बारह बज गये, अर्थात् हम एक घण्टे मे एक मील चल सके। बारह बजे हम घोडो को विश्राम देने ठहर गये और भोजन किया। थर्मस फूट जाने के कारण सब चीजे बर्फ के समान ठण्डी थी। यह हमारी भूल थी कि चाँगला पर पहुँचने के थोडी देर पूर्व भोजन किया। हमे सवेरे ही साकटी मे खा लेना था। ज्यो-ज्यो चागला पास आता जा रहा था त्यो-त्यो घोडो का दम फूलता जा रहा था। जब चाँगला पाँच सो फुट रह गया तो शिकारियो ने हमे घोडो से उतरकर पैदल चलने के लिए कहा। इस समय हम अठारह हजार फुट पर होगे। यहाँ के रहनेवाले भोटे भी घोडे की पूँछ पकडे हुए चल रहे थे। घोडे चालीस-पचास गज चलकर दम लेने खड़े हो जाते थे और बुरी तरह हाँफते थे। जब घोडे खडे होते तब भोटे झुककर दोनो घुटनो पर हाथ टिकाकर दम लेते थे। हमने शिकारियो से इसका कारण पूछा तो मालूम हुआ कि इस प्रकार फूला हुआ दम शीघ्र शान्त होता है तथा फेफडो और हृदय को आराम मिलता है। देखने के लिए हम भी घोडो से उतरे। मै तो केवल पचास-साठ गज चल पाया। इसमे भी मुझे प्रत्येक दस गज पर साँस ठीक करने के लिए पाँच-पाँच मिनट रुकना पडा। भोटो की नकल की, परन्तु कुछ आराम न मिला। देर होते देख मै पुन घोडे पर चढ गया, परन्तु दाऊसाहब लगभग डेढ सौ गज चले।

करीब तीन बजे हम ऊपर पहुचे। अन्य दर्रो की भाँति यहाँ भी पत्थरो का ढेर था और कई झाडियाँ थी। वहीं 'लो सलो हर गलो' के नारे भोटो ने लगाये। हम, सबको विश्राम देने के उद्देश्य से, घोडो से उतर पडे और पत्थरो पर बैठ गये। आज बादल बिल्कुल नही थे। बैठ-कर सिगरेट जलाने के पश्चात् दृश्य सराहने लगे। दो मिनट बाद ही

भोटो ने आकाश की ओर देखकर हाथ से चलने का सकेत किया। सामान-वाले तो चल भी पडे। इनका यह वर्ताव देखकर हमे आश्चर्य हुआ। हम तो यह जानते थे कि अभी अन्य दर्रों की भाँति भोटा लोग काफी देर विश्राम करेगे तथा हमको चलने का तकाजा करना पडेगा। कारण पूछने पर हमारे शिकारियो ने बताया कि यह जगह बहुत ऊँची है। यहाँ-पर एक प्रकार की घास होती है जो बादल न होने के दिन सिर-दर्द कर देती है। जब बादल होते हैं तो इस घास के फूल की बू नही फैलती, परन्तु खुले हुए मे फैलकर हानि पहुँचाती है। मै पुस्तको मे पढ चुका था कि इन लोगो का यह विश्वास कितना भ्रमात्मक है। बात वास्तव मे यह है कि जिस दिन बादल होते हैं उस दिन ठड के कारण वायु की गुरुता बढ जाती है। एक तो ऊँचाई के कारण हवा पतली और ऊपर से सूर्य की गर्मी हो तो हवा और भी पतली हो जाती है, जिससे फेफडो को और हृदय को अपने काम मे बहुत परिश्रम करना पडता है और सिर मे दर्द हो जाता है। मैंने उक्त बात बताई, पर वे कब मानने चले। मुझे भी कुछ-कुछ सुस्ती आनी प्रारम्भ हो गई थी और ऐसा मालूम होता था मानो उदासी छा गई हो। सिगरेट अच्छी नही लगी। अत फेंक दी और चलने को उद्यत हो गया।

अब उतार साधारण था। लगभग एक मील चलने के बाद मुझे बहुत जोर की प्यास लगी। मै दोनो ओर देखता जाता था कि कही पानी मिले तो पीऊँ, परन्तु यहाँ केवल बर्फ था। एक जगह पानी देखकर मैंने नौकर से पानी लाने को कहा तो शिकारी बोले, "पानी पीने से हानि होगी। यहाँ तो केवल चाय पीनी चाहिए। तीन मील के बाद पडाव आ जायगा तब चाय बनाकर पीना ठीक होगा।" ऊँचाई पर क्रोध बहुत आता है। मेरे जी मे तो उसी समय लड़ने की आ गई थी, परन्तु चुप रहा। एक मील और चला होऊँगा तबतक सिर मे दर्द प्रारम्भ हो गया। प्यास भी बहुत लग चुकी थी। अब मुझसे न रहा गया। मैंने कहा कि कुछ भी हो, मैं कुछ-न-कुछ अवश्य पीऊँगा। शिकारियो ने नीचे की ओर दो मील की दूरी पर एक छोटा-सा तालाब तथा एक घर बताते हुए कहा कि थोडा-सा साहस और कर जाइये तो वहाँ गोबर मिल जायगा, जिससे जल्दी चाय

मिल जायगी। परन्तु मै न माना। वे लोग कई साह्वो को देख चुके थे। अत जानते थे कि ऊँचाई का साधारण मनुष्य पर क्या प्रभाव पडता है। सामानवालो से आगे वढने को कहकर वे रुक गये। मै भी घोडे से उतर कर लेट गया। वे वोले कि अगर मै औधा सोऊँ तो अच्छा होगा। ऐसा करने पर मुझे थोडा आराम मिला। उन लोगो ने पहले से ही चाय तथा ऐस्प्रिन जेव मे रख छोडी थी। पास से वुर्त्सी खोदकर आग जलाई और चाय वनाई। चाय के साथ ऐस्प्रिन खाई। तव कही एक घण्टे मे कुछ तवियत ठीक हुई।

सामान के तम्बू लग चुके थे और आग का धुँआ हो रहा था। वह छोल-तक का तालाव अव सुन्दर दिखाई दे रहा था। किनारे पर याक (सुरा-गाय) चर रही थी। लगभग चार वजे हम भी तालाव के किनारे डेरो पर पहुँच गये। हमने सुरा गाये पहले-पहल देखी थी। फोटो लिये। जल का रग गहरा नीला दिखाई दे रहा था और चारो ओर की जल के सहारे की छोटी-छोटी बनस्पति के रग-बिरगे फूल ऐसे मालूम दे रहे थे, मानो अच्छा कालीन विछा हो। यह स्थान लगभग सत्तरह हजार फुट ऊँचा होगा। चाय तैयार थी ही। पी और जो थोडा सिर-दर्द रह गया था, मिटाने के लिए एक गोली ऐस्प्रिन की फिर खाई।

हमे देखकर एक जोडा कौओ का पास आकर वैठ गया। वे चील से भी वडे थे तथा एकदम काले थे। पूछने पर मालूम हुआ कि ये तिव्वती कौए हैं। हमने भी इनके डील-डौल को देखकर अनुमान लगाया कि इन्ही-मे कागभुशुण्डजी हुए होगे। दाऊसाहव ने देखने के लिए एक मार डाला। दूसरे को वही मँडराता देखकर मुझे दया आई और उसे भी मार डाला। दोनो के चमडे निकालकर रख लिये।

नौकर जव भोजन लाये तो खाते ही न वना। उसने वताया कि ऊँचाई पर न भूख लगती है और न नीद आती है। अत थोडा-वहुत निगलकर सो गये। रातभर करवटे वदलते रहे। जव कभी थोडी झपकी आ जाती थी।

गुरुवार, २० जुलाई

यह पहले ही वताया जा चुका है कि प्रदेश उत्तर मे होने के कारण

यहाँ चार वजे के लगभग उपाकाल हो जाता है। हमें नीद नही आई थी और सिर मे दर्द था। अत तीन वजे ही हम लोग उठ वैठे। अभिवादन के पश्चात् दाऊसाहव से कुशल पूछी तो वे वोले, "कल चाँगला मे ही सिर-दर्द हे और अभीतक वैसा ही है।" वे केवल अकड मे रहे और ऐस्प्रिन नही खाई थी। सवेरे उन्हे भी ऐस्प्रिन दी और हमने भी खाई। साथ के भोटे लोग वुर्त्सी खोदकर ला रहे थे और आग जलाये, उसे घेरे कुछ वैठे थे और लडके सो रहे थे। आग पर एक पीतल का वर्नन रक्खा था, जिसमे चाय और मक्खन उवल रहा था। जव जिसकी इच्छा होती थी, अपने-अपने लकडी के कटोरे मे चाय लेते जाते थे और पी रहे थे। जितने हाथ-पैर सिकोडे मो रहे थे, सव औंवे पडे थे और उनकी पीठ पर केवल एक भेड का चमडा था। कहते है कि ऐसा करने से ठण्ड कम लगती है। यह तो मैंने करके नही देखा, परन्तु औंघे सोने का फल यह देखा कि सव भोटो की आँखे दोपहर तक लाल रहती हैं।

तालाव कुछ वडा नही हे, परन्तु जल वहुत साफ है। इसके किनारे घूमकर मछली देखते रहे, परन्तु कही भी नजर नही आई। रात को तीन-चार जोडे चकवो के अवश्य आ गये थे। जल से कही-कहीपर जहाँ सम-तल भूमि थी, सौ गज तक हरी घास थी और उसमें नाना प्रकार के रग-विरगे फूल थे। फूलो के मारे हरी घास ढक गई थी। हमने विचार किया कि इन वनस्पति-हीन पहाडो मे चलता हुआ आदमी जव कभी ऐसी झीलो को देखता है तो सहसा उसके मुँह मे 'वाह-वाह' निकल पडती है।

रात को उन पहाडो पर थोडा-सा वर्फ पड गया था, जिससे वे अच्छे मालूम दे रहे थे। यह वताया जा चुका है कि इस ओर वाईस या तेईस हजार फुट के ऊपर ही वर्फ रहता है। नीची जगह का गल जाता है।

खाने और चाय पीने से जव सिर का दर्द वन्द हुआ तो लगभग सात वजे के चल पडे। हम वरावर उतरते जा रहे थे। अत दस मील चलकर जव दुरगू नामक ग्राम में पहुँचे तो हमारी तवियत विल्कुल ठीक हो गई। यहींपर खाना खाया।

प्रथम वार यहाँ पर चापा[1] का तम्बू देखा। ये लोग छाते के आकार

१ घर-रहित भेड-वकरीवाले जो ऊजड प्रदेश में घूमते रहते हैं।

का आठ-नौ फुट चौडा तम्बू रखते हैं। चारो ओर रस्सी पर पत्थर रख देते है, जिससे आँधी मे तम्बू उड न सके। ऊपर की ओर बीच मे एक छेद रखते हैं, जिसमे से धुँआ निकल जाता है। भेड-बकरे तो जगल मे थे, परन्तु स्त्री-बच्चे तथा भोटिया कुत्तो के दो-तीन पिल्ले घर पर ही थे। हमारे शिकारियो ने पिल्ले खरीदने चाहे, परन्तु उन्होने नही बेचे। इस प्रदेश मे जो पिल्ले चार या पाँच रुपये मे मिलते हैं, वही लेह मे दस या पन्द्रह रुपये को तथा भारत मे जाकर चालीस या पचास रुपये तक के हो जाते हैं। यह सब कुत्ते पर निर्भर है। इन लोगो के कुत्ते बडे और पहरा देने में बहुत अच्छे होते हैं, परन्तु भारत की गर्मी मे बचते बहुत कम हैं।

लगभग दो बजे हम टाँगसी पहुँचे और वही ठहर गये। आज सध्या से ही बादल घिर आये और रात को बारह बजे थोडा पानी बरसा तथा हवा बहुत जोर से चली, जिससे नीद लगभग दो बजे आई। वैसे और कोई कष्ट नही हुआ।

: १२ :

लद्दाख का आखिरी गाँव

शुक्रवार, २१ जुलाई

आज सवेरे छ बजे तापमान ५८ डिगरी था। चारो ओर की पहाडो की चोटियो पर रात को थोडा बर्फ पडा गया था। टाँगसी इधर बडे गाँवो मे माना जाता है। वैसे यहाँ सौ घर से अधिक नही होगे। यही से एक मार्ग चुशल तथा हनले की ओर जाता है, परन्तु हमे तो फोबरग और चाँग चेनमो, जो सिक्याँग के मार्ग पर हैं, जाना था।

आज कुहरा दबा था और बादल भी थे। अत जबतक ये थोडे साफ न होने पाये, चलने की हिम्मत नही हुई। लगभग सात बजे चले। दस बजे के करीब मुगलिक नाम का छोटा-सा गाँव मिला। हमारे कुलियो ने गाँव देखकर गाना प्रारम्भ किया। इसे सुनकर गाँव की छः-सात स्त्रियाँ चाय के बर्तन तथा सत्तू लेकर आ गई। इस आतिथ्य को

देखकर हमे आश्चर्य हुआ। पूछने पर मालूम हुआ कि इस प्रदेश में वस्ती कम होने से यात्री कम आते हैं। अतः इस ओर अतिथि-सत्कार बहुत होता है। यह बात ठीक भी थी। बडे शहरो मे, खासकर बम्बई मे, एक ही मकान मे रहनेवाले को लोग प्रायः महीनो तक नही जानते है, बुलाने और सत्कार करने की तो बात ही दूर है। इधर केवल गाना सुनकर स्त्रियाँ खातिर करने दौडी आई। हमने यहा ठहरकर भोजन किया और कुछ फोटो लिये। भोजन के पश्चात् चल दिये और लगभग बारह बजे चकर तालाव पहुँचे। आज चढाई-उतराई न थी। रास्ता साफ था। अत शीघ्र पहुँच गये। चकर तालाव एक झील का नाम है, जो छोलतक की झील से कही बडी है। लगभग एक मील लम्बी और दो फर्लांग चौडी होगी। इसके किनारे कही-कही ऊँचे टीले भी हैं, जिनपर चढकर हमने पानी में मछली देखनी चाही, परन्तु एक भी न देखने पाये। पानी इतना निर्मल था कि आठ-दस फुट गहरे तक बिल्कुल साफ दिखाई देता था। इस झील मे दस-बीस काले रग की बत्तखे भी थीं। हमारे पास डोर और बसी थी। अत आटा लगाकर डाले रहे, परन्तु मछली का पता तक नही लगा। इस झील के पास कोई गाँव नही है। केवल पडाव है, जहाँपर यात्री ठहरा करते हैं। इस जगह हवा भी सध्या मे काफी चली और ठण्ड भी अच्छी थी, परन्तु नीद खूब आई।

शनिवार, २२ जुलाई

सवेरे उठकर देखा तो आस-पास बर्फ दिखाई दी। रात को काफी बादल थे। अतः बर्फ गिरी होगी। इस समय भी हवा बडे वेग से चल रही थी और ठण्ड भी काफी थी। जबसे हमने चागला पार किया, हमारे तम्बू के पीछे के भाग मे नौकर छः इच चौड़ा तथा एक फुट गहरा गड्ढा बना देते थे, ताकि शौच के लिए बाहर न जाना पड़े। शौच के पश्चात् गड्ढे मे मिट्टी डाल देने पर दुर्गन्ध नही आती थी और वैसे भी हमें सवेरे चल देना पडता था। सन्ध्या को तो तम्बू मे शौच करने की आवश्यकता न होती थी। कारण, उस समय इतनी ठण्ड नही होती थी, परन्तु सवेरे तो वही तम्बू मे जाना पडता था। चाय पीकर तथा गरम कपडे पहनकर चलते समय बाहर निकलते थे।

श्रीनगरसे चलते-चलते अब हमारी टॉगे, जो टट्टुओ पर बैठकर अकड गई थी, बिलकुल ठीक हो गई थी। हाथ-पॉव तथा मुँह और खासकर नाक का चमडा, जो सूर्य-किरणो के मारे दो-दो बार निकल गया था, अब ठीक हो गया था, परन्तु चॉगला पार करने के पश्चात् ओठ फटने लगे थे, यहाँतक कि हँसते समय खून आने लगा था। वैसे ऊँचाई के कारण मन की दशा कुछ ऐसी हो जाती है कि किसीसे बात करने की इच्छा ही नही होती। फिर हँसने की नौबत तो बहुत ही कम आती है। हम ही क्या, यहाँ के रहनेवाले भी आपस मे बहुत कम बाते करते हैं। खासकर ऊँची जगह पर तो सब इसी ताक मे रहते हैं कि कोई बोले और उससे लडा जाय। मै चिडचिडे स्वभाव का नही हूँ, परन्तु मुझे भी कई बार ऐसा हुआ कि लड पडूँ। जिसे देखो, सन्नाटे मे बैठा पाओगे। मुझे तो ऐसा लगा कि भारतवर्प से ऋपि लोग यही देखकर तपस्या करने ऊची जगह जाते थे।

हम लोग सात बजे के पश्चात् चकर तालाब से चले और छ मील चलने पर पगुङ्गत्सो नाम की झील के किनारे पहुचे। यह झील तिब्बत मे सबसे बडी है। जहाँ हम खडे थे, वहाँ से हमे लगभग चालीस मील लम्बी और दस मील चौडी दीख रही थी। कहते हैं, १६० मील लम्बी है। चौडाई कही-कही एक फर्लांग ही रह गई है। हम लोग उत्तर-पूर्व की दिशा मे चल रहे थे। यही कारण था कि प्रतिदिन सवेरे चलते समय सूर्यनारायण सामने पडते थे। पगुङ्ग तो झील का नाम है और 'त्सो' तिब्बती मे शायद पानी को कहते हैं। सम्भव है, खारे पानी को कहते हो। झील में हम बाँई ओर उत्तर को मुड गये। दाहिनी ओर मार्ग मन, पदम गॉवो मे होता हुआ चुशल जाता है। यहाँ से दो मील चलने पर लुकिग नाम का ग्राम मिला। इसीके पास नाले मे हमने भोजन किया। यहाँपर वगदर[1] बहुत थे, जिन्होने काफी हैरान किया। अब हमको एकदम चढाई मिली और छ मील के पश्चात् फोत्ररग पहुँचे।

---

१. एक प्रकार के मच्छर जो काटते तो नहीं, परन्तु आस-पास उड़कर तग करते हैं।

इस समय एक बजा था । यही हमारा अन्तिम ग्राम था और यहाँ से हमे चॉग चेन मो ब्लाक मे जाना था । जितने शिकारी इस ब्लाक मे जाते हैं, उन्हे यहाँ आना अनिवार्य है । कारण, भारतवर्ष से आनेवालो को और मार्ग ही नही है । गॉव के पुरुष तो सब अपनी-अपनी भेड-बकरी तथा याक लेकर पहाडो पर चराने निकल गये थे, परन्तु स्त्रियॉ और बच्चे वही थे । हमने एक स्त्री को बाहर बैठे बुनते देखा । शिकारियो ने बताया कि यह नम्बू कत्तख बुन रही है । नम्बू कत्तख बकरी के पश्मीने का बनता है, जो बहुत गरम होता है । इन लोगो के पास करघे न होने के कारण इसकी चौडाई आठ इच से अधिक नही होती । एक कोट बनाने के लिए एक कत्तख काफी होता है, जो यहॉ बीस रुपये मे मिलता है । हमने खरीदना चाहा, परन्तु तैयार न था । दूसरे, लेह के और दूसरे व्यापारी पहले से रुपये दे रखते हैं । इससे इन लोगो से मिलना कठिन है । एक तो कत्तख बनता ही कम है । श्रीनगर मे तो मिलता ही नही, परन्तु लेह मे भी कम मिलेगा । वह भी लगभग सौ रुपये देने पर । जितने मालदार भोटा हैं, कत्तख का लबादा पहनते है ।

गॉव मे चक्कर लगाकर डेरे पर आए तो हमने लडको को पानी मे हाथो से कुछ टटोलते देखा । हमारा डेरा गॉव से पूर्व मे लगभग एक फर्लांग की दूरी पर दो नालो के सगम पर था । हमे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि ऐसे ठण्डे पानी मे लडके क्यो घुसे हैं । वैसे भोटा ठण्डे देश का होने से पानी से बहुत घृणा करता है । हाथ-मुँह कभी नही धोता और सम्भव है कि वर्ष मे एकाध बार नहाता हो । प्राय यहॉ की स्त्रियो के मुँह काजल के मारे काले दीखेंगे । हमारे शिकारी किनारे खडे लडको को उत्साहित कर रहे थे कि पकडो, इनाम मिलेगा । पकानेवाले नौकर गफ्फारा ने बताया कि इस नाले मे स्नोत्रोट[1] है । जब कभी शिकारी यहाँ आते हैं तो लडके स्नोत्रोट पकडकर लाने मे इनाम पाते हैं । यह मछली बडी स्वादिष्ट मानी जाती है ।

छ बजे के लगभग चाय के साथ केवल नमक और मिर्च का पानी

१. बर्फ की त्रोट मछली ।

लगाकर घी मे तली हुई स्नोत्रोट मछली आई। चाँगला पार करने के पश्चात् हमे मीठी वस्तु के अतिरिक्त किसीमे भी स्वाद नही आता था। केवल भूख का भ्रम दूर करने के लिए हम दो-दो रोटियाँ खा लेते थे। स्नोत्रोट वहुत ही स्वादिष्ट लगी। इस ओर जानेवाले शिकारियो को चाहिए कि मीठी चीजे साथ मे अधिक ले जायँ, जैसे टॉफी, कोको, मुरब्बे, मिठाई तथा चाकलेट आदि। हमारे पास दुर्भाग्यवश चाय के लिए शक्कर के अतिरिक्त अन्य कोई मीठी वस्तु न थी। इस गलती पर हम अपने आपको वहुत कोसते थे, परन्तु हमने न कही सुना था और न पढा था कि ऐसी जगह मीठी वस्तु के अतिरिक्त किसीमे स्वाद ही नही आता।

सन्ध्या समय लोग लौटे। उनसे बातचीत की तो मालूम हुआ कि वे कल नही जा सकेगे। उन्हे वाहर से घोडे लाने होगे और खाने का प्रवन्ध करना होगा। अब हमे जन-शून्य प्रदेश मे जाना था। फोबरग लद्दाख का आखिरी गाँव है। यहाँ से सात पडाव के पश्चात् सिक्याग (चीनी तुर्कस्तान) की सीमा मिलती है और उसके चार दिन पश्चात् उधर गाँव मिलता है।

और गाँवो की अपेक्षा यह बहुत ऊँचाई पर है। आज हवा भी वहुत तेज थी। अत ठण्ड काफी थी। हम लोग भी दिन डूबते ही तम्बू में घुस गये। आज तम्बू के चारो ओर बडे-बडे पत्थरो से तम्बू के छोर को दवा दिया गया था, ताकि हवा भी न घुसे और तम्बू भी गिर न सके।

रविवार, २३ जुलाई

रात में काफी वारिश हुई थी। सवेरे उठकर देखा तो चारो ओर पहाडो पर वर्फ थी। लगभग दस वजे वहुत-से गाँववाले हमारे पास आये। यहाँ के प्राय सभी वयस्क पुरुष काफी अच्छी हिन्दुस्तानी वोल लेते हैं। कारण पूछने पर मालूम हुआ कि इन्हे प्रत्येक वर्ष गर्मी के दिनो में दो वार शिकारियो के साथ जाना पडता है। जो केवल तिव्वती हिरन मारना चाहते है, वे तो एक सप्ताह या दस दिन में लौट आते हैं, परन्तु अमन की तथा अन्य जानवरो की शिकार के इच्छुक तीन सप्ताह तक नही लौटते। इतने दिनो साहव, उनके नौकरो तथा शिकारियो मे हिन्दुस्तानी में वाते होती रहती हैं। यही कारण है कि अन्य ग्रामो की

अपेक्षा यहाँवाले अधिक-से-अधिक दो या तीन सप्ताह तक का सामान ले जाते हैं। फोबरंगवाले अच्छी हिन्दुस्तानी बोलते हैं। इनमे भी दो को हमने बहुत साफ हिन्दी बोलते सुना। पूछने पर मालूम हुआ कि यही दो मुखिया हैं। एक को मैंने नोट-बुक मे कुछ लिखते देखकर कौतूहल-वश उसे पास बुलाया और उक्त कापी देखनी चाही। देखा तो उसमे लगभग शुद्ध देवनागरी लिपि थी। केवल दो-एक अक्षरो का अन्तर था। वह भी बहुत नही। उसकी भाषा तो नही समझ सकता था, परन्तु मैंने सब बडी आसानी से पढ लिया। मैंने अपनी डायरी उसे दी। उसे भी मेरी देवनागरी लिपि देखकर आश्चर्य हुआ। वह तो अँग्रेजो की रोमन लिपि या उर्दू की खरोष्ठी ही देखता आया था। उसने भी थोडी कठिनाई से मेरी डायरी पढ ली। हिन्दी की पुस्तक को तो सपाटे मे पढ गया। जहाँ-जहाँ क्लिष्ट सस्कृत के शब्द थे, उन्हे छोडकर शेष का आशय समझ गया। जब उसे मालूम हुआ कि हम शिकार के लिए आए हैं तो उसे बडा आश्चर्य हुआ। उसने अपनी बोली मे कुछ बाते की और हमसे बोला, "हमारे गाँव का बूढा कहता है कि कोई चालीस साल पहले एक अँग्रेज के साथ हिन्दुस्तानी बाबू आया था, जो पहाडो मे पैमाइश के लिए गये थे। साहब लोगो के साथ बैरा जरूर आये हैं, लेकिन काला साहब (उसका मतलब भारतीय शिकारी से था।) कभी शिकार को नही आया। क्या आप लोग अँग्रेजो की तरह सब तकलीफ उठा लोगे? और बन्दूक लगाना भी जानते हो?" इन सब बातो को सुनकर हमे कुछ तो क्रोध आया और कुछ लज्जित भी होना पडा कि इन लोगो के हिन्दुस्तानियो के प्रति कैसे विचार हैं? जब भारतीय शिकारियो के विषय मे बताया तो वह बोला, "काले साहब भले ही शिकारी होगे, परन्तु हमारे इधर तो काश्मीर के महाराज या उनके नौकर या सरदार कोई भी आज-तक नही आए। इससे हम तो यही समझते हैं कि काला साहब न मेहनत कर सकता है, और न बन्दूक लगाना ही जानता है।" उसका कहना भी ठीक था। जैसा सुना और देखा, विचारा कह रहा था।

जब मैंने उसका नाम पूछा तो उसने मुँह बिगाडकर ऐसी विचित्र ध्वनि मे नाम बताया कि कई बार पूछने पर भी समझ मे नही आया।

तब मैंने उसे कागज पर लिखने को कहा। उसने लिखा 'कौचोक छुछपैल'। ये अक्षर पूरी ध्वनि को नही बता सकते। हमारी वर्णमाला मे उक्त ध्वनि को व्यक्त करने के लिए कोई अक्षर ही नही हैं। मैं भी उसे शुद्ध रूप मे नही लिख सका। भविष्य मे 'कौचोक छुछपैल' को सुभीते के लिए केवल 'कौचोक' कहेगे।

भोजन के समय और तो सब चले गये, परन्तु कौचोक रह गया। आज दिन यही रहना था। अतः हमने अपने कपडे और साबुन उसे देकर कहा कि उन्हे धुलवा दे। ठण्ड के कारण स्नान तो नही किया, परन्तु कपडे बदल लिये। लेह से अभीतक स्नान नही किया था और न दाढी ही बनाई थी। अत विचार हुआ कि स्नान न सही, परन्तु दाढी बनाना चाहिए, लेकिन कौचोक ने रोक दिया। उसने बताया कि अँग्रेज तो श्रीनगर से ही दाढी बढाते आते हैं। फिर हमारी दाढी तो अभी छ' दिन की थी। ठण्ड से मुँह को बचाने के लिए दाढी आवश्यक है। हम भी मान गये। दोपहर को फिर स्नोत्रोट बनी। गफ्फारा बोला कि अब मास नही गलता। उसका कहना भी ठीक था। इतनी ऊँचाई पर, जहाँ थोडी-सी आँच मे पानी उबलने लगे, वहाँ मास कैसे गलता?

दोपहर मे हमारे नौकर बूटो पर पालिश तथा कपडो की धुलाई आदि मे लग रहे थे। हम भी अपनी डायरी लिखते रहे।

सध्या समय कौचोक फिर आया। मैंने उससे कहा कि और सब बातो का कष्ट तुम लोगो को अवश्य है, परन्तु खाने के लिए ईश्वर ने तुम्हे स्नोत्रोट-सरीखी जायकेदार मछली दी है जो हाथो से पकडी जा सकती है। यह सुनकर वह बोला कि भोटा किसी प्रकार की मछली नहीं खाते। मै समझा कि यह उनके धर्म मे निषिद्ध होगी तो वह बोला कि ऐसा नही है, परन्तु इसकी गन्ध और स्वाद उन्हे पसन्द नही। भला देखिये, इन गन्दे लोगो को भी मछली की बू आती है! कैसा विचित्र सयोग है!

सध्या समय खबर मिली कि टट्टू आ गये और गाँववाले नत्तू आदि बनाकर तैयार है। यदि कल खुला रहा तो चाँग चेन मो चले जायगे। कौचोक को नेम्री तथा चाँग चेन मो नदी के पास शिकार का
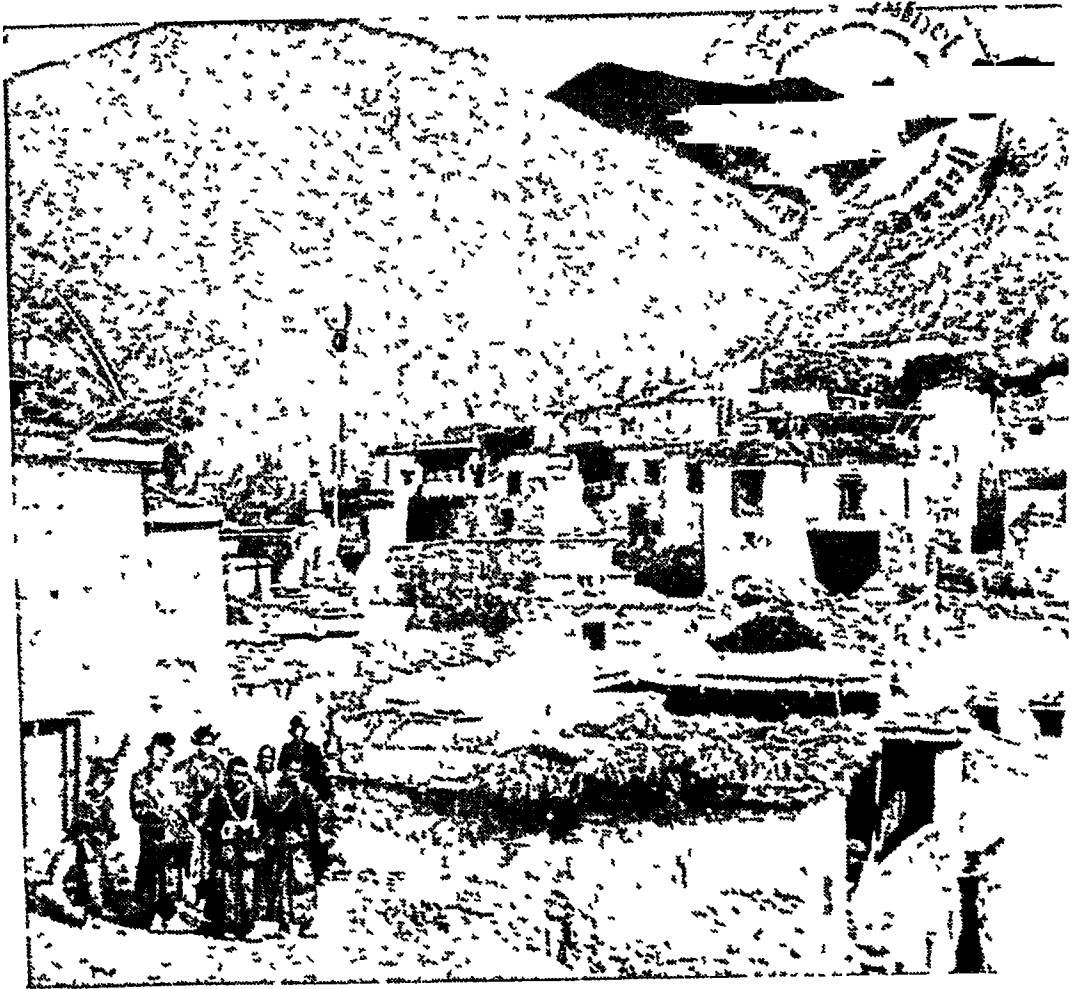
लद्दाख के सबसे प्राचीन लामायुरू बौद्ध विहार का भवन

मटायम से कोल्हाई (अमरनाथ) का दृश्य

कर्गिल से उत्तर में बल्ती लोगो का एक गांव
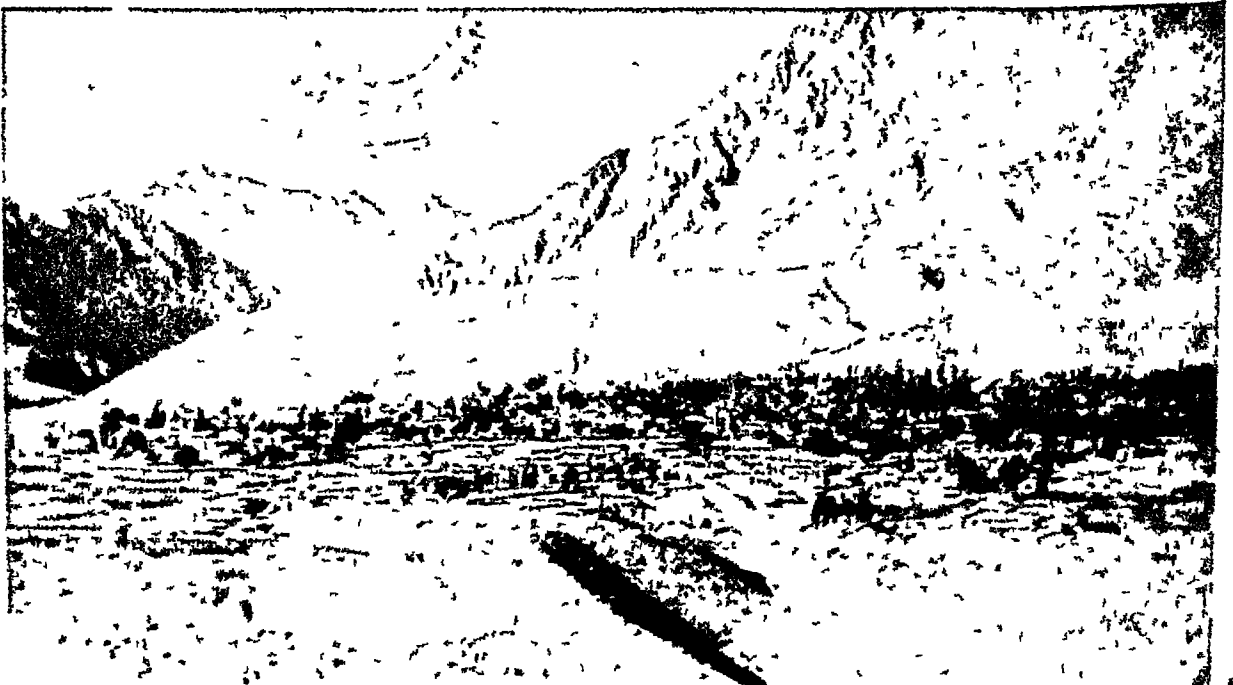
कर्गिल के पड़ाव में सामान लादते हुए

मुलबेख का गोम्पा

मुलबेख में गधो पर पोलो खेलनेवाले बालक-बालिकाए

लेह के पास सिधु घाटी का दृश्य
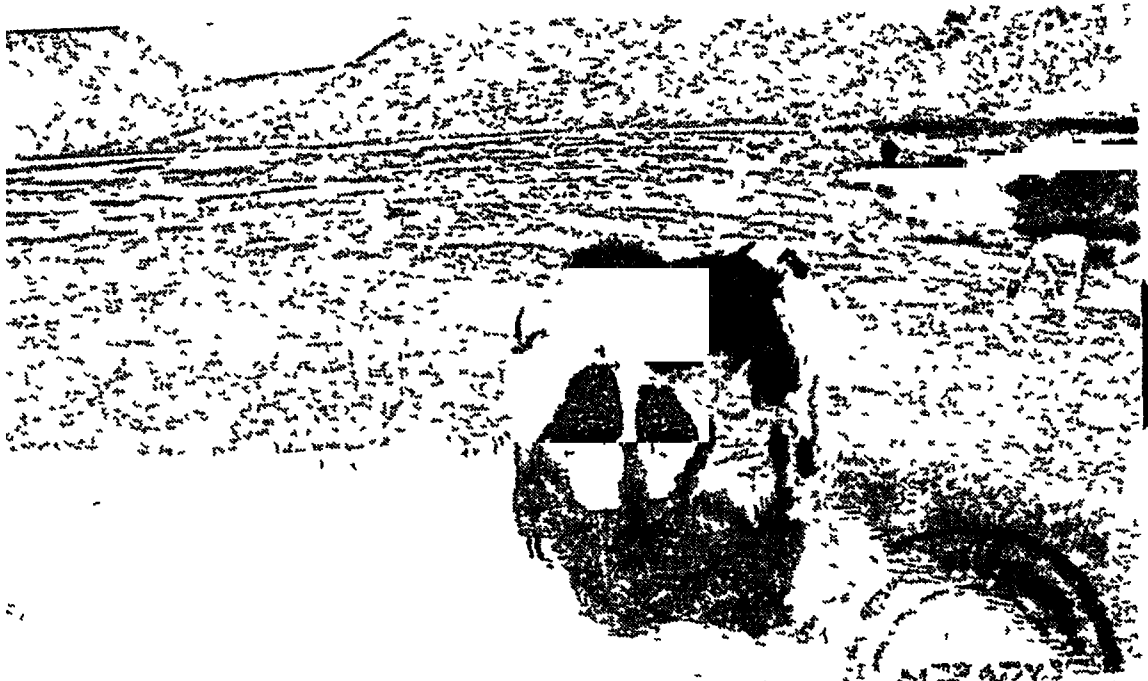
छोलतक पड़ाव के तालाब में चरती हुई याक (सुरागाय)

मन के पडाव में पङ्ग ग झील का दृश्य । दूर के पहाड तिब्बत के है
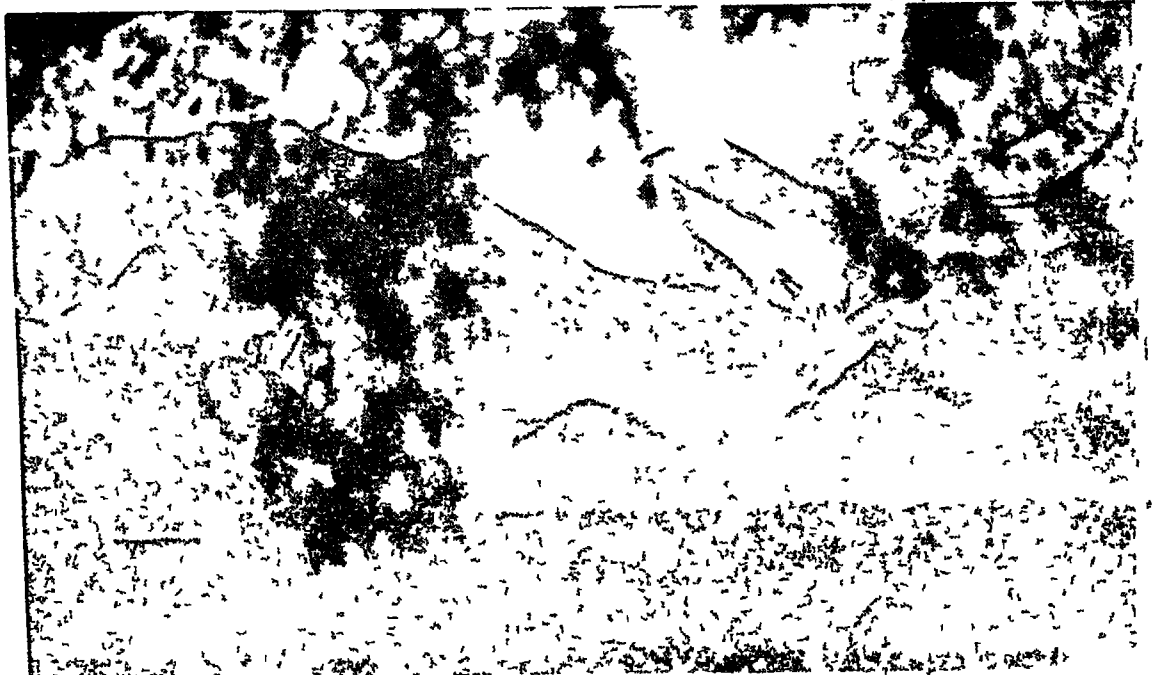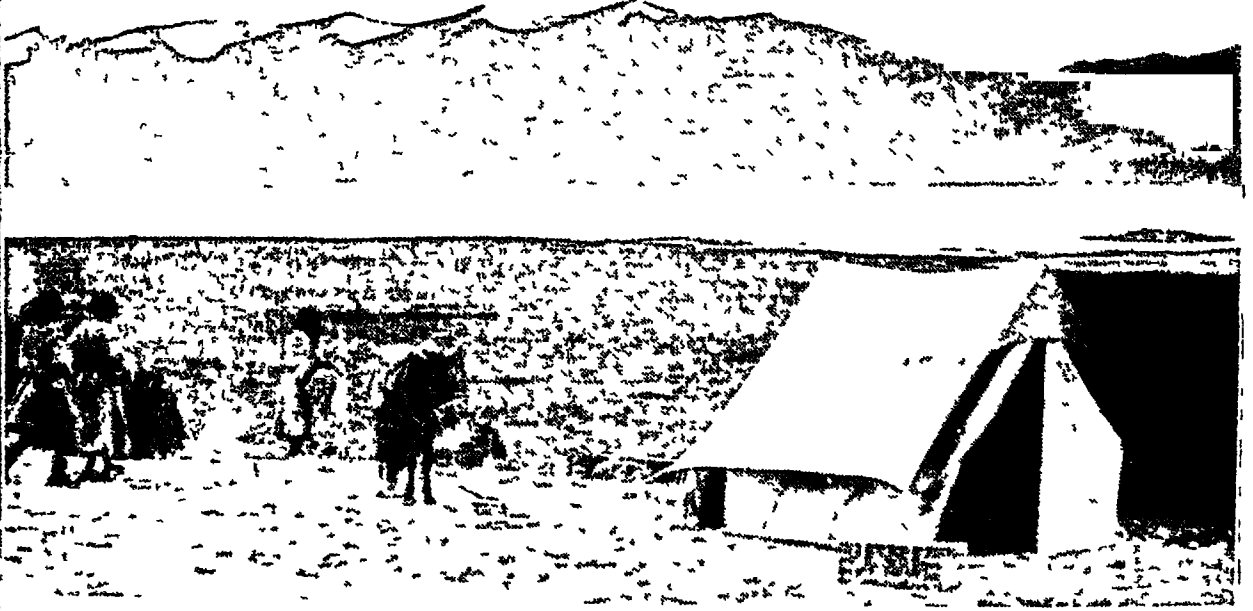
कारझील पर डेरा
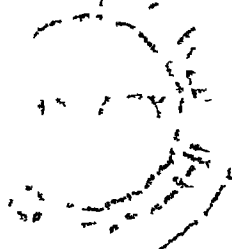
मीरू से पश्चिम में लगभग १७,००० फुट पर लिया हुआ दृश्य

शकर बौद्ध विहार के निकटवर्ती गोम्पा

लद्दाख की एक पाठशाला के बच्चे

...ा हुआ दृश्य

मुख्य बाजार से लिया हुआ लेह का दृश्य

अच्छा ज्ञान था तथा दूसरे को नेग्री के पहाड के पूर्व-दक्षिण ओर के तोकफू-कोर्फू का पूरा पता था। आज रात को यह ठहरा कि मै नेग्री की ओर तथा दाऊसाहव तोकफू-कोर्फू जायँगे। मेरे कुलियो का अगुआ कौन्नोक तथा दूसरा दाऊसाहव के कुलियो का था।

: १३ :

टोली बँट गई

सोमवार, २४ जुलाई

रात को वर्षा होने के कारण पहाडी पर वर्फ पडी थी। आज हम लोगो के टट्टुओ के अतिरिक्त भोटे के भी आठ टट्टू थे। अत मुझे सदेह हुआ कि इन लोगो ने वोझ, जितना अभीतक लदता आया, नही लादा और व्यर्थ के दाम अधिक लगेंगे। पूछने पर मालूम हुआ कि अधिक टट्टू कुलियो का ओढना, खाना तथा छोटे तम्बू ले जा रहे हैं, जिनका किराया हमसे नही लिया जायगा।

वादल साफ होने लगे थे। अत हम सात वजे के लगभग चल दिये। मर्स-मिकला लगभग १८५०० फुट ऊँचा है। अन्त के ५०० फुट की चढाई थोडी कडी है। यहाँपर कुत्तो की भाँति कुछ घोडो की जीभे हाँफते समय निकल गई थी। भोटे भी सहारे के लिए घोडो की पूँछें पकडे थे। वीस-पचीस गज चलकर वे घोडो के साथ रुक जाते थे और घुटनो पर हाथ रखकर दम लेते थे। वडा ही दयनीय दृश्य था। जी में आता था कि ऐसे में घोडो पर वैठना वडा ही निर्दयता का काम है, परन्तु विवश थे। कही-कहीपर घोडे,भेड-वकरी तथा याक के ककाल भी मिल रहे थे, जो इस दर्रे की दुर्गमता के प्रतीक थे। रास्ते मे कई जगह वर्फ पर चलना पडता था, परन्तु वर्फ अधिक नही थी।

लगभग वारह वजे ऊपर पहुँचे, जहाँ अन्य दर्रो की भाँति एक वडा पत्थर का ढेर था और कुछ झडियाँ लगी थी। दम फूलने के मारे जोर से तो नही, परन्तु यथा-शक्ति सवने 'लो सलो हर गलो' का नारा लगाया और सुस्ताने के लिए वैठ गये। निस्तब्धता छाई थी। कोई किसीसे नही

बोल रहा था। टट्टू भी चरने के बजाय चुप खड़े, जितना बन सकता था, फेफडो मे हवा भर रहे थे। आकाश साफ था और मन्द-मन्द हवा बह रही थी। कुछ सिर-दर्द तथा जी मिचलाने पर भी मै आस-पास की हिमाच्छादित पर्वत-श्रेणियो को देख रहा था और अपने ध्यान मे मग्न था। इतने मे दाऊसाहब ने अपना सिगरेटकेस मेरी ओर बढाया। मुझे इतना क्रोध आया, मानो किसीने मेरी समाधि भग कर दी हो। मैंने तमककर कहा, "क्या आप समझते हैं कि मेरे पास सिगरेट नही है ? मुझे जब पीना होगा, पी लूगा, परन्तु आपने मुझे क्यो छेडा ?" बिचारे दाऊसाहब घबरा गये और लगे माफी माँगने। यह देखकर दोनो शिकारी, जो पास मे बैठे थे, समझाने लगे कि आज आसमान साफ है। इससे घास की बू का असर हो रहा है। गुस्सा आना ठीक ही है। इससे दाऊसाहब को बुरा न मानना चाहिए। हम फिर चुप हो गये। इस प्रकार एक घण्टा बैठे होगे कि तोकफू-कोर्फू की ओर जानेवाले कुली अपने-अपने टट्टू सम्हालने लगे और उनके मुखिया ने हमारे पास आकर उत्तर-पूर्व की ओर एक दर्रे की ओर सकेत करके कहा, "हमे इस घाटी मे उतरकर दूसरा सामनेवाला क्यूला पार करना है और उधर चार मील उतरने के बाद ही हम डेरा डाल सकेंगे। इसमें हमे शाम हो जायगी। इसलिए हमारा चल देना जरूरी है। उत्तर की तरफ यानी पमजल जानेवालो को अब उतार है और सात ही मील जाना है, जिसमे सिर्फ तीन घण्टे लगेंगे। इसलिए यह पार्टी अभी ठहर सकती है।" इस पार्टी से उसका उद्देश्य मेरी पार्टी से था। यह सुनकर बिना कुछ बोले हम सब उठ खडे हुए।

चोटी से आधा मील के पश्चात् हमारे मार्ग पृथक्-पृथक् होते थे। अभीतक मैं दाऊसाहब से कुछ नही बोला था। कारण, सिर का दर्द बढता जाता था। जब हम अलग होने लगे तो दाऊसाहब ने प्रणाम कर पुनः माफी माँगी और कहा, "पहली अगस्त को अवश्य लौट आइये।" मैंने केवल सिर झुकाकर 'हाँ' कर दी।

हम उत्तर की ओर बढे और वे पश्चिम की ओर। रास्ते मे दो जगह कियाग (जगली घोडे) मिले। इन्हे देखने का हमारा पहला अवसर था, परन्तु सिर-दर्द और बेचैनी के मारे मैंने कोई ध्यान नही दिया। हम उतरते जा

रहे थे, परन्तु उतार कम था। चार मील गये होगे तबतक दर्द असह्य हो गया। मैने टट्टू रोका और उतरकर बोला, "मै अब नही बढ सकता।" सब जानते थे कि समझाना बेकार होगा, परन्तु फिर भी उन्होने मुझसे बहुत कहा कि इतनी ऊँचाई पर ठण्ड से कष्ट होगा, परन्तु मै नही माना। तब कौचोक ने बॉई तरफ नीचे की ओर थोडी दूर पर दो नालो के सगम पर कुछ पत्थर की दीवारे बताकर कहा, "देखिये, वह रीमडी का पडाव है। अगर आप तीन-चार मील और चल लेते तो आपको, हमको और घोडो को आराम मिलता, लेकिन आपको बहुत तकलीफ है, इसलिए चलिये, रीमडी मे ठहर जायँगे। अच्छा हुआ जो आप इधर आये। अगर तोकफू-कोर्फू जाते तो क्यूला और पार करना पडता। तब आपकी क्या हालत होती ?" यह बात सुनकर हिम्मत बॉधी और रीमडी पडाव तक पहुँच गया। लोगो ने बहुत कहा, परन्तु मै टट्टू पर नही बैठा। ऐस्प्रिन खाई, कहवा तैयार की गई और पी, परन्तु कोई फर्क न पडा। मै बराबर यही कहता रहा कि तम्बू लगाओ। मै तो बिस्तरे पर लेटूगा। जब सब समझ गये कि मै नही हिलूगा तो सामान उतारा गया। तम्बू मे आग रक्खी गई। पॉच बजे तक तीन बार ऐस्प्रिन खाई और कहवा पीया, सिर दबाया गया, तब कही थोडा ठीक हुआ, अन्यथा तन्द्रावस्था थी। सन्ध्या को किसीने भोजन नही किया और रात-भर करवटे बदलते रहे। किसी को नीद नही आई।

बडे सवेरे शौच को उठकर पर्दा हटाने के लिए गुसलखाने की ओर हाथ बढाया तो बाँस की जोड की लोहे की साम मे हाथ लग गया। वह इतना ठण्डा था कि मेरा हाथ वही चिपक गया। थोडा जोर लगाया तब वहाँ से हाथ खीच पाया। यह देख मैं कर्गिल के मास्टर की बात मान गया कि जाडो मे अवश्य लोहे से आदमी चिपक जाते होगे।

रीमडी का पडाव लगभग १७,५०० फुट ऊँचा होगा। यहाँपर याक-वाले भोटे कभी-कभी ठहर जाते है, या मेरे सरीखे शिकारी, अन्यथा ऊँचाई और ठण्ड के कारण कोई यहाँ ठहरना पसन्द नही करता।

: १४ :
शिकार के देश में

मगलवार, २५ जुलाई

आज सवेरे छ बजे तापमान ४१ डिगरी था। सात बजे के लगभग मोख्तालोन चाय लाया और वोला, "रात को वहुत ठण्ड थी और ऊँचाई के मारे किसीको भी नीद नही आई। सवको ऐस्प्रिन खानी पडी। हुजूर की तवियत कैसी है?" मैंने कह दिया, "सिर मे तो दर्द नही है, परन्तु नीद न आने से बेचैनी और भारीपन है।" उसने वताया कि सामान लद गया और अब मेरे तम्बू को लादने की देर है। वाहर निकलकर देखा तो जो नाला कल खूव वह रहा था, आज जम गया था। चारो ओर वर्फ की सफेद चादर-सी विछी थी। तम्बू तोड़कर लादने के लिए भोटे आ पहुँचे। मैंने कहा कि सामान को आगे चलने दो, परन्तु कौंचोक वोला कि अव जानवर मिलने की उम्मीद है। इसलिए हमे आगे रहना चाहिए। जव हम चलने लगे तो मुझे एक सफेद कुत्ता नजर आया। मैंने मोख्तालोन से कहा कि अगर यह साथ रहा तो रात भर भौकेगा, जिससे जानवर पास न आयगे और रास्ते मे यह आगे दौडकर जानवर भगा देगा। मेरे प्रस्ताव को वे मान गये और जिस भोटा का कुत्ता था, उससे कह दिया कि वह कुत्ते को वापस फोवरग ले जाय।

ठण्ड वहुत होने के कारण आज हमे स्वेटर तथा कोट आदि पहनने पडे, फिर भी चलते समय टट्टू की लगाम पकडने मे हाथ ठीक काम नहीं दे रहे थे। हम उत्तर की ओर वढ रहे थे और वरावर उतरते जा रहे थे। उधर सूर्य भी चढता आ रहा था। अत हमारी तवियत ठीक होती जा रही थी। रास्ते मे तीन-चार जगह कियाग (जगली घोडे) मिले। मनुष्य को देखकर ये वहुत नही चौंकते। झुण्ड मे रहते हैं और प्राय: सव सुर्ख रग के होते है। पूँछ इनकी खच्चर जैसी होती है, शेष शरीर विल्कुल घोडे जैसा। ऊँचाई वडे टट्टू जितनी होती है। यदि इनको दूर से मनुष्य दिखाई दे तो दौडकर सौ डेढ-सौ गज तक आ जायगे और

फिर भाग जायगे। इस प्रकार चलते-चलते कई बार देखने को आते हैं। आप यह देखेंगे कि अबकी वार तो भाग गये, परन्तु थोडी ही देर मे देखेंगे कि दूसरी ओर से भागते चले आ रहे हैं। कियाग कई बार शिकारियो की शिकार इस हरकत से खराब कर देते हैं। एक तो इनके भागने से धूल के गुब्बारे उडते हैं। दूसरे, बार-बार इनके भाग जाने से और फिर लौटकर देखने आने से शिकार चौक जाती है, या कम-से-कम चौकन्नी अवश्य हो जाती है, जिससे उसके पास पहुचना कठिन हो जाता है। यही कारण है कि अपनी शिकार को खराब होते देखकर शिकारी चिढ जाता है और इन्हे मार डालता है।

एक जगह हमे अमन की मादा और उसका बच्चा दिखाई दिया। घोडे से उतरकर दूरबीन से खूब देखा। वह चरती हुई पहाड पर चढती जा रही थी। बडी तो चितरिया जितनी थी, परन्तु मोटी वहुत थी।

रास्ते मे दोपहर का भोजन किया और लगभग तीन वजे पमजल पहुँचे। अन्य स्थानो की अपेक्षा यह गर्म जगह है। पमजल कोई गाँव नही है, परन्तु मर्समिक नाले और चैगचेनमो नदी के सगम पर, जो पडाव है उसीका नाम पमजल है। नाले के दोनो किनारे सगम से एक मील ऊपरतक जमुनियाँ (जल-जामुन) के-से पत्तोवाले पेडो का जगल हैं। हमने घने पेड जोजोला पार करने पर यही देखे। इनकी मुटाई दस-वारह इच से अधिक न थी। जब हमे यह जगल मिला तो इसमे फुदकते हुए बीसियो खरगोश दिखाई दिये। ये भारतीय खरगोश से ड्योढे और लम्बे वालोवाले होते हैं। देखने के लिए एक खरगोश मारा। जब मैंने भोटो से पूछा कि यदि वे खाना चाहे तो और मार दूँ तो कौचोक ने बताया कि वे लोग खरगोश नही खाते। उनकी वोली मे इसे 'रिबाग' कहते हैं। वैसे इन्हे कोई धर्म की रोक नही है, परन्तु वे इसके मास को वहुत बुरा समझते है। कैसी विडम्बना है! महीनो का रक्खा हुआ गाय, भेड, वकरी का मास खा लेगे, परन्तु तत्काल मारे खरगोश को न खायगे!

डेरा लगने के पश्चात् थोडी गरमी के कारण सूर्यास्त तक मै बाहर वैठा रहा था। ज्योही दिन छिप रहा था, चारो ओर से वहुत-से खर-

गोश फुदकते दिखाई देते थे। इन्हे कोई नही मारता था। इससे डरते भी नही हैं। हमारे तम्बू से तीस गज पर कई बार खरगोश आकर चरते रहे। आज रात को थोडी नीद आई।

बुधवार, २६ जुलाई

आज सवेरे छ बजे तापमान ४८ डिगरी था। यह तो पाठको को पहले ही बताया जा चुका है कि फोबरग तक मार्ग मे यात्रियो के चलने से घोडे की लीद आदि के चिह्न मिलते थे। उसे रास्ता कहा जा सकता था। फोबरग से पमजल तक फिर भी कुछ मालूम पडता था कि यहाँ होकर गाय-भेड-बकरी निकली होगी, परन्तु आज हम सवेरे सात बजे जब नेग्री की ओर पूर्व दिशा मे चले तो कोई चिह्न नही मिला। केवल दिशा के सहारे भोटे के जाने हुए पहाडो के अनुमान से जा रहे थे। मेरी जेब मे, जिस जगह हम होते थे वहाँ का एक इच = ४ मील के पैमाने का नकशा रहता था। इसमे मैं नई जगह के चिह्न तथा नाम बनाता जाता था। मुझे मालूम था कि नेग्री तथा अन्य शिकारी जगह चैंगचेन मो नदी के बॉए किनारे अर्थात् दक्षिण की ओर थे। यह वृत्तान्त मैं अन्य शिकारियो की शिकार-यात्रा की पुस्तको मे पढ चुका था। चैंग चेन मो नदी लनकला की ओर से पश्चिम की ओर बहती हुई पमजल से कुछ नीचे शायोक नदी मे मिलती है, जो उत्तर की ओर से काराकोरम पर्वत-माला के बर्फ के पानी को लाती हे। इन दोनो के सगम के पश्चात् शायोक पूर्व की ओर मुड गई है और सिन्धु से जा मिली है।

लगभग पॉच मील चलने के पश्चात् हम चैंगचेन मो नदी के पास पहुँचे। भोटो ने जब बताया कि हमे नदी पार करनी होगी तो मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने कहा कि नदी के उत्तर की ओर जाने से तो शिकार नही मिलेगी। तब कौचोक ने बताया कि यही नदी ने घूम खाई है। यदि बाँया किनारा पकडे रहेगे तो चढाई-उतराई के अतिरिक्त चक्कर बहुत खाना पडेगा। सीधे जाने से चक्कर बच जायगा और रास्ता समतल मिलेगा। यह बात अवश्य है कि नदी दो बार उतरनी पडेगी।

यह देखने के लिए कि नदी मे पानी कितना है, हमने सामानवालो से टट्टू लेकर पहले उतरने को कहा। यह नदी यहाँपर सम-भूमि होने के

कारण पहाडी नदियो की भाँति न तेज बहती है और न सकरी है। दोनों किनारो मे लगभग दो सौ गज का अन्तर होगा और पानी की धारा लगभग अस्सी गज चौड़ी होगी। भोटो ने अपने बूट और चोगे उतारे और बिल्कुल नगे हो गये। यह देखकर मुझे तो आश्चर्य हुआ, परन्तु उन लोगो ने किसी प्रकार यह नही दिखाया कि वे झेपते हैं। बराबर बाते करते रहे और हम लोगो को वहाँ की शिकार का हाल बताते रहे। अगुआ के कहने पर सबने ढोरो की भाँति घोडो को आगे किया और 'लो लो' गाते हुए पानी मे घुस गये। इस 'लो' शब्द के अतिरिक्त और कुछ नही बोले। प्रारम्भ मे तो मै समझा कि गाना प्रारम्भ करने के पूर्व, सम्भव है, यहाँ की रीति ऐसी ही हो, परन्तु वे बराबर पन्द्रह मिनटतक, जबतक उस पार न हुए, बराबर 'लो-लो' को कई प्रकार से ऊँचे स्वर से गाते चले गये। एक जगह पानी लगभग पाँच फुट होगा। यहाँपर टट्टुओ पर रक्खा हुआ सामान भीगते देखकर मेरे नौकर गला फाड-फाडकर गालियाँ दे रहे थे कि गहरे पानी को बचाकर निकलो, परन्तु 'लो-लो' के ऊँचे स्वर के गाने मे वे कब सुननेवाले थे। मुझे तो हँसी आ गई। जब वे उधर निकल गये और गाना बन्द हुआ तो मोक्तालोन ने चार भोटे बुलाये। हमारी यह सलाह थी कि घोडे की काठी खोलकर भोटो के सिर पर की जाय तथा पतलून खोलकर नगी पीठ पर चढा जाय। इस प्रकार काठी और कपडे गीले न होगे।

भोटो के आने पर हमने ऐसा ही किया। मैंने लगोट रहने दिया, परन्तु मेरे काश्मीरी नौकरो के पास लगोट नही था। गरम पाजामे उतार-कर आगे-पीछे हाथ से कुरते दाबे रहे। जब नदी मे पानी छूने लगा तो ऐसा मालूम देता था मानो कोई चाकू से वार कर रहा है, परन्तु किया ही क्या जा सकता था ? उधर पहुचकर लगोट खोलकर गरम पतलून पहनी। नौकरो ने सब सामान को खोल-खोलकर देखा कि कितना भीगा है। भाग्यवश कोई हानि नही हुई। इस काम मे हमे लगभग एक घण्टा लग गया। तब चले। कुछ मील जाने पर फिर नदी उतरनी पडी। अबकी बार भोटो के बहुत कहने पर भी हम न माने कि पानी कम है। जब उनमें से दो आदमी पहले उतरे और हमने देख लिया कि पानी कमर से कम है

तब हमने सामान-सहित घोडे उतरने की अनुमति दी, अन्यथा हमने कह दिया था कि सामान टट्टुओ पर नही, सिर पर ढोओ।

उस पार पहुँचते हमे लगभग बारह बजनेवाले थे। अत यहीपर भोजन किया। मैंने कौचोक से पूछा कि वे लोग केवल 'लो-लो' क्यो चिल्लाते थे ? क्या गाना नही गा सकते ? उसने बताया कि इस प्रकार चिल्लाने से पानी ठण्डा नही लगता। मैंने तो विश्वास नही किया, परन्तु हो सकता है कि इस प्रकार उनका ध्यान बँट जाता हो और पानी कम ठण्डा मालूम देता हो।

भोजन के उपरान्त हमने नदी का किनारा छोड दिया और तीन मील की चढाई के बाद हम एक लम्बे-चौड़े मैदान के किनारे पहुँचे। ठीक पूर्व की ओर जा रहे थे। यहीपर एक छोटी-सी पहाडी के तले गन्धक के गर्म सोते थे, जिनका पानी बहुत गर्म था। कुछ विश्राम के लिए यहाँ बैठ गये। वैसे यहाँ से हमे एक मील चलकर ठहर जाना था, परन्तु शिकारी और भोटो की सलाह हुई कि यहाँ और नेग्री के बीच डेरा टाला जाय तो नेग्री जाने के लिए डेरा उठाना न पडेगा। यह मैदान लगभग बारह मील लम्बा और दो से चार मील चौडा होगा। ब्रिटिश भारत की सीमा मे इस मैदान मे नेग्री के पहाड़ के दक्षिणी और तोकफू-कोर्फू के मैदान के अतिरिक्त कही भी तिब्बती हिरन नही मिलते। मेरे नकशे मे यह गरम सोता तथा नेग्री बताई हुई थी। कौचोक ने यह भी बताया कि इस वर्ष इधर बहुत से भेडिये आ गये हैं। अतः हिरन तिब्बत की सीमा मे भाग गये हैं। हमसे एक महीने पूर्व एक जर्मन जौहरी यहाँ शिकार को आया था, जो हमे रास्ते में मिला था।

यहाँ से चलने के कुछ ही देर बाद हमे कई जगह तिब्बती हिरनो के पद-चिह्न मिले। आकृति मे भारतीय हिरनो के-से थे, परन्तु कुछ लम्बे और चौडे थे।

एक जगह एक फुट गहरा तथा दो-ढाई फुट चौडा गड्ढा दिखाकर कौचोक ने मुझसे पूछा कि यह क्या है ? मैंने बता दिया कि यह हिरन की बैठक है, जहाँ हिरन दोपहरी में बैठ जाता है। एक हिरन ऐसी कई बैठके बनाये रखता है। कारण, उसकी पीठ पर पिछली टाँगो के जोड के

पास कीडे रहते हैं । वे वही अण्डे देते हैं और बढते है। चार-पॉच से ज्यादा नही रहते। जब अधिक हो जाते है तो वे दूसरे नये हिरन पर चले जाते हैं, या पुराने उन्हे मारकर भगा देते होगे। जब कभी ये कीडे काटने लगते हैं तो दर्द के मारे हिरन एकदम उठकर दौड लगाने लगता है और जबतक वे शान्त नही होते, हिरन भागता ही रहता है। इस हरकत को देखकर प्राय शिकारी आश्चर्य करते हैं कि विना कुछ देखे यह हिरन क्यो भागता फिर रहा है ? भागते-भागते जहॉ वे शान्त हुए, वही पास की बैठक मे वह बैठ जाता है। यह सुनकर कौचोक बोला, "ओहो, साहब ने सब पढ रक्खा है। इसीसे ये सब बाते इनको मालूम हैं।"

इन गरम सोतो से हम पाँच-छः मील चलकर नदी के किनारे एक घूम मे ठहरे। यहाँपर किनारे ऊँचे होने के कारण हवा से बचत थी और बुर्तसी पास ही मे काफी थी, जिसकी ईंधन के लिए अत्यन्त आवश्यकता थी। यहॉ पडाव न था, अन्यथा गोवर आदि मिलता। तम्बू आदि लगने पर हम लोग तो चाय पीने मे लगे, परन्तु मोख्तालोन दूरबीन लेकर कुछ भोटो के साथ निकल गया।

लगभग छ बजे उसने खबर दी कि एक हिरन चर रहा है। मैंने हबीबा को बुलाकर कहा, "मै सत्ताईस दिन से चलता-चलता थक गया हूँ। तू जाकर देख आ। अगर पास हो और मारने के दाव मे हो तो मैं चलूँगा, नही तो कल देखा जायगा।" लगभग आधे घण्टे मे वह लौटकर आया और चलने का आग्रह किया। साथ मे चार घोडे लिये। तीन पर हम बैठे और एक मोख्तालोन के लिए था। उसके पास जाकर देखा, हिरन चर रहा है, परन्तु मैदान ऐसा था कि कही से भी हम पॉच सौ गज के अन्दर नही पहुँच सकते थे। इधर-उधर छोटे नालो मे घुसकर बहुत देखा, परन्तु कही से भी पास पहुँचने की सूरत दिखाई न दी। इसीमे उसने हमे देख लिया और पूर्व की ओर नदी मे उतरने लगा। अब हमने समझा कि दाव मे आ जायगा। कारण, नदी के दोनो किनारो पर छोटे नाले अथवा भरका काफी थे। जहॉ वह उतरा था, नदी किनारे पत्थरो का एक ढेर कर रखा था। हमने यह तै किया कि पत्थर के इस ढेर के पास ढूँककर इसीकी आड से नदी मे देखा जाय। जब पत्थर तीन

फर्लांग रह गया तो घोडो से उतरकर मै और मोख्तालोन ढूंके । ज्यो-ज्यो ढेर पास आता जाता था, हमे झुकना पड रहा था। ढेर दो फुट से अधिक ऊँचा न होगा, अन्तिम पचास गज तो हमें बैठे-बैठे खिसकना पडा। जब पास पहुँचे तो हमारी साँस फूल गई। धीरे से नदी मे देखा तो आठ हिरन चर रहे थे, जो लगभग दो सौ गज होगे। देखकर मोख्तालोन बोला, "अभी बन्दूक मत चलाओ। औधे पडकर दम ले लो। हवा हमारी ओर चल रही है। हिरनो को मालूम न होगा।" जबतक साँस ठीक न हुई हम दोनो भोटो की भाँति औधे पडे रहे। पन्द्रह मिनट के पश्चात् जब ठीक हो गये तो पुन हिरनो को दूरबीन से देखा तथा उनके आस-पास की भूमि भी देखी। हम यह चाहते थे कि और पास पहुँच सके तो अच्छा है, परन्तु इस जगह से उत्तम कोई जगह न थी।

मैं जगलो की शिकार खेला हुआ था। अत· इतनी दूर बन्दूक बहुत कम चलाई थी। बरसो मे जब-कभी चिढकर हिरन पर भले ही चलाता था, परन्तु लगती कभी न थी। मैंने मोख्तालोन को यह सब बता रक्खा था। उसने साफा उतारकर पत्थर पर रख दिया और बोला कि इसपर बन्दूक रखिये और खूब मिलाकर चलाइये। इस प्रदेश मे हवा पतली होने के कारण दूर की वस्तु पास दीखती है। मुझे यह हिरन ऐसे मालूम देते थे, मानो अस्सी गज पर हो। पाठक मेरे मन की दशा का अनुमान कर सकते हैं। सत्ताईस दिन टट्टू पर बैठे श्रीनगर से लग-भग साढे चार सौ मील इन पहाडो को पार करता हुआ यहाँ पहुँचा था और फैर करने का यह प्रथम अवसर था। दो बार बन्दूक जोडकर उतार ली। दिल मे धुकधुकी लगी थी कि कही ऐसा न हो कि निशाना चूक जाय। मोख्तालोन कई शिकारियो को देख चुका था। अत वह मेरी दशा को खूब जानता था। उसने ढाढस बँधाते हुए कहा, "देर कितनी ही हो जाय, परन्तु ठीक शिस्त लेकर जब आपको लगने का यकीन हो जाय तब फैर कीजिये।"

इन आठ हिरनो में पाँच नर तथा तीन मादाएँ थी। मैंने बड़े को दूरबीन से पहले ही छाँट लिया था। अतः दो बार उसी पर शिस्त लगा चुका था। जब वह ठीक आड़ा खड़ा हुआ चर रहा था, तब मैंने तीसरी

वार फिर वन्दूक जोडी और पूरा ध्यान लगाकर फैर किया। फैर के साथ ही हिरन कुलाँट खा गया और दूसरे वही पर उछलने लगे। यह देखकर मोख्तालोन बोला, "शाबास! और फैर कीजिये।" फिर जोडकर फैर किया तो एक हिरन की पीछे की टाँग टूट गई और वह दूसरो को छोडकर धीरे-धीरे नेग्री की ओर भागा, परन्तु दूसरे वही कूदते रहे। यह देखकर मोख्तालोन जो दूरवीन से देख रहा था, बोला, "शावास! वाँई ओर से नम्बर दो वाला हिरन वडा है। मारिये इसे भी।" मैने फिर वन्दूक जोडी और फैर किया, परन्तु गोली नीचे उतरी। उस हिरन की आगे की टाँग घुटने के पास से टूट गई। अब सब हिरन नदी पारकर उत्तर की ओर के पहाड पर चढने लगे, परन्तु दूसरे फैरवाला हिरन वहुत धीरे-धीरे रुकता हुआ नदी किनारे होकर जा रहा था। उसे देखकर मोख्तोलोन वोला, "हुजूर, वह अभी तीन सौ गज होगा। जरा ठीक शिस्त मिलाकर एक फैर तो कीजिये, ताकि मर जाय।" मैने फिर फैर किया, परन्तु वच गया। इस प्रकार मोख्तालोन के प्रोत्साहन से मैने दो फैर और किये, परन्तु वे भी न लगे। तब मैने कारतूस खराव करना उचित न समझा और कह दिया कि अब न लाऊँगा। वह बोला, "कोई हर्ज नही। इसकी पिछली टाँग जड से टूटी है। दूर नही जायगा। आज नही तो कल, हम इसे ढूढ ही लेगे। तीसरा हिरन मिलना मुश्किल है, क्योकि उसकी आगे की टाँग घुटने के पास से टूटी है।" मोख्तालोन ने ठीक ही कहा था। एक तो, टाँग बहुत नीचे से टूटी। दूसरे, उसे दूसरे हिरनो का साथ था अत. उसका दूर चले जाना सम्भव था और इतने घाव से वह मर भी नही सकता था। इसी वीच हर्वावा और कौचोक घोडो पर सवार एक-एक घोडा पकडे भागते हुए हमारे पास आये। मरा हिरन तो वे नही देख पाये थे, परन्तु दोनो घायल हिरन देख लिये थे। वे वोले कि घोडो पर वैठकर पीछे की टूटी टाँगवाले हिरन का पीछा किया जाय तो अभी मिल सकता है। मैने उन्हे मना करते हुए कहा, "वह स्वय दर्द के मारे वैठ जायगा, परन्तु उसका पीछा किया और उसने देख लिया, तो सम्भव है कि चौक-कर दूर भाग जाय और ऐसी जगह चला जाय, जहाँ हम पहुँच भी न

सके ।" जब उन्होने मरा हिरन देखा तो उसी ओर दौड पडे । फोटो आदि ली गई और उसे उठाकर पत्थर के ढेर के पास रक्खा। अबतक आठ बज गये थे । दिन डूबने मे थोडा ही समय बाकी था । अतः कौचोक ने कहा, "अभी हमे दो-तीन मील लौटकर डेरे पर पहुचना है। वहाँ से हिरन उठाने के लिए फिर आना पडेगा । इसलिए घायल हिरन को कल ढूंढा जाय । अभी तो जल्दी से डेरे पर लौटना होगा ।"

मै भी थका-माँदा था । एक हिरन मार ही चुका था । इसलिए मैंने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया । मेरे नौकर भी कुछ न बोले । हम लौट पडे । मैंने अपनी ३७५ मैगनम हवीबा को दे दी थी । मोख्तालोन के पास ३२-४० थी । मेरे लक्ष-भेद की प्रशसा होती जा रही थी और हम दुडकी से पडाव की ओर जा रहे थे । कौचोक, मोख्तालोन, हबीबा और मै इस क्रम से जा रहे थे । जब डेरा एक फर्लांग रहा होगा तो कौचोक ने अपने साथियो को पुकारा । डेरा नदी के ऊँचे किनारे के सहारे होने के कारण दक्षिण की ओर से ठीक पास न पहुँचे तबतक दीखता न था । जब लौटकर दूसरे भोटो ने आवाज दी तो उसने घोडे को एकदम दबा दिया । मेरे नौकरो ने भी ऐसा ही किया । मेरा घोडा कब माननेवाला था । वह भी सरपट हो गया । मै घोडे का कच्चा सवार हूँ और बहुत डरता हूँ । मैंने लगाम खीचकर बहुत रोकना चाहा, परन्तु वह कब रुकने-वाला था ? इतने मे पॉच गज पर एकदम उतार नजर आया । यही से तीनो घोडे उतरे थे । इस जगह से होकर घोडा तो क्या, आदमी को भी शायद लाठी के सहारे उतरना पडता । तीनो घोडो के फिसलने से धूल उड रही थी । उसीमे मेरा घोडा भी फिसला । मारे डर के मेरी तो आखे बन्द हो गई । होश आया तो देखता क्या हूँ कि घोडा तम्बू के सामने खडा है । मोख्तालोन ने पास आकर कहा, "हुजूर, क्या सोच रहे हैं ? उतरिये, चाय वगैरह पीजिये ।" यह सुनकर मैंने कहा, "देखता नही, पॉव कॉप रहे है। मैंने कई बार कह दिया था कि जो घोडा सबसे मट्ठा हो, वह मेरे लिए रक्खा करो । मैं अच्छा सवार नही हूँ । फिर भी तुम लोगो ने इधर सामने से घोडे उतार दिये, जहाँ आदमी भी कठिनाई से उतर पाता और वह भी दौडकर ।"

मोख्तालोन बोला, "वाकई जगह खराब थी और मुझे भी डर लगा था, क्योकि घोडे उतरे नही बल्कि फिसले थे। हम लोग भी गरदन पर आ गये थे, पर गिरे नही। हमे मालूम नही था कि जगह इतनी खराब थी, नही तो घोडे रोक लेते। यह सब कौचोक की बदमाशी है।"

मैंने कहा, "तुम्हे तो इतना भी होश रहा कि तुम घोडो की गरदन पर आ गये थे। मुझे तो यह भी मालूम न हो सका कि घोडा उतरा या फिसला और मै कैसे बैठा रहा।"

कौचोक सुन ही रहा था। बोला, "साहब इतना नही डरते होगे। शिकारी लोग तो खूब घोडे भगाते हैं। घोडे के चार पॉव होते हैं। इसलिए यह हमसे अच्छा चढता और उतरता है। हम लोग खतरे की जगह दो पॉव होने की वजह से फिसल या गिर सकते हैं। यहॉपर तो सिर्फ मिट्टी थी। अगर गिर भी जाते तो चोट नही आती।" इन लोगो से बहस करना व्यर्थ था। अत भविष्य मे ऐसी जगह सावधानी से घोडे उतारने की कहकर भगा दिया। बहुत देरतक इस घटना का असर रहा। यह भी सोचता था कि यहॉ के घोडे यदि मध्यभारत मे पहुँचे तो शिकार मे बडा काम दे।

भोजन करके अँघेरा होनेतक उस हिरन को भोटे लोग उठाकर ले आये थे। मैंने कह दिया था कि इसका चमडा कल सवेरे निकाला जायगा। मुझे उसको भली प्रकार देखना था।

रात को नीद कम आई। केवल जब-कभी झपकी लगती रही।

: १५ :

नेग्री के मैदान में

गुरुवार, २७ जुलाई

आज सवेरे हमे हिरन की शिकार के लिए नेग्री की ओर जाना था। कारण, मैंने पुस्तको मे पढा था कि नेग्री के मैदान मे हिरन अच्छे और बहुत मिलते हैं। कौचोक कह रहा था कि वहॉ कम हो गये है। इस वर्ष पहले तो हिरनो में बीमारी के आने से बहुत-से मर गये और दूसरे

यहाँपर बहुत-से भेड़िये आ गये हैं। अभी एक महीने पूर्व यहाँ वह हो आया था।

कलवाले हिरन का चमडा निकाला गया। बडे-बडे सब बाल उड चुके थे। कही-कहीपर जाडो के कुछ गुच्छे रह गये थे। कहने की आवश्यकता नही कि शीत-प्रदेश के जगली जानवरो के जाडो मे नये तथा लम्बे बाल ठण्ड से बचने के लिए आते हैं और जून तथा जुलाई मे गिर जाते है। इस हिरन की भी पीठ पर पिछली टाँगो के बराबर चार-पाँच छेद थे, जिनमे पेन्सिल से कुछ कम मोटे तथा जौ के बराबर लम्बे कीडे थे। यह कैसे पैदा होते है तथा केवल तिब्बती हिरन मे ही क्यो होते हैं, यह तो कीट-विज्ञान के विशेषज्ञ ही बता सकेगे। उन्हे भी इन बातो की खोज के लिए इस बीहड प्रदेश मे आकर रहने का कई महीनो कष्ट उठाना पडेगा तथा कई हिरन मारने होगे, तब कही वे कह सकेगे कि इसके अण्डे कैसे होते हैं और बढकर क्या होता है। सम्भवत इल्ली की भाँति मक्खी या तितली बनकर उड जाता होगा, पर यह मेरा अनुमानमात्र है।

यह तिब्बती हिरन ऊँचाई मे काले हिरन के बराबर होता है, परन्तु मोटा अधिक होता है। इसीसे इसमे काले हिरन की अपेक्षा मास भी अधिक होता है।

टट्टू आने मे देर देखकर कारण पूछा तो मालूम हुआ कि टट्टू रात को चरते हुए दूर निकल गये हैं। चाय के साथ दो बिस्कुट खाये। मीठे थे। कुछ ठीक लगे, परन्तु अण्डे और रोटी मे कोई स्वाद नही आया। जबसे मार्समिक पार किया, भूख ही नही लगती थी और न खाना ही अच्छा लगता था। रात को नीद भी नही आती थी। इससे स्वभाव भी काफी चिडचिडा हो गया था।

लगभग दस बजे टट्टू ढूँढकर लाये गये। तबतक हम नेग्री की ओर चले। हम यह जानते थे कि अब हिरन चरते हुए नही मिलेगे, परन्तु बैठे मिलेंगे, जिन्हे देखना बहुत कठिन होगा। कारण, वे गड्ढो में बैठते हैं, जहाँ से केवल उनकी खोपडी ही दीखती है। दूसरे प्रकृति का यह नियम है कि जहाँपर जो जानवर रहता है, वहाँ की मिट्टी-पत्थर से मिलता-जुलता उसका रग होता है। यही हाल इन हिरनो का

भी है। इस जन तथा वनस्पति-शून्य प्रदेश मे मील तो दूर, आधे मील पर भी बैठे हुए हिरन की खोपडी दूरबीन द्वारा देख लेना कठिन है ।

हम लोग कलवाले घायल हिरन के खून तथा पद-चिह्न देखते हुए नेग्री तक चले गये, परन्तु वह नही मिला। खून आधे मील के बाद दीखना बन्द हो गया। केवल वह जहाँ-जहाँ बैठा था वहाँ-वहाँ दिखाई दिया। नेग्री भी एक मैदान का नाम है, जो तीन ओर से—उत्तर, दक्षिण और पश्चिम—हिमाच्छादित पहाडो से घिरा है। यहाँपर भी हमे कुछ नही मिला, तब मोख्तालोन तथा कौचोक तो उक्त जख्मी हिरन को नदी के किनारे के भरको मे ढूढते रह गये और मै हबीबा के साथ वापस चल पडा। एक जगह छोटी सी पहाडी के नीचे हिरन बैठा दीख पडा। हमलोग एक घण्टे मे बडी कठिनाई से उधर पहुँच पाये। ऊपर पहुँचकर मैने टट्टू हबीबा को दिया और सावधानी से ढूकता हुआ पहाडी पर, जिधर हिरन बैठा, पहुँच गया। इसपर कोई ऐसी आड (पत्थर या पेड) नही थी, जहाँ से मै हिरन को देख सकता। अतः पेट के बल घिसटकर मैने ज्योही सिर उठाकर देखना चाहा कि हिरन ने मुझे देख लिया। वह मुझसे लगभग सौ गज होगा। मुझे इसी समय बन्दूक चला देनी थी, परन्तु दम फूला हुआ था। जब-तक सास ठीक हुई, वह चल पडा और १५० गज की दूरी पर जाकर चरने लगा। इस समय मैने जल्दी मे फैर किया। क्रोध मे चार फैर और किये, परन्तु न लगे। यह देखकर हबीबा बडा नाराज हुआ। बोला, "हिरन कल से आज इतना पास था, फिर भी आपने बचा दिया।" उसे समझाना व्यर्थ था। दोनो टट्टू पर बैठकर डेरे की ओर चल दिये। जहाँ-कही हमे ऊँची जगह मे देखने सरीखा कोई टीला मिलता था, उतरकर दूरबीन से देख लेते थे। एक जगह बिल्कुल मैदान मे दो हिरन फिर नज़र आये। पाँच सौ गज से पास पहुँचने का कोई ढग न देखकर मैने हबीबा से कह दिया कि कोशिश करना फिजूल है, परन्तु हबीबा बोला, "हुजूर, मै शिकारी तो नही हूँ, लेकिन कई बार शिकार मे आया हूँ और मैने कई पुराने शिकारियो से सुना और देखा है। अगर आप हँसे नही और मेरी बात मानकर जैसा मै कहूँ करे तो शर्तिया आपको सौ गज पर पहुँचा दूँगा।" मैने पूछा, "पहले तो बता कि मुझे करना क्या होगा? अगर

मुझे ठीक मालूम होगा तो करूँगा।" हबीबा ने कहा, "मै आगे सिर झुकाये चलता हूँ। आप मेरे पुट्ठे पर सिर टिकाकर ठीक उसी तरह चलिये। ऐसा करने से हिरन हमे दो आदमी न समझकर एक चार पाँववाला जानवर समझेंगे और भागेंगे नही।"

हम बाते कर ही रहे थे कि इतने मे वे हिरन खडे हो गये। देखकर हबीबा बोला, "जल्दी कीजिए, नही तो वे भाग जायगे।" मैंने भी उसकी बात मान ली। एक तो वैसे ही दम फूलता था, ऊपर से हबीबा की बू के मारे दिमाग फट रहा था, परन्तु दूसरा उपाय ही नही था। वह कह रहा था, "अगर ये बैठे होते तो सौ गज पर जरूर ले जाता, लेकिन फिर भी दो सौ गज पर तो पहुँचा ही दूँगा। पीछे से खडे होकर हिरन देखने की कोशिश न कीजियेगा।"

इस प्रकार हम लगभग तीन सौ गज चले होगे, परन्तु मुझे तो ऐसा मालूम दिया मानो तीन मील चला होऊँ। उसने रुककर कहा, "मेरी पीठ पर बन्दूक रखकर मारिये।" मैंने देखा कि दो सौ गज पर हिरन चौकन्ने खडे हैं, परन्तु फेफडो मे सास नही समा रही था। मैंने कहा, "ऐसे दम चलते मे बन्दूक कैसे चला सकता हूँ?" वह बोला, "अच्छा हुजूर, दम ले लीजिये।" परन्तु उसी समय हिरन भाग निकले। जबतक हम डेरे पर नही पहुँचे, वह बराबर मुझे विश्वास दिलाता रहा कि उसकी तरकीब उत्तम है और कल मै उसीको लेकर शिकार को जाऊँ। मुझे तो इसमे सदेह था और अब भी है। जब दूसरा कोई उपाय पास पहुँचने का न हो तो भले ही इसको किया जा सकता है।

लगभग सात बजे मोख्तालोन ने बताया कि पिछली टाँग टूटीवाला हिरन मिल गया था। बहुत धीरे-धीरे भागता था और जगह-जगह बैठ जाता था। उसने तीन फैर भी किये, परन्तु न लगे। जब मैंने उसे हबीबा की तरकीब बताई तो वह हँसने लगा और बोला, "क्या हुजूर भी इसे मानते हैं? वह शिकार खेलना क्या जानता है?"

भूख बिल्कुल नही थी। सध्या को थोडी चाय पीकर सोने का विचार किया। हमारा रसोई बनानेवाला आकर बोला, "इस प्रकार आप भूखे रहेगे तो शिकार खेलने के लिए ताकत कहाँ रहेगी? स्वाद न आए तो

क्या, कुछ तो खा ही लीजिये।" मैंने उन लोगो की एक न मानी।

यहाँपर मच्छर बहुत है, परन्तु काटते नही है। तम्बू की छत मच्छरो के मारे काली हो गई। जब बादल होते हैं तो बाहर से हजारो मच्छर तम्बू मे शरण लेने घुस आते हैं।

शुक्रवार, २८ जुलाई

रात को थोडी नीद आ गई थी। चाय पीकर विचार कर रहा था कि यहाँपर यदि बुर्त्सी न होती तो मनुष्यो का इधर आना कठिन हो जाता। उन्हे साथ मे ईधन भी लाना पडता। पौधा ऊपर तो बहुत मामूली-सा जगली तुलसी के समान दीखता है, परन्तु इसकी जड दस-बारह इच मोटी, डेढ-दो फुट लम्बी निकलती है और बडी आसानीसे खोदी जा सकती है। ऐसे बीहड प्रदेश में वैसे कष्ट उठाकर काहे को कोई सस्कृत का विद्वान् आयगा, परन्तु कोई आ गया तो इस पौधे की महिमा मे 'बुर्त्सी-स्तोत्र' अवश्य लिख डालेगा। इसकी जितनी प्रशसा की जाय, थोडी है।

लगभग सात बजे मोख्तालोन ने आकर कहा कि हमसे थोडा नीचे पश्चिम की ओर नदी में एक हिरन चर रहा है। बन्दूक लेकर बाहर निकला तो भोटे ने बताया कि दो दिन से सवेरे और सन्ध्या समय बराबर उन्ही जगहो पर हिरन नदी के किनारे हरी घास खाने आते हैं। पास ही किनारे पर चढकर मुझे हिरन बताया गया। अच्छे दाव मे था। अत मै अकेला ढूक गया। एक पनटूटा (छोटा नाला) में ढूककर देखा तो हिरन १५० गज पर नि शक चर रहा था। सीग बहुत अच्छे थे। खूब आराम करने के पश्चात् जब दम ठीक हो गया तो जमकर बन्दूक चलाई, पर न लगी। मिट्टी गीली थी और घास थी, इससे पता ही न चला कि गोली नीचे उतरी कि चढ गई। मुझे तो विश्वास था कि जरूर लगेगी और हिरन मार लूगा। गोली चलते ही हिरन किनारा चढकर ओझल हो गया। लगभग नौ बजे मै हताश होकर वापस आगया। भोजन के उपरान्त मोख्तालोन ने परसोवाले घायल हिरन को ढूँढने का प्रस्ताव रक्खा। आज बादल बहुत थे और कुछ बूंदे भी पड रही थी। मै भी निशाना चूकने के कारण अपने आपपर क्रुद्ध था। अत मैंने इन्कार कर

दिया और उससे जाने के लिए कहा।

कुछ देर बाद बादल काफी गडगडाया और वर्षा के साथ पहाडो पर बर्फ गिरा। लगभग दो बजे मोख्तालोन परसोवाला हिरन मारकर ले आया। पीछे की दाहिनी टाग जड से टूट गई थी और बहुत बडा घाव था। उन लोगो ने बताया कि दो दिन के कष्ट के मारे आज इससे भागते नही बनता था। आज उसने पच्चीस गज पर पहुँचकर ३२-४० से मारा था। दो हिरन पाकर बन्दे को सन्तोष हो गया। हबीबा ने बताया कि जिसकी अगली टॉग टूटी है, वह भी देखा है। कुछ बादल साफ थे। अतः तीन बजे मै भी उन लोगो के साथ नेग्री के पूर्व की ओर गया। इस समय तीन बजे थे, परन्तु ठण्ड बहुत थी। तापमान ६३ डिगरी थी। हम लगभग दो घण्टे तक काफी भटके, परन्तु न घायल हिरन मिला और न दूसरे ही। बादल फिर से घिर आये और गडगडाने लगे। हम भी डरकर वापस डेरे मे आ गये। आते ही खूब पानी बरसा और पहाडो पर बर्फ भी बहुत गिरा। हम अपने साथियो की सोच रहे थे, जो टोकफूकोर्फू मे थे। आज नेग्री के पास हमारे भोटो ने बन्दूक के फैर सुने थे और वह कह रहा था कि पहाड के पार दाऊसाहब ने चलाये हैं। सन्ध्या समय मैंने उन लोगो से कहा, "दो हिरन मार चुका हूँ, जो काफी हैं। यहाँ भेडियो की वजह से सारे मैदान मे बीस हिरन से ज्यादा न होगे। नीद नही आती और न भूख ही लगती है। इधर बारिश भी जोर पकड रही है। इससे अच्छा होगा कि लौटा जाय।" वे बहुत चाहते थे कि तीसरा हिरन भी मार लिया जाय, परन्तु वर्षा को देखकर वे भी घबरा उठे और सहमत हो गये। दिन मे मच्छर भी बहुत सताते थे। एक प्रस्ताव यह भी रक्खा गया कि यहाँ का डेरा उठाकर गरम पानी के सोते के पास ठहरा जाय। वहाँपर सूखा होने से मच्छर कम होगे और उधर की जगह भी अभी नही देखी थी, सम्भव है कि वहाँ हिरन हो। जो हो, यह तै हुआ कि यहाँ से कल चल दिया जाय।

: १६ :

दो हृदयस्पर्शी घटनाएं

शनिवार, २९ जुलाई

हम लोग आठ बजे चलने के लिए तैयार हो गये। मेरे दोनो हिरनो के सीग २२ इच के और २० इच के थे, अर्थात् मझोले थे। उत्तम वही माने जाते है जो २४ इच से ऊपर हो। हम लोग आगे थे और सामान पीछे था। मैने मोख्तालोन से पूछा, "तुम लोग गढा की शिकार नही जानते ? तुम्हे अगोट देना तो आता है, लेकिन जहाँ जानवर रोजाना एक ही बँधे हुए वक्त पर आता है, वहाँ कुछ देर पहले गढा बनाकर बैठना और जानवर को आने पर मारना नही जानते। इस तरह बहुत पास से गोली चलती है और बचने की आशका नही रहती। अगर हम लोग, जहाँपर हिरन ठीक वक्त पर नदी मे सवेरे और शाम को आते थे, हवा बचाकर गढा बनाकर बैठते तो बीस गज से बन्दूक चलती। इसमे तुम्हारा कसूर नही है। तुम तो हिरन को ढूककर ही मारना देखते आये हो और वैसा ही करते हो। मै अपनी किताब मे यह बात बताऊँगा कि जो कोई चॉगचेनमो जाय और उसका खयाल कम-से-कम एक हफ्ते ठहरने का हो तो वह दो दिन देखकर जहाँ हिरन आते हो वहाँ गढा बनाकर जरूर शिकार खेले। ऐसा करने से मेहनत बचेगी और शिकार अच्छी होगी।" मेरी बात को सब मान गये।

जब हम गरम पानी से लगभग एक मील होगे तो मैदान मे हमे सात-आठ हिरन दक्षिण की ओर नजर आये, परन्तु हमे देखते ही बर्फ-हीन पहाड पर चढ गये। मोख्तालोन ने बहुत चाहा कि इनका पीछा किया जाय, परन्तु पहाड की ऊँचाई को देखकर मेरा साहस नही हुआ। आज भी बादल काफी थे और हवा चल रही थी। कई दिन की दाढी बढी हुई थी। मै यह समझकर कि कोई जानवर मुँह पर आ बैठा है, बार-बार उडाने का प्रयत्न करता था और अपनी भूल पर हँसता जाता था।

गरम पानी के पास पहुँचकर शिकारियो ने कहा कि एक दिन यहाँ ठहरकर हिरन देखे जायँ। इसपर भोटे ठहरने को राजी हो गये। परन्तु बादल देखकर बोले, "मैदान मे ठड की वजह से हम नही ठहर सकेगे। अगर ठहरना ही है तो नदी के किनारो की आड लेकर ठहरिये।" चार दिन भूख न लगने और नीद न आने से मेरा जी ऊब गया था। यदि वे मैदान मे ठहरते तो सम्भव है कि मै भी मान जाता, परन्तु नदी के किनारे मच्छरो के डर से मैने जाने से नाही कर दी। यह देखकर कौचोक बोला, "चॉगचेनमो का बर्फ का तूफान बहुत बुरा होता है। अगर आ गया तो सबके हाथ और मुँह के चमडे फट जायँगे। बादल गहरे होते जा रहे हैं। इसलिए नीचे जाना ठीक होगा।" अन्त मे यही ठहरा कि वापस जाना ही उचित है।

आज एक महीने के बाद पीठ का सूर्य मिला था। अतः चलने मे बडा आराम मिल रहा था। दूसरी खुशी इस बात की भी थी कि बीहड प्रदेश को छोडकर बस्ती की ओर जा रहे थे। लगभग तीन बजे पमजल पहुँचे और तम्बू लगाये। पमजल का कैसा बढिया दृश्य है! छोटे-छोटे पेड़ो की झाडी से हरा-भरा है, जिसमे सैकडो खरगोश फुदक रहे हैं। काफी गरम भी है। आज बाहर बैठकर खूब बाते होती रही और इस स्थान के प्राकृतिक दृश्य की सराहना करते रहे। यहाँपर हमने अमन के सीग पडे देखे। इससे अनुमान हुआ कि ऊँची जगहो मे अमन होगे। शिकारियो ने यहाँ अमन मारे है। भालू भी काफी हैं।

रविवार, ३० जुलाई

आज सवेरे छः बजे पमजल से चल पडे। वही क्रम था अर्थात् हम आगे थे और सामान पीछे। मोख्तालोन को खेद था कि मैने लाडसेस के तीनो हिरन नही मारे। बाते करते हुए उसने कहा, "सबसे ज्यादा मजा इसमें है कि ऐसी जगह पर हम दुनिया के फरेब, पुलिस वगैरा से दूर हैं। यहा-पर तो ऊपर खुदा हे या आप बादशाह हो। किसकी मजाल है जो आपके हुक्म को न माने! मै अपने-आप को वजीर मानता हूँ। यही वजह है कि मैने यह पेशा पसन्द किया है। इससे साल मे एक बार तो मुझे वज़ीर होने का मजा आ जाता है।" मैं भी उसके तर्क को बहुत

पसन्द कर रहा था। वास्तव मे ऐसी जनशून्य जगह पर किसी प्रकार की न चिन्ता होती है और न कोई वाधा डाल सकता है। इस आनन्द का यहाँ आकर ही अनुभव किया जा सकता है, अनुमान नही किया जा सकता।

विचार यह था कि मर्समिक पारकर फोवरग से आठ मील इस ओर ठहरा जाय। भोजन के समय पर लगभग सोलह मील आ चुके थे। जब हमने यह प्रस्ताव भोटो को वताया तो वे राजी न हुए। उन्हे यह भय था कि इस प्रकार तीन दिन की यात्रा दो दिन मे हो जायगी और दाम कम मिलेंगे। यह तो मैं पाठको को बता ही चुका हूँ कि यहाँपर मील के हिसाब मे दाम नही दिये जाते, दिन के हिसाब से दिये जाते हैं। जब हमने उन्हे विश्वास दिलाया कि दाम तीन दिन के पूरे मिलेगे तब वे राजी हो गये। परन्तु उनमे से दो बूढो को विश्वास नही हुआ। वे अपने टट्टू लेकर पीछे रहने लगे और लडखडा कर यह बताने लगे कि वे थक गये है। जब अगला पडाव आया तो हम रुके कि सामान कब आता है। और सब तो आ गये, परन्तु वे दो-एक घण्टे के बाद आये। कौचोक ने उन्हे बहुत समझाया कि नखरे न करो, चले चलो, दाम पूरे मिलेगे, परन्तु उन्हे विश्वास न हुआ। अब हमे भी सन्देह हो गया, अतः सबको आगे किया और हम पीछे-पीछे चले।

रास्ते मे बाई ओर तीस के लगभग भालू दीखे, परन्तु सब मादा और बच्चे थे। रीमडी पहुँचते-पहुँचते छह बज गये। दोनो बूढे बहुत धीरे-धीरे चल रहे थे। अतः उन्हे टट्टुओ पर लादा। ऊँचाई के कारण कुछ क्रोध भी आ रहा था। जब पहाड के पास पहुँचे तो वहाँ से कुत्ते के भौंकने की आहट मिली। देखा तो वही सफेद कुत्ता एक पत्थर से बँधा था। उसकी दयनीय दशा देखकर मुझे दया आ गई। हम सब रुक गये और एक को उसे छोडने के लिए भेजा। पूछने पर मालूम हुआ कि यह कुत्ता उन्ही दो मे से एक बूढे का था। मैने कुछ कडककर कहा, "क्यो रे, तू बडा निर्दयी है! बेचारे को यहाँ इस ठड मे बाँध गया और हमसे कह दिया कि एक बकरीवाले को, जो गाँव की ओर जा रहा था, दे आया हूँ।" वह कुछ न बोला, सुनता रहा। मुझे क्रोध तो इतना आ रहा था कि इसे पिटवा दूँ, परन्तु अपने-आप को शान्त किया।

कुत्ते को छोडते ही वह लडखडाता हुआ हमारी ओर वढा और नाले मे पानी पीकर वैसी ही दशा मे हमारे पास आकर दुम हिलाने लगा। बेचारे का पेट चिपका देखकर मैंने गफ्फारा से कहा कि इसे खाना दो। कुत्ते ने वैठकर बडी कठिनाई से एक रोटी खाई। फिर मेरी ओर बडी कातर दृष्टि से देखकर, मानो वह मुझे धन्यवाद दे रहा हो, लेट गया। यह देखकर दया के मारे मैं गद्गद हो गया और आश्चर्य हुआ कि यह कुत्ता लेटा क्यो है। इसे तो रोटी खाकर दुम हिलाना था। कहने पर हवीवा ने उसे टटोला और बोला, "हुजूर, इसका तो दम निकल गया।" यह सुनकर मेरा क्रोध बस मे न रहा। मैंने चिल्लाकर हवीवा से कहा, "पटक दे इस भोटा को नीचे और लगा जूते।" मेरी आज्ञा पाते ही हवीवा के अतिरिक्त तीन-चार भोटे उसपर टूट पडे और उसकी लात-घूसो से खूब मरम्मत की। जब थोडी देर पिटाई हो चुकी तो मोख्तालोन ने उन्हे रोक दिया और मुझसे बोला, "है न हुजूर यहाँ वादशाह! अव वजीर की भी मान लीजिये। इसे अव और पिटवायेंगे तो यह मर जायगा। अगर इसे सजा देनी है तो इसे पैदल चलने को कहिये और हवीवा को हुक्म दीजिये कि जैसे ही यह चाल धीमी करे, पीछे से डण्डा जमावे। इस तरह जल्दी मर्समिक पार हो जायँगे और इसे सजा भी मिल जायगी।" मैं आपे से बाहर तो था, परन्तु प्रस्ताव इतना उचित था कि मुझे मानना ही पडा। मैंने चिल्लाकर कहा, "अच्छी वात है, लेकिन यहाँ से चलने के पहले गड्ढा खोदकर इस कुत्ते को गाढो और उसपर पत्थर का ढेर करके एक झडी लगाओ।" इस घटना से सवपर मेरा आतक छा गया। अत वात-की-वात मे कुत्ते की समाधि वन गई। मैंने आवेश मे गला फाडकर 'लो सलो हर गलो' का नारा लगाया। मेरे साथ सभी चिल्लाये, जिससे उपत्यका गूज उठी। उस समय मेरी आँखे डव-डवा आई थी।

सामान के साथ मेरी आज्ञानुसार जव सव चल पड़े और मैंने अपना टट्टू लाने को कहा तो मोख्तालोन, जो मेरे मन की दशा को ताड़ गया था, बोला, "हुजूर, एक सिगरेट पी लीजिये, तवतक ये कम्वख्त आगे निकल जायँगे, नही तो इनको धीरे-धीरे चलते देखकर आपको फिर

गुस्सा आयगा।" इस समय मै बात-चीत नही कर सकता था। बैठकर सिगरेट पीने लगा और मेरे मन मे कई विचार उठने लगे। मोख्तालोन बोला, "हुजूर बडे रहमदिल हैं। दीवान को ऐसा ही होना चाहिए।" मै इसे भी अनसुनी कर गया और चुप रहा। सिगरेट जल जाने पर भी मैं न उठा तो वह बोला, "हुजूर, चलिये। हमे मर्समिक पर दिन डूबने-वाला है।" यह सुनकर मैं चौक पडा और हम दोनो चल दिये। भोटे डर के मारे बराबर तेजी से बढते जा रहे थे। मर्समिक से एक मील इधर हमे कियॉगो का बडा झुण्ड मिला, जो लगभग सौ गज का होगा। देखकर मैंने मोख्तालोन से कहा कि इनकी तस्वीर लेनी है। उसने बताया कि सबसे बडे को मार डालिये और तस्वीर ले लीजिये, परन्तु जल्दी कीजिये, नही तो अधेरा हो जायगा। मैने उतरकर सबसे बडे घोडे पर, जो पूरा था, एक फैर किया। गोली के लगते ही वह लडखडता हुआ चलने लगा। उसे दौडता न देख सब कियॉगो ने उसे घेर लिया और धकेलने लगे। इतने पर भी वह न चला तो उसे लाते मारी। जब वह गिर पडा तो काटने लगे। कुत्ते की मौत का असर अभी था ही। अब इन कियॉगो का अपने साथी के प्रति यह व्यवहार देखकर मेरे हृदय मे दया का समुद्र उमड पडा। जब हम उससे तीस गज पर पहुँचे तो सब कियॉग उसे छोडकर सौ गज पर खडे हो गये और देखने लगे कि हम क्या करते हैं। मै वैसे ही किंकर्तव्यविमूढ बना घोडे पर बैठा था। मोख्तालोन ने कैमरा हाथ मे देकर कहा, "जल्दी फोटो लीजिये। हमें अभी मर्समिक पार करना है।" यह सुनकर मशीन की भॉति फोटो लेकर मै उसके पीछे हो गया।

आज बादल और ठण्ड थी। अत हमारे सिर मे उस दिन की भॉति दर्द नही हुआ। सूर्यास्त तो हो चुका था, परन्तु उजेले मे हम मर्समिक पहुँच गये।

अँधेरा होते-होते लगभग नौ बजे के उतरकर हम पडाव पर पहुँचे तो सब घोडो को लदा पाया। मैने गुस्से मे कहा, "अभीतक तुम लोग क्या कर रहे थे? तम्बू वगैरा क्यो नही खडा किया?" यह सुनकर कौचोक हमारे पास आकर बोला, "यहॉ से फोबरग सिर्फ आठ-दस मील

है। अगर आप हुक्म दे तो हम चाहते हैं कि वही चलकर डेरा लगावे। हम घर पहुँचकर ठड से वचेगे और आपको भी कल चलने की तकलीफ न होगी।" एक तो मै खिन्न था। दूसरे, आज सिर मे दर्द न था। अत मै भी सहमत हो गया। हमलोग ग्यारह बजे तक फोवरग पहुँच गये। एक गोली एस्प्रीन की खाकर तथा चाय पीकर सोना चाहता था कि इतने मे फोवरग के एक भोटे ने खबर दी कि दाऊसाहव भी कल पहुँच जायँगे। आज वे मर्समिक के उस पार डेरा डाले हैं।

: १७ :

बिछुड़े साथी मिले

सोमवार, ३१ जुलाई

आज रात को देर से सोने के कारण सात बजे के लगभग उठा। हवीवा ने चाय लाकर रक्खी। आज बादल वहुत घने हैं। इससे ठण्ड भी है। मैने हवीवा से कहा कि आज दाढी बनाऊँगा और स्नान भी करूँगा। यह सुनकर उसने आश्चर्यपूर्वक कहा, "हुजूर को दाढी वहुत अच्छी मालूम देती है। अभी फेरसी (नम्बर ८ व्लाक) भी जाना है, जहाँ काफी ठण्ड होगी। इसलिए मुँह के वचाव के लिए दाढी वहुत जरूरी है। आज ठण्ड वहुत है। इसलिए स्नान न कीजिये।" मै दाढी के मारे खुजा-खुजाकर तंग आ गया था। अत मैंने एक न सुनी और गरम पानी लाने को कहा। मैंने हवीवा से कह दिया था कि हो सके तो आज पुन स्नोत्रोट मछली पकडी जाय, चाहे आज ठण्ड के कारण लडको को इस कार्य के लिए कुछ अधिक दाम क्यो न देने पडे।

दाढी बनाने के लिए गरम पानी लेकर जव हवीवा आया तो उसके साथ मोख्तालोन तथा मेरा रसोइया गफ्फारा भी आया। मैं समझ गया कि वे मुझे यह समझाने के लिए आये हैं कि मैं दाढी न वनाऊँ। जव उनके मन की वात मैंने वताई तो मोख्तालोन वोला, "हुजूर, ठण्डी हवा से मुँह को वचाने के लिए अल्लाह ने वाल दिये हैं। अभी हुजूर को नम्वर ८ व्लाक जाना है, जहाँ काफी ठण्डा है। हुजूर को आज नहाना भी नहीं

चाहिए। अगर बगल मे खुजली चलती है तो कपडे बदल लीजिये। हम आपके कपडे गरम पानी मे डालकर जितनी जूँ होगी निकाल देगे।"

मैंने इन लोगो की एक न मानी। दाढी बनाने मे कष्ट तो अवश्य हुआ। कारण एक तो सोलह दिन की दाढी थी। दूसरे ठण्ड के कारण जबतक साबुन के ब्रुश को रखकर उस्तरा उठाता, दाढी सूख जाती थी। फिर भी मैंने बनाकर ही छोडी। बारह बजे के लगभग स्नान भी किया, परन्तु इसमे ठण्ड विशेष न लगी। स्नान के उपरात शरीर बडा हलका मालूम देता था।

लगभग एक बजे के दाऊसाहब का काफिला पहुँचा। मुझे देखते ही वे बोल उठे, "वाह साहब, आपने हमारे आने के पहले ही दाढी मूड डाली।" बातचीत से पता चला कि इस ओर बर्फ अधिक पडा था। दाऊसाहब अपने साथ पाँच हिरन के सिर लाये थे। दो २४ इच के, दो २३ इच के और एक २१ इच का। अर्थात् लाइसेस से उन्होने दो अधिक और मैंने एक कम मारा था। दोनो मिलकर छह सीग ले जा सकते थे। अतः यह सलाह हुई कि २१ इचवाले सीग को यही छोडा जाय। जब हम लोग चाँगचेनमो मे थे तो यही समझ रहे थे कि दूसरे की अपेक्षा अपनी ओर बर्फ अधिक है। दाऊसाहब के कथन से मालूम हुआ कि टोकफूकोर्फू और फलातक की ओर हिरन बहुत थे। जब मैंने पूछा कि आपने कितने फैर किये तो उन्होने नही बताया। मेरे पास एक बन्दूक और सौ कारतूस थे। परन्तु इनके पास दो बन्दूके और तीन सौ कारतूस थे। मुझे हर्ष इस बात का था कि उनको शिकार अच्छी मिली।

भोजन के उपरान्त चलने के विषय मे सलाह हुई। यह ठहरा कि दाऊसाहब के ब्लाक मे चुशल ग्राम तक इकट्ठा चला जाय। वहाँ से मै डुगटीरप के घाट से सिन्धु पार अपने ब्लाक नम्बर आठ मे जाऊँ। जब हम दोनो अमन की शिकार खेल ले तो मार्सलग (हिमिस) मे मिले। इस कमेटी मे मोख्तालोन बार-बार यह बात कहकर अफसोस प्रकट करता था कि मै केवल दो ही हिरन मार पाया। मै उसे यह कहकर सान्त्वना देता था कि इसमे उसका दोष न था। एक तो मैं घोडे का कच्चा सवार, दूसरे उधर हिरन ही कम थे।

यदि बादल साफ रहे तो कल सवेरे प्रस्थान करने की ठहरी।

मगलवार, १ अगस्त

आज सवेरे भी काफी बादल थे। रात को खूब बर्फ गिरा था, जिससे सब पहाडो की चोटियाँ सफेद चादर ओढे थी। लगभग आठ बजे हम यहाँ से चल पडे। आठ मील चलने के पश्चात् पगु ग झील मिली। इसी के किनारे-किनारे हमे दस मील जाना था। बादल घने होते जा रहे थे और वायु का वेग भी वढता जाता था, जिससे ठण्ड वढती जा रही थी। आज हमे वरसाती पहननी पडी। पगुग का दृश्य अवर्णनीय था। जितने भी नीले रग के (गहरे से हलके रग के) चित्र खीचे जा सकते थे, इस झील की तरगमयी सतह पर दिखाई दे रहे थे। जहाँ घने बादल की परछाई थी, वहाँ गहरा और जहाँ थोडा प्रकाश था, वहाँ फीरोजी रग था। इसपर भी तरगे थी, जिनके ऊपरी हिस्से पर हलका तथा जडो मे गहरा रग था। प्रकृति की छटा देखते ही वनती थी। हवा और वादलो के जोर के कारण हमारे भोटे भी सिकुडे जा रहे थे। हमे डर था कि कही ओले न पड़ने लगे। झील के किनारे पाँच मील चलने पर वादल गडगडाने लगे। यहाँपर एक छोटा-सा गाँव है, जिसे 'पदम' कहते हैं। हम लोग दक्षिण दिशा मे जा रहे थे। झील हमारे वाये हाथ को थी। पदम के पास पहुँचने के पूर्व भोटो ने गाना प्रारम्भ किया। सकेत पाकर गाँव की स्त्रियाँ गरम चाय और सत्तू लेकर आ गई। हम लोगो से भोटा कहने लगे कि इन्हे छुट्टी देकर यही पडाव डाला जाय। वे हमे ओलो का भय वता रहे थे, परन्तु हम नही माने। हमने कौचोक से कह दिया कि कुछ भी हो, हम मन जाकर ही ठहरेगे। कौचोक वडा चतुर था। उसने कहा कि इस गाँव मे कुछ दिन पहले राहुल नाम का हिन्दुस्तानी आकर भोटो के घर ठहरा था। यहाँ ठहरने से हमे उसके वारे मे जानकारी मिलेगी। मैंने कहा कि अगर वह यहाँतक आया है तो शिकार भी खेला होगा। इसपर वे वोले कि वह तो लामा है। पूछने पर मालूम हुआ कि राहुल मन भी गये थे। अत हमने यह कहकर कि मन मे पूछताछ होगी, आगे वढने को कहा।

हम लोगो की निगाह वार-वार पगुग झील के नीले दृश्य पर जा रही थी। तीन मील चलने पर जव मन दो मील रहा होगा, बूँदों के साथ

छोटे-छोटे ओले भी आने आरम्भ हुए। जैसे-तैसे भीगते तथा ओलो से डरते हुए लगभग तीन वजे के मन पहुंचे। गॉव से बाहर झील की ओर पेडो के झुरमुट मे हमने तम्बू लगाये और फोबरग के भोटा लोगो से विदा ली।

दस दिन साथ रहने के कारण इन लोगो से हम लोग काफी परिचित हो गये थे। अन्य गॉवो की अपेक्षा यहॉवाले हिन्दी खूब समझ लेते है। इनका अगुआ कौचोक तो मेरा मित्र-सा हो गया था। चलती वार उसने पुन मेरी शिकार कम होने के लिए दु.ख प्रकट किया और बोला, "आप लोग पहले हिन्दुस्तानी हो। इसकी हमे खुशी है। मौका लगे तो फिर आइये। यह हम जानते है कि चॉगचेनमो का सफर साहब लोग भी दुबारा नही कर सकते, लेकिन आप दुबारा आकर हिन्दुस्तानियो की बात रखना। हम तो यह जानते थे कि हिन्दुस्तानी या तो खानसामा होते हैं या बाबू। आपने साबित कर दिया कि हिन्दुस्तानी शिकारी भी होते हैं।" हमने उसे यह कहकर कि हमसे आते नही बना तो कम-से-कम हमारे भेजे हुए लोग अवश्य आयगे, उनसे विदा ली।

दृश्य इतना सुहावना था कि कैमरा निकालकर टेली-फोटो-लेन्स से चार-पॉच फोटो लिये। झील का पानी खारा है और इसमे थोडे से चकई-चकवो को छोडकर दूरबीन से देखने पर भी हमे कोई दूसरी पानी की चिडिया नही दिखाई दी। लगभग छ बजे के लद्दाख के एक शिकारी ने मुझे मेरी डाक दी तथा मि० वाल्टर एसबो के तारीख ११ से १७ जुलाई तक के 'स्टेट्समैन' के अक भी दिये। अब क्या चाहिए था! लगे अपने अपने पत्रो को पढने। इसके उपरान्त समाचार-पत्रो को पढते-पढते अँधेरा हो गया।

बुधवार, २ अगस्त

आज सवेरे उठकर देखा तो बर्फ गिर रहा था। ऐसा मालूम देता था, मानो धुनी रुई के फाए गिर रहे हो। छ वजे तापमान ४३ डिगरी था। चाय के समय सबकी सलाह हुई कि ऐसे मे चलना ठीक न होगा। अत आज यहीपर ठहरने का निश्चय हुआ। आज का पहला दिन है कि हमने वर्फ दिन को गिरते देखा। कल के अखबार पढते रहे। बारह

वजे के लगभग तापमान ठण्ड के कारण ४१ डिगरी हो गया। हम लोग विस्तर मे पडे थे।

मनवालो से पूछने पर मालूम हुआ कि राहुलजी इस ग्राम मे उन लोगो के साथ ठहरे थे। हमलोगो को इतने दिन हो गये थे, फिर भी उनके साथ रहकर उनका भोजन तो दूर, उनकी चाय तक नही पी सकते थे। राहुलजी को उन लोगो के विषय मे जानकारी लेने के लिए उनके साथ रहना अनिवार्य था। हमारा उद्देश्य तो शिकार खेलने का था। अतः हमें उनके साथ रहने तथा उनका खाना खाने की आवश्यकता न थी।

यह गाँव अन्य जगहो से नीचा होने के कारण हमारे मुँह का स्वाद भी ठीक हो गया था और खाना अच्छा लगने के कारण काफी खाया भी था। दो वजे के लगभग वर्फ गिरना बन्द हुआ और सध्या होते-होते वादल भी फटने लगे तथा कही-कही धूप भी निकल आई। हमे आशा वॅधी कि इस प्रकार वादल साफ होते गये तो कल यहाँ से चल सकेंगे। रात को डटकर भोजन किया और नीद भी खूब आई।

गुरुवार, ३ अगस्त

आज सवेरे छ. वजे तापमान ४३ डिगरी था। रात मे नीद अच्छी आने के कारण चित्त प्रसन्न था। उधर वादल फट गये थे और खूब धूप थी। लगभग साढे सात वजे हम मन से चुशल के लिए चल दिये। हम लोग पगुग झील के सहारे दक्षिण की ओर वढ रहे थे। कहने को मार्ग समतल था, परन्तु आज परसो का-सा दृश्य न था। आज झील का पानी शात तथा हरे रग का दिखाई दे रहा था। हाँ, किनारे पर असख्य फूल छोटे-छोटे पौधो मे खिले हुए वडे शोभायमान दिखाई दे रहे थे, मानो एक वडा कालीन विछा हो। लगभग सोलह-सत्रह मील चलने के पश्चात् हमने झील का किनारा छोडा और तीन-चार मील चलने के उपरान्त चार वजे हम चुशल के पडाव पर पहुँचे। गाँव यहाँ से पश्चिम की ओर आध मील दूर है। पडाव मे छोटे-से पेड हैं, जहाँपर तीन-चार व्यापारी डेरा डाले थे। हमने इन्हे एक मील दूर से देख लिया था। वे लोग गाँववालो के साथ वाते कर रहे थे, परन्तु सवके हाथ वरावर हिलते

जा रहे थे। पास पहुंचने पर मालूम हुआ कि यहाँ मच्छर बहुत हैं, जो काट रहे हैं। इतने मे हमे भी इसका अनुभव हो गया। बडे-बडे मच्छर थे। जहाँ काटते थे, वहाँ पर ददोरे हो जाते थे। हमने यहाँ ठहरने से इन्कार कर दिया और कुछ आगे बढकर एक मैदान मे डेरा डाला। साथवाले बहुत कहते रहे कि पानी तथा ईधन का कष्ट होगा, परन्तु हमने एक न मानी। चलते समय वे व्यापारी तथा कुछ गाँववाले हमारे साथ हो लिये।

व्यापारियो से पूछने पर मालूम हुआ कि वे कुलू (जिला कागडा, पजाब) के रहनेवाले हैं और राजपूत हैं। वे लोग नीचे से चाय, शकर तथा नमक लाते हैं और ऊन तथा पश्मीना ले जाते है। इस काम मे उन्हे काफी भटकना पडता है और कई महीने लग जाते हैं। माल खरीदकर पुगा के नाके पर रखते जाते हैं। इस प्रदेश मे कई गाँव ऐसे हैं, जहाँपर भोटे लोग अपना माल लेकर आते हैं, जिनमे इस ओर चुशल प्रमुख है। वैसे इस गाँव मे सौ घर से अधिक न होगे। रुदोकवाले तिब्बती व्यापारी जब हिन्दुस्तान की ओर आते हैं, इन्हे पहला ग्राम चुशल मिलता है। रुदोक पश्चिमी तिब्बत का केन्द्र है जो चुशल से दस मील पूर्व की ओर होगा। इसीसे चुशल का महत्व है।

गाँववालो से जब घोडो के लिए पूछा तो मालूम हुआ कि लद्दाख के वजीर (गवर्नर) दौरे पर है। अत इस ओर के सब घोडे उनके लिए गये हैं। बडी कठिनाई से आठ याक और और छ. घोडे का आश्वासन मिला।

हमारे नौकर जो मिलता था उसीसे भोटिये कुत्तो के पिल्ले खरीदने की बात करते थे, परन्तु सबने यही बताया कि अच्छे पिल्ले रुदोक मे मिलेगे। आज पडाव से कुछ दूर ठहरने के कारण पानी तथा बुर्त्सी लाने मे थोडी देर लगी, परन्तु मच्छरो से बच गये। हमलोग यहाँवालो के आलस्य पर आश्चर्य कर रहे थे कि इतने मच्छर काटते है, फिर भी वे ऐसी जगह क्यो पडाव बनाए हैं, जबकि ईश्वर ने खूब लम्बी-चौडी उपत्यका दे रक्खी है, जिसपर खेत का नाम भी नही। केवल थोडे-से खेत गाँव के पास हैं।

: १८ :

अमन की खोज में

शुक्रवार, ४ अगस्त

चुगल की उपत्यका काफी चौडी है। सवेरे जब आठ याक और छः धोडे आये तो हमको सामान लदने के समय दूर जाकर बैठना पडा। याक अर्द्ध-जगली जानवर है। जहाँ भोटो के अतिरिक्त किसी अन्य की गन्ध आई कि सामान पटककर भागे। बड़ी कठिनाई से उनपर सामान लादा गया। यहाँतक हुआ कि एक को लादकर दूसरे को लादते समय पहला सामान पटककर भाग जाता था। यह हाल देखकर रमजानखा कह रहा था, "सामान का खुदा ही हाफिज है। हमारी बद-किस्मती है कि वजीर-साहब का दौरा हो गया, जिससे घोडे नही मिल रहे हैं। इनका लादना ही आफत नही है, परन्तु चलते समय भी भेडो की भाँति इकट्ठे एक-दूसरे से टकराते चलेगे, जिससे सामान आपसमे टकराकर टूटता जायगा।" याक ऐसा अजीब जानवर है कि चलेगा इकट्ठा, परन्तु जब बिचकेगा तो अपने-अपने मुँह भागेगे। प्रतिदिन हमे सामान लादने मे आधा घण्टा लगता होगा, परन्तु आज लगभग दो घण्टे लगे। भोटो को खूब समझाया गया कि याको को एक-दूसरे के पीछे चलाया जाय ताकि सामान न टूटे। तब कही हम नौ बजे चले। एक बजा होगा तब हम झाका नाले पर एक पडाव मे जाकर ठहरे, जो कर्दुम लुगपा के मुहाने पर है। इधर की बोली मे 'लुगपा' छोटे सेहे को कहते हैं।

डेरे लग जाने के पश्चात् यहाँ के भोटो से वार्तालाप प्रारम्भ हुआ। फोबरग के भोटो की भाँति ये लोग अच्छी हिन्दुस्तानी तो नही बोल पाते, परन्तु काम चला लेते हैं। मालूम हुआ कि यहाँ चारो ओर पहाडो पर अमन मिलने की सम्भावना है। पूर्व की ओर पहाड कम ऊँचे हैं, परन्तु उधर तीन-चार मील की दूरी पर तिब्बत की सीमा आ गई है। पश्चिम की ओर पहाड ऊँचे और भयावने हैं। मैंने प्रस्ताव रखा कि कल सवेरे मैं तथा मोहनालोन पूर्व की ओर तथा दाऊसाहब

और रमजानखा पश्चिम की ओर अमन की खोज मे जायँ। यह मैं बता चुका हूँ कि हम सबमे रमजानखॉ अनुभवी था। परन्तु वृद्धावस्था के कारण वह परिश्रम से बचने के कारण हमे बना रहा था। वह बोला, "पूरब की तरफ के पहाड सहल होने की वजह से उधर भेड़बकरी बहुत जाती हैं। इसलिए वहाँ अमन का मिलना मुश्किल है। अगर आप पच्छिम की तरफ जायँ तो जरूर अमन मिल जायँगे, जिससे इन्हे मेरे अमन के ब्लाक फेरसी मे जाने की तकलीफ न उठाना पडेगी।" जब मैं अपनी जिद पर दृढ रहा तो दाऊसाहब बोले, "साहब का कहना ठीक है। जब उनसे काफी मेहनत नही होती तो वे क्यो बीहड जगह से जायँ। दूसरे, यह ब्लाक उनका नही है। उन्हे तो मैंने रोक लिया है। इसलिए दो दिन देखकर नम्बर आठ मे जरूर जायँगे। इन पहाडो की छानबीन करने का काम मेरा है। कल देखता हूँ, तुम कितने चलते हो।" रमजानखॉ ने पनाह मॉगी और मुझे बताया कि चॉगचेनमो में दाऊ साहब ने भटका-भटकाकर किस प्रकार उसे लस्त कर दिया था।

हम लोगो के पास आठ दिन के अखबार थे ही। उन्हे कई बार पढा और युद्ध की आशका के विषय मे हम दोनो चर्चा करते रहे। लगभग पाँच बजे लेह से आए हुए शिकारियो के जमादार मिले। वे चुशल की ओर जा रहे थे। सबके मुँह से वजीरसाहब के दौरे का हाल सुन-सुनकर भोटो की भाँति हमारे दिल मे भी उनके प्रति रौब बैठने लगा था। वैसे ओरछा राज्य के सेवा-काल मे एक बार वायसराय भी आये थे, परन्तु उस समय के रौब से यह रौब अधिक था। इसका कारण यह निर्जन भूमि तथा एकान्त का वातावरण हो सकता है। कई बार आदमी डुगटीरप की ओर जाते और उधर से आते हमारे पडाव के पास से निकले। सब-के-सब वजीरसाहब के सन्देश-वाहक थे या उनके कार्य से आ-जा रहे थे। इनका तहलका लगभग दस हजार वर्गमील की भूमि में था।

सन्ध्या होते ही पास की झाडियो मे रिवाग (खरगोश) फुदकते नजर आये। उतने तो न थे जितने कि पमजल के पड़ाव पर थे, परन्तु फिर भी काफी थे। दाऊसाहब का इन्हे देखने का पहला अवसर था।

यहाँपर भी वे आदमी से कम विचकते थे।

आज दिनभर थोडे बादल रहे और रह-रहकर थोडा-थोडा पानी भी बरसता रहा। आज का पडाव अन्य पडावो की अपेक्षा ऊँचा है।

शनिवार, ५ अगस्त

ऊँचाई के कारण रात को नीद कम आई थी। कल की सलाह के अनुसार दो टट्टू तथा एक भोटे के साथ मै और मोख्तालोन पूर्व की ओर लगभग सात बजे चल दिये। दाऊसाहब और रमजानखॉ भी दो टट्टू और एक भोटे के साथ पश्चिम की ओर गये। आज सवेरे से ही बादल थे। इससे काफी ठण्ड थी। जिस ओर मै गया था वहॉ पहाड अठारह हजार फुट से ऊँचे न होगे तथा ठण्डे भी न थे। अत हम दिन-भर टट्टू पर ही चढे रहे। जहा ऊँची जगह पहुँच जाते थे, वहा से दूर-बीन लगाकर अमन देखने के लिए टट्टू से उतरते थे। पहाड ऊँचे न होने के कारण वहॉ की बर्फ बहुत पहले गल चुकी थी और जो कुछ भी घास थी, जानवर तथा भेड-बकरी चर चुके थे। दूसरे, इन पहाडो की ऊँचाई कम होने के कारण ग्लेशियर न होने से पानी का अभाव था। हमको कहीपर भी अमन या अन्य जगली जानवर नही मिले। जब घास या पानी ही न हो तो जानवर रहकर क्या करेगे? कई बार वर्फ पडने के कारण हमे कही-कहीपर पत्थरो के नीचे शरण लेनी पडी। बर्फ के गलने पर जब अमन घास चरने आये होगे, उस समय के गीली भूमि मे गडे हुए खाद कई जगह अवश्य मिले थे। इससे हमको विश्वास हो गया था कि यहॉ अमन हैं अवश्य, परन्तु घास तथा पानी की खोज मे दक्षिण की ओर ऊँची जगहो मे चले गये हैं। ज्यो-ज्यो हम दक्षिण की ओर पहाड की चोटी पर बढते जा रहे थे, हमे खाद भी अधिक मिलते जा रहे थे। एक जगह से पगुर झील का, जो तिब्बत की सीमा मे है, बडा सुन्दर दृश्य दिखाई दिया। इसीके सहारे चुशल से रुदोक को मार्ग जाता है, जिसपर चीटी के समान रेगते हुए यात्री तथा जानवर दिखाई दे रहे थे। भोटो से पूछने पर मालूम हुआ कि वह स्वय लद्दाख और तिब्बत की सीमा को नही जानता। इतना ही बताया कि हम सीमा पर हैं। यहाँपर कोई ऐसा चिह्न या मुनारे नही

थे, जिनसे जाना जा सके। कई जगह हमने टट्टू से उतरकर दूरबीन द्वारा काफी छानबीन की, परन्तु हमे कुछ भी दिखाई नही दिया। हम बराबर दक्षिण की ओर बढते जा रहे थे। एक जगह बैठकर हमने दोपहर का भोजन भी किया था। लगभग साढे तीन बजे हमलोग पहाड पर ऐसी जगह पहुँचे, जहापर भूमि मे नमी थी और कुछ घास भी थी। यह जगह लगभग एक एकड़ होगी। छोटी-सी पोखर मालूम देती थी जिसके पानी को सूखे लगभग एक सप्ताह हुआ होगा। पूरी पोखर मे अमन के खाद थे और लेडी भी काफी थी। कुछ को उठाकर तोडा तो मालूम हुआ कि वे कल की थी। कारण अन्दर से गीली थी। हमलोग कैम्प से काफी दूर निकल आये थे। अत मोख्तालोन ने मुझे कैम्प बताकर कहा कि यदि मै लौट जाऊ तो वह दो-तीन मील और आगे बढकर छानबीन कर आयगा। मैंने उसका प्रस्ताव मान लिया और भोटे को उसके साथ छोडकर अकेला लौट पडा। लगभग छ बजे कैम्प पर लौटा तो दाऊसाहब उपस्थित थे। रमजानखा को न देखकर पूछा तो मालूम हुआ कि वह झुगी मे पडा है। मैंने जाकर उससे कुशल पूछी तो बोला, "छोटा साहब चलने मे बडा पक्का है। ऐसी-ऐसी बीहड जगह टट्टू से उतरकर ले गया कि मेरा सिर चक्कर खा रहा है। जितनी ऐस्प्रिन पास मे थी खा चुका हूँ। अगर हुजूर मुझे कुछ गोलियाँ दे दे तो बडी मेहरबानी होगी।"

ऐस्प्रिन की गोलियाँ देकर मैंने दाऊसाहब से अमन के बारे मे पूछा तो उन्होने भी यही बताया कि जितने खाद मिले सब पुराने थे। यह भी बताया कि बडे विकट पहाड है। प्रायः टट्टू से उतरकर पैदल चलना पडा। मैंने कहा कि यह तो यही से मालूम पड रहा है। मैंने भी अपना हाल बताया और सलाह हुई कि कल फिर उसी ओर खोज की जाय।

सात बजे के पश्चात् मोख्तालोन ने लौटकर खबर दी कि आगे और भी खाद मिले हैं तथा छ अमन देख आया है। हमने यह तै किया कि-कल उसी स्थान से खोज की जाय, जहाँ से आज मै लौटा हूँ।

सन्ध्या समय जब रमजानखाँ का सिर का दर्द कम हुआ और हम लोगो के पास आकर बैठा तो उसने बताया कि एक जगह थोड़े से भरल

मिले थे। दूरबीन से देखने पर उनमे एक के भी सीग बडे नही दिखाई दिये। इसपर दाऊसाहव ने कहा कि तुमने मुझे क्यों नही बताये। रमजानखॉ ने उत्तर दिया, "बताता तो हुजूर मुझे उनके पास तक ले जाते। बहुत ऊँचाई पर थे। आपको समझाता तो भी आप नही मानते। मेरे सिर मे दर्द बहुत था, इसलिए नही कहा।" इसपर दाऊसाहव नाराज हो गये और उससे स्पष्ट कह दिया कि तुम शिकार बताने और खिलाने पर नौकर हो। तुम्हारा कर्त्तव्य है कि जो कुछ दिखाई दे, बता दो। यह हमारा काम है कि उनके पीछे पडकर मारे या छोड दे।

पाठको को यह बता देना आवश्यक है कि जैसी जमीन मे जानवर रहता है, प्रकृति उसे वैसा ही रग देती है, ताकि वह हिसको की दृष्टि मे यकायक न आ जाय। इसी प्रकार उस प्रदेश के रहनेवाले तथा वहाँ जानेवाले शिकारियो की आँखे भी उक्त प्रदेश के जानवरो को दूसरो की अपेक्षा कही शीघ्र देख लेती हैं। एक तो उन्हे उन जगहो का काफी ज्ञान होता है, जिससे वे उसी स्थान को ध्यान से देखते हैं, जहाँ जानवर होने की अधिक सम्भावना है। दूसरे, उन्हे जानवरो और उस भूमि मे पत्थर तथा अन्य वस्तुओ के रग का थोडा-सा अन्तर भी इतना स्पष्ट रहता है कि उनकी दृष्टि तुरन्त उस बेरग वस्तु पर पड जाती है और वे चौकन्ने होकर उसे ही एकटक देखने लगते हैं। यदि दूरवीन हुई तो उससे, अन्यथा जानवर के हिलने-डुलने की क्रिया को देखकर तुरन्त बता देते है कि अमुक जगह जानवर है। यह देखकर बाहर से गये हुए शिकारियो को वहावालो की दृष्टि पर आश्चर्य होता है कि जिस स्थान को वे दूरवीन से देख चुकते हैं उसी स्थान पर भोटे लोग या काश्मीरी शिकारी जानवर बता देते हैं, परन्तु इनमे आश्चर्य की कोई बात नही। हम जल्दी के कारण दूरवीन को तेजी से दौडाकर सब जगह पॉच मिनट में ही देख लेना चाहते हैं, जिससे बैठे हुए जानवरो की कान तथा सिर हिलाने की क्रिया को देख नही पाते। चाहिए तो यह कि जहाँ-जहाँ सम्भावना हो अथवा किसी वस्तु के जानवर होने का सन्देह हो जाय वहाँ देरतक दूरवीन से देखा जाय। लौट-लौटकर ऐसा करना चाहिए और एक जगह पर कम-से-कम आधा घण्टा रुकना चाहिए। यदि जल्दी की जाय तो पहाड़ पर

विना शिकारी की सहायता के देखनेवालो को प्राय· विमुख लौटना पडेगा। यह वात दूसरी है कि प्रात और सायकाल के समय जब जानवर चर रहे हो या चलते हो, उन्हे देख ले। मेरा मन्तव्य बैठे हुए जानवरो को देखने से है। इन्हीपर ठीकतौर से ढूका जा सकता है। चलते हुए पर पहाडो मे ढूकना असम्भव है। यह वात दूसरी है कि जानवर अपनी ही ओर चरते हुए आ रहे हो और आप अगोट वाँध ले।

ऊँचाई के कारण भोजन अच्छा नही लगा और नीद भी उचटती हुई आई।

रविवार, ६ अगस्त

आज लगभग सात वजे हम लोग तैयार हो गये। पास का भूमि छान डाली थी। अत हमने नौकरो को छ मील दक्षिण की ओर पडाव डालने को कहा और कल की जगह चल दिये। जहाँ मोख्तालीन अमन (न्यान) देख आया था, वहाँ पहुँचते-पहुंचते ग्यारह बज गये। न्यान तो न थे, परतु खाद की अधिकता थी तथा हाल ही के थे। इस ओर कही-कही पर घास भी थी। कुछ दूर और जाने के पश्चात् लगभग वारह बजे हमने भोजन किया और मोख्तालोन ने प्रस्ताव रक्खा कि मै यदि दो घन्टे विश्राम कर लूँ तो वह घूम-घामकर न्यान देख आए और खवर दे। ऊँचाई के कारण मेरा सिर चकरा रहा था। अतः मै सहमत हो गया। आज भी हम दक्षिण की ओर ही जा रहे थे। एक ऊँची जगह चट्टान पर मैं वैठ गया और मोख्तालोन चला गया। उसके चले जाने पर मन मे तरह-तरह के विचार उठने लगे। उधेड-बुन मे काफी देर हो गई। इतने मे लगभग चार वजे मोख्तालोन ने एक ऊँची जगह से इशारा दिया। उसे देखकर जी मे आया कि खूब गालियाँ सुनाऊँ और कैम्प की ओर चल दूँ, परन्तु मैंने अपने-आप को शात रक्खा। जव मै उसके पास पहुँचा तो वह वोला, "हुजूर, जल्दी चलिए। पाँच मील की दूरी पर न्यान की दो टोलियाँ देख आया हूँ। एक मे पाँच और दूसरी मे सात है। अभी दिन काफी है। खुदा ने चाहा तो शिकार हो जायगी।"

मैंने पूछा, "न्यान वैठे थे या चर रहे थे?"

मोख्तालोन वोला, "चर रहे थे। जल्दी कीजिये। इस तरह वहस

करने मे देर हो जायगी।" मैंने कहा कि बंदे को फुरसत नही है कि चरते हुए जानवरो के पीछे जाय। तुम देखकर यहाँ आये हो और अब हम वहाँ जायगे। तबतक क्या वे बैठे रहेगे ? अच्छा तो इसीमें है कि डेरे की तरफ चला जाय। हम लोग आठ-दस मील वैसे ही आ चुके हैं।

मोख्तालोन बोला, "क्या हुजूर भूल गये कि हमने नौकरो का डेरा छः मील दक्खिन की तरफ हटाकर लगाने को कहा था ? जहाँ हम बैठे हैं वहाँ से डेरा तीन मील होगा। इस तरह आप हिम्मत छोड देंगे तो शिकार नही होने की। जब ऐसा ही था तो इतना खर्च करके क्यो आये और क्यो तकलीफ उठा रहे हो ?" जब उसने डेरे को हटाने की बात का स्मरण दिलाया तो मैं चलने को राजी हो गया। चलते-चलते लगभग छः बजे हम उस स्थान पर पहुचे, जहाँ से मोख्तालोन न्यान देख आया था। बडी सावधानी से टट्टू से उतरकर बहुत देरतक मोख्तालोन ने दूरबीन से देखा, परन्तु न्यान दिखाई नही दिये। हम लोग पहाड के उपर दक्षिण की ओर जा रहे थे। मोख्तालोन ने उठकर, जहाँ न्यान चर रहे थे, वह जगह बताई। वास्तव में वहाँपर हाल के खाद थे और लेंडी भी पडी थी। जिस जगह हम खडे थे वहाँ से पहाड के दो भाग हो गये थे। पूर्व की ओरवाला हमारे बराबर था। मैं कह रहा कि पूर्व के पहाड पर चढा जाय, परन्तु मोख्तालोन ने पश्चिमवाले पर चढने को कहा। उसने बताया कि ऊँचे पहाड पर बकरियाँ चर रही थी। इसलिए उधर न्यान नही गये होंगे। थोडी दूर जाने के पश्चात् जिस पहाड के ऊपर हम दक्षिण की ओर जा रहे थे उसका अंत दिखाई दिया और सामने दक्षिण की ओर एक लम्बी-चौडी उपत्यका दिखाई दी। मैंने हताश होकर मोख्तालोन से कहा, "लो, यह पहाड भी पूरा हुआ। अब उतरकर डेरे की तरफ़ चलना ठीक होगा। अगर मेरा कहा मानकर दूसरे पहाड पर चलते तो कुछ देर और देखा जाता और मुमकिन था कि न्यान दिखाई देते।"

मोख्तालोन बोला, "इस वक्त सात बज रहे हैं। अभी यहाँ से चल देंगे तो भी हम दस बजे से पहले नही पहुँच सकते। ऐसी हालत मे पूरब-वाले पहाड पर जाना बेकार था। मुझे यकीन है कि न्यान हमारे दक्खिन-वाले मैदान मे या पूरबवाली घाटी में होंगे। (पूर्व की ओर एक पटक

की ओर सकेतकर) देखिये, वह बकरियाँ लौट रही है। मैंने हुजूर को बताया था कि उधर बकरियाँ हैं। हुजूर पच्छिम की तरफ से देखते-देखते दक्खिन की तरफ उस पत्थर तक पहुचे। मैं पूरब की तरफ की घाटी को देखते वही मिलूगा। उधर उतार है, इसलिए हुजूर को मेहनत नही करनी होगी। अगर मुझे आने मे देर हो तो फिक्र न करे।" फिर भोटे से बोला, "देखो, साहब को नजर मे रखना और टट्टू लेकर इतनी दूर रहना, जिससे तुम्हे न्यान भी न देखे और साहब भी दिखाई देते रहे।" भोटा पहले भी शिकारियो के साथ रह चुका था, अत वह शिकारियो के दाव को खूब जानता था। उसने सिर हिलाकर यह बता दिया कि अपने कर्त्तव्य को वह खूब समझता है।

मोख्तालोन दूरबीन लेकर पूर्व की ओर और मैं पश्चिम की ओर चल दिया। मेरी ओर न्यान के दिखाई पडने की सम्भावना बहुत कम थी। कारण, उस ओर चुशल से डुगटीरप का मार्ग था। कई जगह वजीरसाहब के काम मे जाते-आते भोटे दिखाई दे रहे थे। लगभग बीस मिनट मे धीरे-धीरे देखता हुआ पूर्व-निर्धारित पत्थर के पास पहुँच गया। जब-जब मैं लौटकर पीछे देखता था, भोटा टट्टू लिए बराबर दिखाई देता था, जिससे मैं समझ गया कि वह शिकार के मामले मे चतुर है। मुझे लगभग दो फर्लांग चलना पडा होगा। उतराई थी तो भी दम फूल गया था। पत्थर की आड मे बैठकर सिगरेट पीता रहा। मुझे इस ओर न्यान दिखाई देने की कोई आशा न थी। इसलिए सतर्क भी नही था। थोडा दिन रह गया था, अतः सोच रहा था कि मोख्तालोन लौट आवे तो पडाव की ओर प्रस्थान किया जाय। एक तो मैं सतर्क न था, दूसरे मेरे कान कुछ बहरे हैं। तीसरे, सिगरेट पीता हुआ विचारो मे मग्न था। इसलिए मुझे पता तब पडा जब मोख्तालोन ने पीछे से आकर मेरे कन्धे पर हाथ रक्खा और बोला, "हुजूर, न्यान तो देख आया हूँ, लेकिन मेरा कलेजा फटा जा रहा है।" इतना कहकर वह बैठ गया। मै समझ गया कि बेचारा काफी ऊँचा चढकर आया है। सो बोल नही पा रहा है। कुछ ही देर मे हमारे दक्षिण-पूर्व की ओर ऊँचे पहाड की पटक (दर्रा) को बताते हुए उसने कहा, "आपको न्यान नही दिखाई देते ?" मैने देखकर

कहा, "वहाँ तो बकरियाँ चरती हुई उस पार से इस ओर आ रही हैं।" बोला, "नही, उनके नीचे देखिये। जो दो झुण्ड मैने देखे थे, वही इकट्ठे हो गये है। और देखिये, वे बैठे हैं। मै भी देखते हुए जब आधा पहाड उतर गया तब एकाएक दिखाई दिये। इसीसे इतना चढकर चक्कर लगाते हुए आना पडा।" यह कहकर उसने मुझे दूरबीन दी। मैंने दूरबीन से उन्हे तुरन्त देख लिया और कहा, "बैठे तो है, लेकिन बकरियो को देख रहे हैं और चौकन्ने हैं। बकरियाँ भी वहीपर आ रही हैं, जहाँ न्यान बैठे हैं। अब देखना यह है कि वे उठकर किधर जाते हैं। तबतक हमे यही पर बैठकर उनको देखना ठीक होगा। अगर वे हमारी बाई ओर के तग सेहे से चढे तो हमे उनका रास्ता बाँधना सहल हो जायगा और बन्दूक भी पास से चलेगी। दूसरी दिशा मे भागे तो उठकर पडाव पर चलना ठीक होगा। इस समय दिन थोडा है। इसलिए पीछा भी नही कर सकते।"

मोख्तालोन बोला, "अल्लाह इन्साफ करने वाला है। क्या अपने हाल पर रहम न करेगा! हुजूर इतनी दूर से आये और तकलीफ उठा रहे हैं तो कामयाबी जरूरी होगी।" मुझे उसकी प्रार्थना पर हँसी आई। मैंने कहा, "क्या दूसरे की जान के लिए अल्लाह से मदद माँगी जाती है! इन न्यान बेचारो ने किसीका क्या बिगाडा है, जो अपनी प्रार्थना सुन अल्लाह इन्हे मरवा देगा!"

मोख्तालोन बोला, "जब एक बादशाह दूसरे पर चढाई करता था तो वह भी खुदा से मिन्नत करता था कि हमारी फतह हो। जिसपर चढाई करते थे उसने खुदा का क्या बिगाडा था?" बाते हो रही थी, परन्तु मैं दूरबीन से न्यान को बराबर देख रहा था। वे बकरियो को देखकर अब खड़े हो गये और गरदने ऊँची करके भागने की सोचने लगे। मैंने मोख्तालोन को बताकर कहा, "देखो, वे खडे हो गये और भागना ही चाहते हैं।" मोख्तालोन देख चुका था। बोला, "अगर हमारे बाएं को तग सेहे में भागे तो हुजूर मेहरबानी करके मेरे पीछे-पीछे दौडते आइये और खुदा के लिए न तो रुकिये और न कोई सवाल कीजिये। आपके पास आने के पहले मैं उधर से ही उतरा था और न्यान को देखकर मैंने सब

अन्दाज लगा लिया था कि बन्दूक कहाँ से चलेगी ? मुझे कहाँ जाना है, वह सब याद है।"

मैंने कहा, "अच्छी बात है।" मोख्तालोन बोला, "तो हुजूर, अपनी बन्दूक और दूरबीन भी दे दीजिये ताकि दौडने मे और पहाड उतरने मे आसानी रहे।" मैंने उसे बन्दूक और दूरबीन दे दी। वह बैठे-बैठे मन-ही-मन ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था। न्यान अन्य जानवरो की भाँति कभी दक्षिण कभी पश्चिम, तो कभी पूर्व की ओर थोडे वढते और रुक जाते थे। वे यही ठीक नही कर पा रहे थे कि किधर को भागा जाय। हमसे लगभग एक मील होगे। उधर मोख्तालोन मिन्नते कर रहा था, इधर मै आँख गडाये यह देख रहा था कि वे किधर भागते है। इतने मे एक ने तग सेही की ओर चलना आरम्भ किया। दूसरा चला और इस प्रकार कतार बाँधकर सब-के-सब चलने लगे। यह देखकर मोख्तालोन बोला, "उठिये, दौडकर रास्ता बाँध ले।" मैंने कहा, "अभी कुछ और ठहरो। मुमकिन है, वे विचार वदल दे। जबतक दुडकी नही लगाते, हमे यही से देखना ठीक होगा। हम यहाँ से उठ गये तो उन्हे देख नही पायँगे। इसलिए निश्चित जगह तक जाना जरूरी हो जायगा। वहाँपर जाकर न्यान को न देखेंगे तो बेकार की मेहनत होगी।" मोख्तालोन मेरी बात मान गया। न्यान लगभग ५० गज चलने के बाद धीमी दुडकी लगाने लगे। इतना देखते ही मोख्तोलोन भी उठकर दौडा। मै भी पीछे-पीछे चला। उत्तर की ओर हमलोग लगभग सौ गज गये होगे। मोख्तालोन एक जगह रुका और बोला, "मेरे पीछे-पीछे लुढकते आइये। गिरेंगे भी तो धूल मे लगने की नही। हवा भी हमारी तरफ चल रही है। बस, थोडी-सी हिम्मत कर जाइये।" इतना कहकर वह नीचे की ओर सेहे मे उतर पडा। मेरा तो दम वैसे ही काफी फूल चुका था, परन्तु न्यान मारने की धुन जो लगी थी। मै भी पीछे-पीछे चल दिया। हमलोग लगभग एक हजार फुट उतरे तो क्या, लुढके होगे। मुझे तो याद ही न रहा कि कैसे पहुँचा। अन्त मे एक वडे पत्थर के सहारे जाकर मोख्तालोन रुका। जब उसने मेरा हाथ पकडकर कहा कि बैठ जाइये तब होश आया। साँस फूलने के मारे बुरा हाल देखकर मोख्तालोन ने कहा, "हुजूर, औंधे होकर दम लीजिये। मै

न्यान को देखता हूँ।" उसके कहने के पूर्व ही मैंने वह क्रिया प्रारम्भ कर दी थी। वह कह रहा था, "अहा, न्यान इधर ही आ रहे हैं। हुजूर, खूब दम ले लीजिये। अभी बहुत देर मे पहुँचेगे। धीरे-धीरे चल रहे हैं और कतार बाधे है। इसलिए उनके दूसरी तरफ जाने का डर नही है। सबसे आसान रास्ता भी यही है जो हमारे सामने से जा रहा है। हवा भी बिल्कुल ठीक चल रही है। अगर पन्द्रह मिनट और ऐसी ही रही तो न्यान पचास गज से निकलेगे।" उधर मोख्तालोन न्यान की गति-विधि बता रहा था, इधर मेरा साँस भी ठीक होता जा रहा था। दस मिनट के पश्चात् मैं भी बैठ गया और मोख्तालोन से बोला, "मुझे भी तो देखने दो कि न्यान कहाँपर हैं और सीग कैसे हैं?" मोख्तालोन ने दूरबीन देकर हाथ से बताया और कहा, "बहुत होशियारी से देखिये। कही ऐसा न हो कि वे देख ले और काम बिगड जाय।" मैंने जब देखा तो चित्त प्रसन्न हो गया। सब थकान दूर हो गई। बारह न्यान थे और लगभग सभी अच्छे सीगवाले थे। सिर को नीचे किये धीरे-धीरे हमारी ओर उपत्यका मे चले आ रहे थे। हमसे लगभग तीन सौ गज होगे और कोई बाधा न आई तो पाँच मिनट मे हमारे सामने आ जायगे। मैंने दूरबीन मोख्तालोन को देकर बन्दूक सम्हाली और कहा, "तुम दूरबीन लगाये रहो। जब न्यान सामने आएँ तो बस इतना कहना कि आगे से फला नम्बर मे बन्दूक मारो। मैं उसी को मारूँगा। तुम्हारे पास दूरबीन है। खूब अच्छी तरह देखकर जो सबसे बडा हो उसे बताना।" मोख्तालोन ने सिर हिलाकर दूरबीन ले ली। मै भी बन्दूक की नली को पत्थर पर से निकालकर तैयार होकर बैठ गया। प्रतीक्षा के पाँच मिनट पाँच घण्टे के समान मालूम दिये। इतने मे पत्थर की आड से एक सौ पचास गज पर न्यान निकला। मैंने मोख्तालोन की पीठ पर हाथ से इशारा किया कि न्यान दिखाई देने लगे। उसने धीरे से कहा, "नम्बर दो।" तबतक छ सात न्यान सामने आ चुके थे। भली प्रकार शिस्त लगाकर मैंने बन्दूक दाग दी। धडाके के साथ ही न्यान छट-पटाने लगा। न्यान को गिरा देखकर मोख्तालोन बोला, "शाबाश! अब सबसे आगेवाले मे मारिये।" हमलोग न्यान से पश्चिम की ओर थे। वे उत्तर-पश्चिम की ओर भाग रहे थे। थोडे-से भागकर हमसे उत्तर की

ओर दो सौ गज पर रुके और मैंने दूसरा फैर किया। इस वार भी न्यान गिर गया और वाकी के एकदम मुडकर उत्तर की ओर के ऊँचे पहाड पर चढने लगे। दूसरे को भी गिरा देखकर मोख्तालोन ने दूरवीन रख दी और पहले न्यान की ओर झपटा और मुझसे कहता गया, "अव आपके जी मे आवे, उसीपर फैर कीजिये।" शेप दस न्यान सामनेवाले पहाड पर चढ रहे थे। लगभग चार सौ गज की दूरी पर जाकर रुके और मैंने तीसरा फैर किया, जिससे एक न्यान की टाँग टूट गई। वह गिरा, परन्तु तुरन्त उठकर लगडाता हुआ सवके साथ हो गया। मै दूरवीन से यह देख रहा था कि टाँग कहाँ से टूटी है। यदि जड से टूटी होगी तो अवश्य कही वैठ जायगा। न्यान वरावर पहाड चढ रहे थे और मै भी देख चुका था कि पिछली वाँई टाँग ऊपर के जोड से छ इच नीचे टूटी है। अत उसके गिरने की सम्भावना नही है। इतने मे दूसरे न्यान की ओर सकेत करके मोख्तालोन चिल्लाया, "देखिये, वह दूसरा न्यान जा रहा है। मारिये वन्दूक, नही तो हाथ न आयगा।" मुडकर वाँई ओर देखा तो वास्तव मे न्यान खडा होकर धीरे-धीरे, जहाँ हमारे टट्टू थे, उधर चढ रहा था। जव वह रुका तो मैंने फैर किया, परन्तु गोली नीचे उतरकर लगी। धडाके तथा धूल उडने के कारण न्यान कुछ तेज हो गया। आधा पहाड चढकर जव पुन ठहरा तो फिर फैर किया, परन्तु गोली इस वार भी न लगी। इस धडाके से पुन चल पडा। चोटी से पचास गज नीचे फिर रुका। इस समय वह मुझसे पाँच या छ सौ गज होगा, परन्तु इस आशा से कि सम्भव है, लग जाय पुन· फैर किया, परन्तु गोली फिर भी नही लगी और न्यान पहाड पर चढ गया। मोख्तालोन भी वन्दूक चलाने लगा। इतने मे देखता क्या हूँ कि पहला न्यान लडखडाता हुआ मोख्तालोन से तीस गज पर चल रहा है। मोख्तालोन दौडा और फैर किया। वदे की निराशा का हिसाव न रहा। सोचा कि यह न्यान भी हाथ से निकला जाता है। वैठे-वैठे मोख्तालोन को गाली दे रहा था कि मूर्ख दौडता क्यो है ? सुस्ताकर वन्दूक मारेगा तो लग जायगी। उसने दूसरा फैर किया। वह भी वच गया, परन्तु न्यान वहुत घायल था। अत चलता तो था, परन्तु गिर-गिर पडता था।

अबकी बार मोख्तालोन दौडकर बीस गज पर पहुँचकर बैठ गया और तुरन्त फैर नही किया। थोडा सुस्ताकर जबतक न्यान पचास गज गया होगा, उसने फैर किया और उसे गिरा लिया। जब वह दौडकर पास पहुँचा तो सन्तोष हुआ कि चलो, तीन न्यान मे से एक तो मिल गया।

जबतक मै पास पहुँचा, हमारा भोटा भी दोनो टट्टू लेकर आ गया। न्यान के सीग नापे तो चालीस इच से कुछ लम्बे थे। मोख्तालोन ने कहा, "मैंने तो पहले ही कह दिया था कि न्यान के सीग अगर घूम-कर आँख की सीध मे आ जायँ तो चालीस इच के होते हैं। जितने बाहर निकले उतने ही चालीस इच से ज्यादा समझिये। फोटो लेना हो तो जल्दी लीजिये। हमे काफी दूर जाना है।"

मोख्तालोन को न्यान के साथ बिठाकर फोटो लेने पर उसने बहुत आग्रह किया कि मेरा भी फोटो लिया जाय। अत' उसे कैमरे का हिसाब समझाकर मेरा भी फोटो लिया गया। अब यह सलाह हुई कि न्यान का सिर साथ में लिया जाय और शेष धड को कल सवेरे भोटो से मँगवा लिया जाय। जब हम चलने को तैयार हुए तो देखा कि टट्टू गायब हैं। दिन डूब चुका था और हम भी काफी थक चुके थे। इसपर हमें दस-बारह मील डेरे पर पहुँचना था। हमारे क्रोध का ठिकाना न रहा। मोख्तालोन भोटे को गाली देते हुए चिल्लाया, "सुअर कही का! यहाँ हमारा तमाशा देखता रहा और टट्टू छोड दिये। अब साहब कैसे चलेगे?" भोटा बोला, "मैं सिर उठाये लेता हूँ। टट्टू रास्ते में मिल जायगे, लेकिन जल्दी करो।" हमारे पास दूसरा उपाय ही क्या था? बोझ उठाये भोटा बहुत तेज चल रहा था, यहाँतक कि हम लोग पिछड रहे थे। केवल एक बात अच्छी थी कि तीन मील तक उतार था। जिस पहाड पर हम प्रारम्भ में बैठे थे उसीको घेरकर जाना था। लगभग दो मील जाने पर अँधेरा पडते-पडते टट्टू दिखाई दिये। भोटे ने न्यान का सिर रख दिया और दौडकर टट्टू पकड लाया। अब हमे थकावट तथा सिर का दर्द मालूम होने लगा। ऐस्प्रीन की गोली खाई और बातें भी होने लगी। मोख्तालोन और हमारी सलाह हुई कि कल दोनो घायल

न्यान ढूंढे जायँ। मैंने कहा कि पिछली टॉग टूटे हुए न्यान को ढूँढना बेकार होगा। वह बहुत दूर निकल गया होगा, लेकिन दूसरे के बीचोबीच गोली लगी है। सो वह कही बैठकर मर गया होगा।

काफी अन्धेरा हो गया था और ठण्ड-सी हो चली थी। हमे न आते देखकर दाऊसाहब तथा दूसरो को आशका होने लगी कि हम लोग दूर निकल गये और रास्ता भूल गये हैं। यह भी आशका होती थी कि कही तिब्बत की सीमा मे जाने से वहाँ की पुलिस ने पकड न लिया हो। उन लोगो ने ऊँची जगह पर कई जगह आग जलाई, ताकि हम देख ले। साथ ही सबको इकट्ठे होकर चिल्लाने की आज्ञा दी, ताकि हमे आहट मिल जाय।

हवा उत्तर से दक्षिण को अर्थात् कैम्प से हमारी ओर को चल रही थी। इसलिए जब कैम्प एक मील रहा तो आग जलती दिखाई दी। वे लोग बराबर चिल्लाते रहे। लगभग बारह बजे हम कैम्प पर पहुँचे तो देखा सब जाग रहे थे और बडे चितित थे। सक्षेप मे सब वृत्तात बताया। न्यान को देखकर दाऊसाहब बडे खुश हुए। पूछने पर बोले, "आज भी कुछ दिखाई नही दिया और न आशा ही है।"

इतने मे हबीबा खाना लेकर आ गया, परन्तु मै थका था और थोडा सिर मे दर्द था। अतः इन्कार कर दिया। यह देखकर दाऊसाहब ने कहा, "थोडी-सी ब्राण्डी पी लीजिये, जिससे थकान दूर होगी और भूख भी लगेगी।" मै नाही करता ही रहा, परन्तु वे गिलास मे ब्राण्डी ले आये। मैंने बहुत समझाया कि इतनी ऊँचाई पर मदिरा सिर-दर्द को बढा देगी, परन्तु वे न माने। एक पेग ब्राण्डी पी, जिससे थोडी थकान दूर हुई और भोजन की इच्छा होने लगी। दाऊसाहब ने आधा पेग और लेने का आग्रह किया, परन्तु मैंने न लिया। नशे के कारण भोजन मे स्वाद न आनेपर भी थोडा-सा खा लिया। रातभर सिर मे दर्द रहा और करवटे बदलते-बदलते सवेरा हो गया। अपने आपको कोसता रहा कि क्यो शराब पीने की मूर्खता की।

सोमवार, ७ अगस्त

उजेला हो चला था। रात को नीद न आने के कारण सिर भारी

था। वाहर मोख्तालोन किसीपर नाराज हो रहा था, परन्तु वह क्या कह रहा था, मेरी समझ मे न आ रहा था। थोडी देर मे चाय लेकर मोख्तालोन आया, साथ मे एक भोटा भी था, जो कल हमारे साथ टट्टू लेकर आया था। चाय रखकर मोख्तालोन बोला, "इसने दूसरे अमन को पडा देखकर भी हमे कुछ न बताया। अगर चाहता तो खुद पकड लेता या हमे इशारा कर सकता था। हमारे पास आकर भी कुछ न कहा। अब मैंने इसे अमन को ढूँढने के लिए चलने को कहा तो कहता है कि जहाँपर खडा था, उससे पचास गज पर घायल अमन गिर पडा था। भोटा मुस्करा रहा था और सिर हिलाकर मोख्तालोन की वात की पुष्टि कर रहा था। मोख्तालोन ने कहा, "हुजूर, जल्दी तैयार हो जायँ, ताकि दूसरा अमन, जो भोटे ने देखा है, वह तो मिल ही जाय। साथ ही टाँग टूटा हुआ तीसरा अमन भी ढूँढेगे।" मेरी दशा खराव थी। सब हाल वताकर मैंने नाही कर दी और कहा कि तुम्ही जाकर उसे ढूँढ लाओ। इतने मे दाऊसाहव और रमजानखाँ आ गये। रमजानखाँ बोला, "हुजूर इजाजत दे तो मैं साहव को लेकर आज टटाटोर चला जाऊँ। उधर न्यान की खबर मिली है। दूसरे उस तरफ पहाड़ इतने विकट नहीं हैं। यहाँपर तो साहब चला-चलाकर मार लेगा। कल चार गोली ऐस्प्रीन की खानी पडी। हमारा साहब आदमी नही, भूत है। इन्हे न ऊँचाई का हिसाव रहता है और न थकान मालूम होती हे। काश मै आपके साथ होता और मोख्तालोन मेरे साहव के साथ।"

मैंने कहा, "जहाँ शिकार मिले वही पडाव डालना ठीक होगा। आज तो मुझे यहाँ रहना ही होगा, क्योकि घायल न्यान को ढूँढने मोख्तालोन जा रहा है।" रमजानखाँ ने अनुरोधपूर्वक कहा, "हुजूर, फेरसी न जायँ। उस जगह जाने मे काफी देर लगेगी और चागचेनमो जैसी तकलीफ होगी। आप तो पुगा तथा न्या होते हुए हिमिस पहुँचे। हम भी वही मिल जायेंगे। इस रास्ते मे आपको अमन, तिव्वती चिकारे, भरल तथा शापू मिल जायगे।" मैंने प्रस्ताव रक्खा कि ता० २० के दिन मार्मलंग में मिल जायगे। यदि किसीको देर हुई तो २१ तारीख के दिन अवश्य मिला जाय। इसपर भी किसीको देर हो तो आगे जानेवाला लेह मे

प्रतीक्षा करे ।

मोख्तालोन कलवाले न्यान को ढूँढने पहले ही चला गया था । लगभग आठ बजे दाऊसाहब का काफिला भी तैयार हो गया । चलते-चलते दाऊसाहब बोले, "सावधानी से रहिये । कुछ खाया भी कीजिये । इस प्रकार तो आप बहुत निर्बल हो जायगे ।" इनके चले जाने पर पडाव मे सन्नाटा छा गया । मैंने कलवाले न्यान का चमडा निकलवाया ।

आज ठड काफी थी । दिनभर बिस्तरे पर पडा-पडा करबटे बदलता रहा ।

लगभग आठ बजे सन्ध्या समय मोख्तालोन लौटा । उसने बताया कि जिस जगह दूसरा अमन बैठा था, वहाँ सेरभर खून पडा था, परन्तु वह वहाँ से उठकर पडाव की ओर चल दिया । कुछ दूर तक खून की बूदे मिली, परन्तु फिर बन्द हो गई । उसके पिछले पैर भी भूमि पर घिसटते थे । अत. वह बहुत धीरे-धीरे इधर की ओर आया है । तीसरे न्यान को वह देखने नही जा पाया । यह सब सुनकर यह तै हुआ कि कल यहीं ठहरा जाय और न्यान को पुन ढूँढा जाय । मोख्तालोन का अनुमान था कि उक्त न्यान पानी की खोज मे चल पडा है और बहुत सभव है कि कही पानी के पास मरा हुआ मिले ।

आज रात को नीद नही आई ।

रविवार, ८ अगस्त

आज सवेरे पाँच बजे मोख्तालोन न्यान ढूँढने के लिए निकल गया । चाय पीने के पश्चात् तम्बू मे पडा-पडा मैं देहातियो को देख रहा था । कल वजीरसाहब डुँगटीरप आनेवाले थे, जहाँ हमे भी जाना था । बडी हलचल थी । भोटो ने बताया कि वे डुँगटीरप तक ले जाने को तैयार हैं, वह भी यदि हम कल चल दिये तो, अन्यथा नही । इसके आगे के लिए हमे वजीरसाहब से आज्ञा लेनी होगी । पचास मील तक के टट्टू पकड लिये गये थे । हमे तो ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो दिल्ली-दरबार होने वाला है । जिसे पूछो, वह वजीरसाहब के लिए किसी-न-किसी काम से जा, या आ रहा था ।

भोजन के समय गफ्फारा बोला, "हुजूर, तीन दिन से कुछ नही खा रहे हैं । इसलिए आज मैंने अँग्रेजी खाना—सूप, चाय वगैरा पकाये हैं । अगर

आप अच्छी तरह खाना नही खायगे तो कमजोर हो जायगे और शिकार के लिए मेहनत कैसे कर सकेंगे ? जो आपको रुचे, उसीका हुक्म दीजिये। मैं बनाकर हाजिर करूँगा।"

मैने कहा, "मुझे कोई चीज जायकेदार नही लगती, मीठे मे कुछ स्वाद आता है। इसलिए एक रोटी चाय के साथ खा लेता हू। यही काफी है। मै बच्चा तो हूँ नही, जो मुझे समझाओ। असल मे बात यह है कि यह जगह ऊँचाई पर है, इसीसे सब व्याधियाँ हैं। कल नीचे उतरने पर सब ठीक हो जायगा। वैसे भी हमे यहाँ से कल चल देना होगा, नही तो सामान के लिए कोई जानवर न मिलेगा।"

हमने भोटो को कल डुगटीरप पहुँचाने के लिए तैयार कर लिया। सन्ध्या समय मोख्तालोन खाली हाथ लौटा और बताया कि न्यान का कही भी पता नही चला। मालूम होता है कि उसे भेडियो ने खा लिया, अन्यथा गिद्ध या कौवे उसे खाते हुए दिखाई देते। कल चल देने के लिए मोख्तालोन भी सहमत हो गया। रात को नीद बहुत कम आई।

: १९ :
एक मज़ेदार अनुभव

बुधवार, ९ अगस्त

सवेरे चाय लेकर जब मोख्तालोन आया तो कहने लगा, "हुजूर, यहाँ न्यान काफी हैं। एक-दो दिन और ठहर जाइये। मुमकिन है कि घायल न्यान मिल जाय या दूसरा मार लीजिये। एक खत हबीबा के साथ वजीर-साहब के नाम लिख दीजिये। वे हमारे लिए टट्टू आदि का इतजाम करने का हुक्म दे देगे।"

मैने कहा, "एक तो तीन दिन से नीद नही आ रही है। दूसरे वजीर-साहब से मेरी ज्यादा जान-पहचान नही है। ऐसी हालत मे उन्हे लिखना पसन्द नही करता। अगर उन्होंने इन्तजाम नही किया तो आठ दिन के लिए यानी जबतक इधर के टट्टू वजीरसाहब नही छोडते तबतक हम

यहाँ से हिल न सकेगे।" अत सामान बाँधा जाने लगा और लगभग सात बजे हमलोग चल पडे। प्रारम्भ मे हमे थोडी-थोडी चढाई मिली। जहाँसे सिंधु की उपत्यका मे उतार प्रारम्भ होता था, वहाँ एक मानी बनी थी, जिसपर कई न्यान के सिर पडे थे, जिससे पता चलता था कि इस प्रदेश मे काफी न्यान हैं। इस ओर पत्थरो के अतिरिक्त मरे जानवरो के सिर भी मानी पर रख दिये जाते हैं। न्यानो के कुछ सिर अच्छे थे। थोड़े भरल के सिर भी थे तथा याक के तो कई थे। प्रथानुसार 'लो सलो हर गलो' का नारा लगाया गया और थोडा विश्राम करके उपत्यका मे उतर पड़े। कई जगह भोटे आते-जाते मिले। कोई वजीरसाहब से विनती करने गया था तो कोई खाद्य पदार्थ देकर आ रहा था। इस जन-शून्य प्रदेश मे इतने बडे हाकिम का सदल-बल आना एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। लगभग तीन बजे हमलोग डुंगटीरप पहुँचे। उस पार वजीरसाहब का अधिकाश सामान पडा था, जो जख द्वारा इस पार लाया जा रहा था। हमारा सामान उस पार उतारने मे कोई कठिनाई नही आई। कारण, उधर जख खाली जा रहे थे। जख हमने यहाँ पहली बार देखे। कई भेड-बकरी की समूची खालो मे फूंक से हवा भरकर रस्सियो से उन्हे इकट्ठा बाँध लिया जाता है। इन्हीपर बैठकर इस ओर नदी पार करते है। यदि आपके नीचे की खाल की हवा निकल गई तो ठण्डे पानी मे एक फुट उतरे समझिये। जख चलता रहता है और जिस खाल की हवा निकली हो उसमे फूक भी भरते रहते हैं। खेने के लिए पतवार की जगह हाथ से काम लिया जाता है।

जब मैंने वहाँ पहुँचकर वजीरसाहब के पास सन्देशा भेजा तो तुरन्त बुला लिया गया। इन्हे भी लगभग सात सप्ताह से बाहर का कोई व्यक्ति नही मिला था। इनके साथ एक नायब तहसीलदार तथा एक डाक्टर थे। काश्मीर राज्य के एक बकरीवाने को तिब्बत के बकरीवालो ने लगभग चार-पाँच वर्ष पूर्व मार डाला था। चार वर्ष की लिखा-पढी के बाद अब यह तय हुआ था कि लद्दाख के वजीर (गवर्नर) गर्तोक (तिब्बत) के जोग (गवर्नर) से मिले और उनके समक्ष सब प्रमाण रखकर हत्यारो को माँगे। दोनो गवर्नर दल-बल सहित दमचौक स्थान पर अपनी-अपनी सीमा मे

पाँच सप्ताह तक डटे रहे। कई बार एक-दूसरे से मिले, परन्तु फल कुछ न निकला। गर्तोक के गवर्नर कहते थे कि जितने भी साक्षी लद्दाखवालो ने पेश किये हैं, उन्हे उनकी सच्चाई की परीक्षा के लिए गर्तोकवालो को सौप दिया जाय। जब साक्षियो को उक्त प्रस्ताव बताया गया तो कोई भी राजी न हुआ। बात यह थी कि तिब्बत में साक्षियो की सच्चाई की परीक्षा कई प्रकार की ताडनाएँ देकर की जाती है। सबकुछ सहन करके साक्षी यदि अपनी बात पर दृढ रहे तो उसे सच्चा माना जाता है। तिब्बत के राज्य-कर्मचारी व्यवसाय भी करते हैं। दो पक्ष मे निर्णय देते समय जो दण्ड होता है, वह जोग का होता है। अपील की दशा मे दण्ड का द्रव्य तथा पत्रादि लासा भेज दिये जाते है। जब मैंने साक्षियो के पिटने की बात सुनी तो भारतवर्ष की कचहरियो के गवाह, जो पैसे लेकर झूठी साक्षी देते हैं, याद आ गये। वजीरसाहब सात सप्ताह के बाद विफल लौट रहे थे और अपनी विवशता का वृत्तान्त लिखकर भेजने की कहते थे। भारतवर्ष के कानून मे साक्षियो को पीटना मना है तो तिब्बत मे पीटकर सच्चाई की परीक्षा करना न्याय-सगत है। उनके पास 'ट्रिब्यून' की गत दो सप्ताह की कई प्रतियाँ थी। जब मैंने कुछ माँगी तो उन्होने सहर्ष दे दी। लगभग सात बजे चाय पी। वजीरसाहब ने बहुत आग्रह किया कि मै भोजन उन्हीके साथ करूँ और रात भी उन्हीके कैम्प मे बिताऊँ। भोजन करने के लिए तो मैं राजी हो गया, परन्तु नदी पार जाकर अपने तम्बू मे सोने के लिए मै कहता रहा। मैंने वजीरसाहब को बता दिया कि सवेरे पानी ठण्डा होगा। ऐसे में बिचारे भोटो को पानी मे उतारना ठीक नही है। जब मैंने सामान के लिए टट्टू आदि की कठिनाई बताई तो उन्होने एक गिरदावर को बुलाकर आज्ञा दी कि वह मेरे साथ रहे और जबतक मैं लद्दाख मे हूँ, सब प्रबन्ध करे। इस कृपा के लिए मैंने वजीरसाहब को बहुत धन्यवाद दिया और विनती की कि उनके आगमन के कारण ही टट्टू आदि नही मिल रहे हैं। केवल दो पडाव तक अर्थात् पुगा तक का प्रबन्ध कर दे। आगे कठिनाई न होगी। दुनिया-भर की बातें और भोजन करते लगभग बारह बज गये। तब मैंने वजीरसाहब से विदा ली। जब वजीर साहब मुझे पहुँचाने के लिए जल तक आये तो लोगो पर मेरा

रौब जम गया। मेरे पहुँचने के पूर्व ही गिरदावर टट्टू आदि लेकर मेरे डेरे पर पहुँच गया था। शिकारी तथा नौकर सब समझ चुके थे।

पिछले पडाव की अपेक्षा यहाँ कुछ गरम था। रात को कुछ नीद भी आई।

: २० :

तिब्बती चिकारे हाथ न आये

गुरुवार, १० अगस्त

सवेरे चाय लेकर मोख्तालोन आया और बोला, "हुजूर, आपने यह गिरदावर की आफ़त कहाँ से मोल ले ली ? हमको चलते-चलने शिकार खेलना है और यह साथ मे होगा तो रिपोर्ट कर देगा। दूसरे इसे खाना भी खिलाना होगा।" मोख्तालोन की बात ठीक थी। मैंने एक पत्र वजीर-साहब के नाम लिखा कि हमे गिरदावर की कोई आवश्यकता नही है। इसने सब प्रबन्ध कर ही दिया है। उत्तर मिला कि एक चपरासी अगले पडाव अर्थात् नीमू तक जायगा।

हम लोग यहाँ से सात बजे चल दिये। सिन्धु के दक्षिणी तट पर चल रहे थे। उपत्यका अच्छी चौडी तथा भूमि समतल होने के कारण जल धीरे-धीरे बह रहा था। नदी के बीच तथा किनारे पर कई जगह कियाग (जगली घोडे) चरते हुए दिखाई दिये। एक जगह न्यान की मादा भी दिखाई दी। पाँच-छः मील चलने के पश्चात् हमे हनले नदी पार करनी पडी, परन्तु विशेष कठिनाई नही हुई। पानी तीन फुट से ज्यादा न था। हमलोग पन्द्रह मील चलकर एक बजे के लगभग नीमू के सामने पहुँचे। नीमू नदी से चार मील उत्तर की ओर एक उपत्यका मे स्थित है। दक्षिण की ओर यात्रियो के ठहरने के लिए एक सराय भी बनी है। लेह और हनले का मार्ग यही होकर जाता है। जब हम सराय के पास पहुँचे तो हमे कई नीमूवाले मिले। उनसे पूछने पर मालूम हुआ कि यहाँ से तीन मील दक्षिण की ओर हनले के मार्ग पर एक पुराना दुर्ग है, जिसे 'खर्गोक' कहते हैं। इसी दुर्ग के आस-पास तिब्वती चिकारे मिलेंगे। इन्हें

इधर 'गोवा' कहते हैं। सराय नदी मे थी। अतः हमने किनारे पर ऊँची जगह डेरा लगाया, ताकि तम्बू मे बैठे-बैठे दूरबीन से आस-पास देख सकें। चपरासी को हमने विदा कर दिया। कुछ विश्राम करने के पश्चात् चार बजे हम लोग खर्गोक के पास पहुँचे। एक अच्छी चौडी तथा सम-तल उपत्यका के बीच मे छोटी-सी पहाडी पर कच्ची दावारे खडी हैं। यहाँ से हनले को मार्ग गया है। नाले के किनारे कुछ घास तथा पौधे भी हैं, परन्तु उपत्यका मे ककर तक नही हैं। वहाँ पहुँचते ही हमे पाँच गोवा दिखाई दिये। देखने मे भारत के छिकरो जैसे ही हैं। बाल बडे होने के कारण कुछ मोटे-से मालूम देते हैं तथा इनके सीग भी कुछ पीछे की ओर विशेष झुके होते हैं। छूकने के लिए कोई आड न थी। जब हम लगभग चार सौ गज पर पहुँचे तो वे चौकन्ने हो गये। यही उत्तम समझा कि नीचे बैठकर बन्दूक चलाई जाय। कुछ सुस्ताकर मैंने फैर करना प्रारम्भ किया और आठ गोलियाँ चलाई, परन्तु एक भी न लगी। ज्यो-ज्यो बचती गई, जिद्द मे और चलाता गया। जब गोवा भागकर एक टोरिया पार कर गये तो हमने पीछा किया। जाकर देखा तो वे दो सौ गज की दूरी पर खडे थे, परन्तु सूर्य आँखो में पड रहा था। तीन फैर यहाँपर भी किये, परन्तु एक भी गोली न लगी। हताश होकर सूर्यास्त से पूर्व वापस आ गये।

शुक्रवार, ११ अगस्त

आज सवेरे कलवाली जगह फिर जाना था। चाय पीते समय मैंने मोख्तालोन ने कहा कि दूर से फैर करके कारतूस बिगाडना ठीक नही। इस प्रकार सब कारतूस खत्म हो जायँगे। अत अच्छा होगा कि मैं कही छिपकर बैठूँ और वे लोग गोवा को हाककर मेरे पास लावे, ताकि पास से बन्दूक चले और शिकार हो जाय। इस प्रस्ताव को मेरे नौकरो ने मान लिया। वहाँ पहुँचकर यही तरकीब की गई, परन्तु गोवा मेरे पास होकर कभी नहीं निकले।

एक विचित्र दृश्य सवेरे के समय इस उपत्यका में देखने को मिलता है। यहाँ प्रत्येक वस्तु दस गुनी ऊँची दिखाई देती है। छोटे-छोटे छिकरे ऊँट के बराबर दिखाई देते हैं। यह सब सवेरे के समय पश्चिम की ओर

देखने से दिखाई देते हैं। एक वार मृगतृष्णा भी देखी। अच्छा खासा तालाब था, जिसके किनारे बडे-बडे पेड थे और उनकी परछॉई पानी मे पड रही थी। भोटा ने कहा कि इस उपत्यका मे सवेरे के समय प्रायः यही विचित्र बाते दिखाई देती हैं।

कई बार प्रयत्न करने पर भी जब गोवा पास होकर नही निकले तो ग्यारह बजे के लगभग चार सौ गज की दूरी पर खडे हुए छ-सात गोवो पर दो फैर और किये। कारतूस कम रह गये थे। अत मैंने आशा छोड दी और लौट आया। डेढ वजे के लगभग डेरे पर पहुँचा।

यहॉ से चार वजे चले और नीमू के सामने जाकर ठहर गये। चार-पॉच मील चले होगे। डुँगटीरप से यहाँतक हमे कही भी वुर्त्सी नही मिली। गोबर से ही पकाने का काम चलाया गया।

शनिवार, १२ अगस्त

नीमू से सवेरे सात बजे पुगा के लिए चले। बारह मील सिन्धु के किनारे चलने पर माहिए ग्राम आया। यहाँ से हमने सिन्धु छोड दी और एक नाले के किनारे बारह मील और चलकर पुगा के मैदान मे पहुंचे। यह मैदान लगभग पाँच मील लम्बा तथा एक मील चौडा होगा। इसके बीच मे कस्टम नाका बना है। कई जगह गरम सोते हैं और गन्धक बिछा हुआ है। गन्ध भी उसीकी आती है। एक जगह पहाडी मे गन्धक खोदने के लिए गड्ढे भी देखे। मालूम हुआ कि गन्धक को रेल तक ले जाने मे खर्च बहुत आता था, इसीसे खदान बन्द कर दी। आस-पास के चर्म रोगवाले यहॉ इन गर्म सोतो मे नहाने के लिए आते रहते है। सैकडो जगह गर्म पानी निकल रहा है। खौलते हुए पानी से लगाकर ठण्डे पानी तक के सोते यहाँ विद्यमान हैं। नाके के पास हमने डेरे लगाये। कुछ चाँपे (बकरीवाले) यहॉपर ठहरे हुए थे। सन्ध्या समय मोख्तालोन ने चार रुपये मे दो भोटिये कुत्ते के पिल्ले खरीदे।

सन्ध्या समय मैने मोख्तालोन से कहा कि न० ८ अमन ब्लाक में चलना चाहिए। मोख्तालोन मुँशी अब्दुल रहमान को ले आया और मुझे विश्वास करा दिया कि वहॉ जाना व्यर्थ होगा। न्यान वैसे ही ग्या के रास्ते मे मिल जायँगे तो फेरसो (नम्बर ८) जाकर कष्ट क्यो उठाया

जाय। दो दिन काला चश्मा न लगाने से आँखे जलने लग गई थी। इधर सूर्य की किरणे बहुत तीव्र होती हैं। अत काला चश्मा लगाना उचित है। आज रात को आँखो के दर्द के मारे तीन बजे नीद आई। पाँच बजे उठ बैठा।

: २१ :
गन्धक के सोतों और चक्रवाकों के प्रदेश में

रविवार, १३ अगस्त

आज सवेरे सात बजे पुगा से चले। चुशल, से चलने के समय से आजतक हमे सामान लादने के लिए टट्टू नही मिले। सामान याक पर लदता है। सवारी के लिए बडी कठिनाई से तीन टट्टू मिल पाये। हमलोगो को सामान से आधा मील आगे या पीछे चलना पडता है। पुगा के मैदान मे गन्धक बिछा पडा है। इसीकी गन्ध का यहाँ राज्य है। नाले मे जगह-जगह गर्म पानी के सोते हैं। हमलोग जब बारह मील चले होगे तो एक दर्रा मिला। इसे लोग 'पलकोको' कहते हैं। चढाई बहुत मामूली है। दर्रे पर प्रथानुसार 'लो सलो' के नारे लगाये गये। उतार से कुछ ही दूर गये होगे कि देखते क्या हैं कि एकाएक हमारे याक जगली जानवरो की भाँति सामान पटककर पहाडो पर भागे जा रहे हैं और भोटे लोग उनका पीछा कर रहे हैं। कुछ देर के बाद हम भी मौके पर पहुँच गये और सामान बटोरने लगे। जब हमने उनसे याको के भागने का कारण पूछा तो उन्होनें बताया कि किसी जानवर की बू के कारण वे भडके हैं। हमे यहाँ चार बजे तक रुकना पडा। तब कही सब याक तथा सामान इकट्ठ कर पाये और लादकर चले। यहाँ से आठ-दस मील चलने पर हमे हजारो चक्रवाको का कोलाहल सुनाई दिया। पूछने पर मालूम हुआ कि दो मील पर 'कारत्सो' नामक भील आनेवाली है। उसीमे चक्रवाक बोल रहे हैं। आज इसी भील के किनारे 'थुगजी' नामक पड़ाव पर ठहरना था। लगभग सात बजे भील के पास पहुँचे। यह भील दो-तीन मील लम्बी है और एक मील चौडी होगी। भील के

किनारे तथा टापुओ पर चक्रवाको का मेला लगा हुआ था । हमको देख-कर पासवालो ने इतना शोर मचाया कि एक-दूसरे की बात सुनाई नही दे रही थी । ये पक्षी, मालूम होता है, गर्मी के दिनो मे यही रहते हैं तथा यहीपर अण्डे-बच्चे देते हैं । हमने बहुत बच्चे देखे, परन्तु अण्डे कम थे । हमलोग झील के पूर्व की ओर जा रहे थे और जब ठीक बीच मे पहुँचे तो एक पडाव मिला, जहाँ पर ठहर गये । पडाव से मेरा मत-लब उस जगह से है, जहाँ भेड-बकरीवाले ठहरते हैं । इनकी लेंडी से ईंधन का काम लिया जाता है । कही-कहीपर पत्थरो की दीवार का घेरा भी बना होता है, जिससे रात को ठण्डी हवा से बचाव हो सके । इसमे ठहरना यहाँवालो का काम नही । कारण, वहाँपर प्राय बहुत गन्दा होता है । पुगा की भाँति यहाँ भी पानी से गन्धक की गन्ध आती है, परन्तु यहाँपर गन्धक ऊपर पडा हुआ नही दिखाई देता । हमारे तीनो टट्टू बहुत कमजोर थे । अत' एक को पुगा मे छोडकर आना पडा था । अब केवल दो रह गये थे , परन्तु वे भी तगडे नही थे । रासे, लगाम तग तथा रकावे टूट चुकी थी । हमलोगो ने इनका काम रस्सी से लिया था । काठी के पलडे भी चटखने लगे थे । अतः उसके ऊपर कम्बल बिछाने लगे । मालूम होता था कि श्रीनगर तक काठी मे चमडे का नाम तक नही रहेगा । शिकारी कई बार कहता था कि चर्बी लगाई जाय, परन्तु मैं राजी नही हुआ । इससे सब कपडे खराब हो जाते हैं । मेरी समझ में इधर आनेवाले को काठी नमदे की तथा अन्य सामान सूत का रखना चाहिए, ताकि टूटे नही । बन्दूक की बद्दी (स्लिग) भी सूत की होनी चाहिए । रात होने पर चक्रवाको का शोर कम हुआ, फिर भी नीद बहुत कम आई ।

: २२ :

फिर न्यानों के पीछे

सोमवार, १४ अगस्त

हमारे याक तथा टट्टू बहुत दुर्बल थे । हम लोग थुगजी से सात बजे के लगभग चले । झील से उत्तर की ओर एक बडा मैदान है, जो

सात मील लम्बा और चार मील चौडा होगा। इसे 'फतातक' कहते हैं। यहाँपर गोवा पाये जाते है। इसीके बीच में होकर हम निकले। बहुत देखा-भाली की। गोवा की मादा दिखाई दी। नर बिल्कुल नही दीखे। यहाँपर हमे दो-तीन जगह दस फुट गहरे तथा बीस फुट के व्यास के गड्ढे दिखाई दिये। पूछने पर मालूम हुआ कि जाडो के दिनो मे जब बकरीवाले बर्फ के कारण इस मैदान मे पडाव डालते हैं, उस समय भेडिये इनकी बकरियो को बहुत सताते हैं। इन्ही गड्ढो मे एक बकरा बाँधने से भेडियो का झुण्ड कूद पडता है। वे बकरे को खा लेते हैं, परन्तु निकल नही पाते और चापो के पत्थरो के शिकार होते हैं। यह मालूम हुआ कि भेडिये इतने मूर्ख नही होते कि सहज मे कूद पडे। वे जब बहुत भूखे होते हैं तभी कूदते हैं। इस पडाव के उत्तर की ओर नाले के सहारे कई जगह पडाव मे घर बने हुए मिले, जिनकी छतो पर मिट्टी पडी हुई थी। इससे स्पष्ट था कि यहाँपर बकरीवाले महीनो पडाव लगाते हैं। मैदान पार करके जब चढाई प्रारम्भ हुई तो एक याक बैठ गया। बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह न उठा। भोटो ने उसपर का सामान बाँटकर अपनी पीठ पर लादा।। दूसरे आठ याक भी दुबले थे। अतः यह निश्चय हुआ कि अगले पडाव पर इनको बदल दिया जाय। इन्ही भोटो से यह पता लगा कि अगले पडाव के पास ही कुछ बकरीवाले पडे हैं। सवारी का प्रबन्ध हो जायगा।

'थसगी ला' नामक दर्रा पारकर हम लोगो ने एक नाले के पास पडाव पर डेरा लगाया। यहाँ से कैमर छ मील है। वैसे हमें कैमर जाकर ठहरना था, परन्तु याक बहुत दुर्बल थे और बादल भी थे। यदि पानी बरसा तो सामान भारी हो जायगा और इन याको के बस की बात नही रहेगी कि उठा सके। सामान उतारकर हमने भोटो को तुरन्त दूसरे जानवरो का प्रबन्ध करने के लिए भेज दिया। लगभग पाँच बजे वे लौटे और अपने साथ तीन-चार आदमी लाये। उनसे बातचीत हुई और हमने अपने भोटो को दाम चुका कर विदा किया। अन्य पडावो की अपेक्षा यह ऊँची जगह है। अतः यहाँ ठण्ड विशेष है। ऊँचाई के कारण रात को दो बजे के बाद थोडी-सी नीद आई।

मगलवार, १५ अगस्त

आज सवेरे उजाला होते ही हमारे दूसरे भोटे याक तथा टट्टू लेकर आ गये। एक तो यह ऊँचाई पर है, दूसरे पास मे हिमाच्छादित पर्वत हैं। इससे बहुत ठण्डा है। 'कैमर ला' पार करके पडाव पर ठहरना था। सलाह यह हुई थी कि उक्त पडाव पर ठहरकर न्यान की शिकार खेली जाय। जब एक-दो मार ले तब ग्या नामक गाँव पहुँचा जाय। आज बादल भी काफी थे, जिसके कारण ठण्ड बहुत थी। इस ओर शिकारी के अतिरिक्त और कोई नही आता। कारण, यह जन-शून्य प्रदेश है। भोटों के जानवर बलिष्ट तो थे, परन्तु उतने ही जगली भी। याकों को लादने में दो घण्टे लगे। कई बार सामान नीचे गिराया, तब कही बडी कठिनाई से वे लोग चल सके। हमारे सामान की पेटियाँ प्राय सब टूट चुकी थी। यही दशा और सामान की भी थी। सवारी के तीनो टट्टू लाये गये। वे भी हमे देखकर उछलने लगे। मेरी काठी दो-तीन बार पृथक्-पृथक् टट्टू पर कसी गई, परन्तु जब उनमे से किसीको सीधा न पाया तो एक टट्टू, जिसे सबसे ठीक समझा गया, मैंने एक मील भगाकर लाने को कहा, ताकि वह कुछ थक जाय और कूदे नही। जब एक भोटा उसे भगाकर लाया तो मैं बडी सावधानी से उसपर चढा, परन्तु मेरी बू पडते ही वह उछलने लगा और मुझे पटककर एक दुलत्ती झाड दी। मैंने अपना सिर तो बचा लिया, परन्तु बाँये हाथ की दो उँगलियो मे टाप लग ही गई। पाठक अनुमान कर सकते हैं कि ठण्ड मे चोट कितनी लगती है। इधर मैं दोनो उगलियाँ दाहिने हाथ मे पकडे मुँह बिगाड रहा था, उधर मेरे नौकर भोटो को खूब गालियाँ दे रहे थे। दूसरे टट्टू पर काठी कसी गई और वह भी भगाकर हाँफता हुआ लाया गया और मुझसे सवार होने के लिए कहा गया। यदि लद्दाख न होता तो मैं पैदल चलना पसन्द करता, परन्तु इतनी ऊँचाई पर कैसे चल सकता था। अत सवार होने के पूर्व मैंने कह दिया कि जबतक मैं न कहूँ, एक भोटा टट्टू को पकड़े रहे। इस प्रकार हम लोग यहाँ से विदा हुए। आज के टट्टूवाले तिरी नामक ग्राम के थे। इस सब गडबड में हमें चलते-चलते साढे आठ बज गये। आज हमे तीन पहाड पार करने थे और रास्ता भी बहत बीहड था। जब हमने दूसरा

पहाड पार किया तो सात न्यान दिखाई दिये। वे सब छोटे थे और मेरे बाये हाथ की उँगलियो मे दर्द था। उधर बादल के मारे ठण्ड मे ठिठुर भी रहे थे। इससे मैंने उनको मारने से इन्कार कर दिया। जब हम क्यामरला पर पहुँचे तो वर्षा होने लगी और ऊँचाई के मारे ठण्ड बहुत बढ गई। यहीपर हमे दो छोटे न्यान फिर दिखाई दिये, जो लगभग दो सौ गज पर होगे। मोख्तालोन ने बहुत कहा, परन्तु मैं टट्टू पर से नही उतरा। वे दोनो छोटे थे, परन्तु मोख्तालोन चाहता था कि मार लूं। क्यामरला से उतरकर तीन मील चले होगे कि एक मैदान मिला, जहाँ पर हमने पडाव पर डेरा डाला। यह स्थान भी 'क्यामर' कहलाता है। चारो ओर ऊँचे पहाडो से घिरा हे। उत्तर और पूर्व की ओर के पहाड हिमाच्छादित हैं। इससे यहाँ ठण्डक बहुत है। आज हम केवल आठ मील चले होगे, परन्तु हमे तीन पहाड पार करने पडे तथा आज के भोटे सुस्त और उनके जानवर जगली होने के कारण देर बहुत हो गई। कई जगह हमारा सामान याको ने पटक दिया। उधर बादल और ठण्ड भी बहुत थी। दो जगह न्यान भी दिखाई दिये थे। इससे हमे इस पडाव पर न्यान मिलने की बहुत आशा थी। पडाव के आस-पास की ऊँची जगहो को दूरबीन से देखते रहे। यहाँ का दृश्य बहुत अच्छा है। कई शिकारियो को यहाँपर अच्छे न्यान मिले हैं। मुझे मोख्तालोन ने बताया कि यहाँ पर यदि न्यान न मिला तो आगे मिलने की सम्भावना बहुत कम है। यह निश्चय हुआ कि चाहे चार दिन रुकना पडे, हमे न्यान मारकर ही चलना चाहिए। मै जबसे फोबरग से चला हूँ, एक भी दिन अच्छी तरह नही सो पाया हूँ। भूख भी बिलकुल नही लगती। यही कारण है कि स्वभाव भी बहुत चिडचिडा हो गया है। तम्बाकू तथा सिगरेट भी नही रही है। लगभग पन्द्रह दिन हो गये हैं। जगल मे ही पडाव करते आ रहे हैं। जी चाहता है कि अब तो किसी बस्ती के पास जाकर ठहरे, ताकि बच्चे तथा मनुष्य तो दिखाई दे। पूछने पर मालूम हुआ कि अगला पडाव गया नामक गाँव मे है। यह गाँव इस ओर बड़ा माना जाता है। कुलू से लेह (लद्दाख) के मार्ग पर यह बसा हुआ है। यहाँपर एक सराय भी है।

रात के बारह बजे के लगभग हमारे पड़ाव मे कोलाहल होने लगा।

पन्द्रह-सोलह टट्टू, जिनमे कुछ के गले मे घटियाँ बँधी थी, न मालूम कहाँ से आ गये और हमारे टट्टुओ से लडने और हिनहिनाने लगे। फल यह हुआ कि हमारे याक और टट्टू रस्सी तुडाकर भाग गये। टट्टुओ पर लाठी तथा पत्थरो की खूब बौछार करनी पडी। तब कही इनकी लडाई बन्द हुई। इस गडबड मे लगभग दो बजे थोडी नीद आई।

बुधवार, १६ अगस्त

कई दिनो से यथेष्ट नीद न आने, बराबर निर्जन स्थानो मे ठहरने, प्रतिदिन वही भोजन मिलने और भूख न लगने के कारण तबियत बहुत बिगड रही थी। स्नान तथा दाढी की कई दिनो से वारी नही आई थी। अन्य रातो की अपेक्षा गत रात्रि मे बाहर के टट्टू आने के कारण हल्ला-गुल्ला भी बहुत रहा था, यह भी एक कारण था, जिससे रातभर नीद नही आई। सवेरा होते कुछ झपकी लगी।

सवेरे उठकर मैने मोख्तालोन से कहा—"देखो, अब न्यान की शिकार नही खेलूँगा। एक मार चुका हूँ, यही काफी है। इसलिए सामान लादकर ग्या चलो।" इतने मे उसने तम्बू के परदे उठाये तो देखा कि बादल घिरे हुए हैं, परन्तु वर्षा नही है। कैमर-पडाव भी काफी ठडा है। मेरी बात सुनकर मोख्तालोन बोला, "अगर आप यहाँ न्यान नही मारगे तो आगे कहीपर भी नही मिलेगे। मैं हुजूर से ठीक कहता था कि फेरसी न जाना चाहिए। जब आपकी हालत नीद न आने से यहाँपर ऐसी हो गई है तो वहापर न जाने क्या होता। वहाँ तो हमे भी नीद नही आती।" मैंने क्रुद्ध होकर कहा, "जो हो चुका, वह हो चुका। तुम बार-बार फेरसी का नाम क्यो लेते हो? अब तो वह सवाल ही नही, लेकिन मै यह बता देना चाहता हूँ कि जो मेरी इच्छा होगी वही तुम्हे करना होगा और मेरी इच्छा यह है कि अभी सामान लादकर ग्या चलो।" मोख्तालोन और हबीबा एक-दूसरे से कह रहे थे कि देखा, क्या हालत हो गई है? इससे मुझे और भी क्रोध आया। बोला, "सुना नही, मैंने क्या कहा?" इसपर वे बोले कि बहुत अच्छा, आज ग्या चलेंगे। इधर मै चाय पी रहा था, उधर उन लोगो की सलाह हो रही थी। कुछ ही देर मे मोख्तालोन पास आकर बैठ गया और बोला, "रात के पानी से तम्बू और सामान गीला होकर भारी

हो गया है। साथ ही अभी खाना भी तैयार नही हुआ है। यह सब ग्यारह बजे तक ठीक हो सकेगा। भोटे बताते हैं कि पास मे न्यान अवश्य मिल जायगे।" इसपर उसने मुझे दक्षिण-पश्चिम की उपत्यका की ओर संकेत कर कहा, "हुजूर, वह जो गल है, वहाँ टट्टू छोडकर उसके पास के पत्थर तक पैदल चढकर अगर दूरबीन से देखेंगे तो पश्चिम की तरफ काफी लम्बा मैदान दिखाई देगा। वहाँ दोपहर के समय उरैंयाँ लेते (धूप मे बैठे) हुए न्यान जरूर मिलेगे। उधर चरने के लिए घास भी अच्छी है और इन भोटों ने बकरी चराते हुए न्यान देखे हैं। जबतक हम वहाँ से लौटेंगे तबतक तम्बू भी सूख जायंगे और खाना भी तैयार हो जायगा। यहाँ से ग्या बारह मील है और बराबर उतार है तीन-चार घण्टे लगेंगे।"

चाय पीने से कुछ शान्ति आ गई थी। मैंने सोचा कि अन्तिम बार भाग्य-परीक्षा करने मे हानि ही क्या है। एक शर्त पर मैं राजी हो गया कि हम चाहे चार बजे ही लौटे, परन्तु चलकर रात ग्या मे ही ठहरेंगे। इसपर भोटो को कहा गया कि वे सामान इत्यादि कसकर एक बजे से तैयार रहे। साहब बारह बजे लौटकर भोजन करते ही चल देंगे। जब मुझे विश्वास हो गया कि सब ठीक है तो कपड़े पहनकर तैयार हो गया। लगभग आठ बजे दो टट्टू और दो भोटों को लेकर मैं और मोल्तालोन उक्त गल की ओर चढने लगे। हमलोग जब गलमुख के पास पहुँचे तब ग्यारह बजे होंगे। चढाई के कारण घोडे और दोनो भोटे बहुत थक गये थे। विश्राम करने के लिए टट्टू से उतरकर पत्थरो पर बैठ गये। प्रकृति बिलकुल शान्त थी। गलमुख के भीतर बर्फ के गलकर पड़ने की टपटप तथा एक छोटी-सी धारा के कलकल के अतिरिक्त कोई भी आहट नही थी। सब अपने-अपने ध्यान मे मस्त थे। मैं भी अपने जीवन का सिंहावलोकन कर रहा था। इतने मे मोल्तालोन के यह कहने पर कि दोपहर होने को आ रहा है, चला जाय, ध्यान भग हुआ। यह पहले ही तय हो गया था कि यहाँ से पैदल ही सौ फुट चढकर दूसरी ओर के मैदान को देखा जाय। इतनी ऊचाई पर सौ फुट चढना भी कठिन था। कई जगह विश्राम करने पर ऊपर पहुँचे और एक चट्टान की आड़ में दम लेने के

लिए बैठ गये। दोनो टट्टू हमसे कुछ नीचे रोक दिये थे। जब श्वांस कुछ ठीक हुआ तो धीरे से ऊपर उठकर दूरबीन से देखा। पश्चिम की ओर लगभग एक हजार गज की दूरी पर बारह-तेरह न्यान बैठे थे। सब एक-से थे। छोटे-से-छोटा भी छत्तीस इच तथा बडा चालीस इच के सीगोवाला दिखाई देता था। अधिकाश करवट के बल लेटे हुए टॉगे पसारे धूप ले रहे थे। यहाँ से जब उनके आसपास की भूमि को इस दृष्टि से देखा कि कहाँ से हम लोग पास पहुँच सकते हैं तो सिवाय एक बडे पत्थर के, जो इनसे उत्तर-पूर्व तथा हमसे उत्तर की ओर था, कोई भी ऐसी आड नही थी, जहाँ हम इनकी निगाह बचाकर पहुँच सकते थे। चारो ओर मैदान था। उस पत्थर से भी वे तीन सौ गज दूर होगे। टट्टू पर बैठकर एक मील का चक्कर काटकर सौ गज पर टट्टू छोडकर मैं और मोख्तालोन उस चट्टान के पास पहुँच गये। हवा भी न्यानो से हमारी ओर वह रही थी। मोख्तालोन अपने खुदा से बार-बार प्रार्थना कर रहा था कि कुछ देर और ऐसी हवा बहने दे। पहाडो पर हवा अचानक दिशा वदल देती है। चट्टान के पास दम लेकर जब देखा तो न्यान पूर्ववत् विश्राम कर रहे थे। एक तो ऊँचाई, दूसरे दूरबीन के कारण तीन सौ गज पर होने पर भी बिल्कुल समीप मालूम देते थे। जब दोनो ने दूरबीन से देखकर यह तय कर लिया कि बॉई ओर से अमुक नम्बरवाला न्यान सबमे बडा है तो मैंने पत्थर पर एक कपडा रखकर उसपर धीरे-से बन्दूक रक्खी और अच्छा निशाना साधकर फैर कर दिया। आहट के होते ही सब न्यान उछलकर भाग निकले। जिसपर मैंने फैर किया था वह तो उत्तर की ओर धीरे-धीरे नीचे चला और शेप दक्षिण की ओर के पहाड पर छलाँगे मारते हुए भागे। मैं देख चुका था कि गोली न्यान के कन्धे के पीछे बीचोबीच लगी है। यही कारण था कि वह लस्त हो गया था। यदि मर्मस्थल पर लगी होती तो वही मर जाता। मोख्तालोन देखकर बोला, "हुजूर, न्यान अभी बैठा जाता है। अब फैर करने की दरकार नही। अगर आप चाहे तो पहाड की तरफ भागनेवालो मे तकदीर आजमाइश कीजिये।" इतने मे वे न्यान हमसे सात सौ-आठसौ गज की दूरी पर खडे हो गये। देखकर मोख्तालोन ने फैर करने का अनुरोध किया, परन्तु मैंने

यह कहकर कि अन्तर बहुत है और कारतूस कम हैं, इन्कार कर दिया। घायल न्यान पहले तो दुडकी से जा रहा था, अब धीरे-धीरे चलने लगा और हमे विश्वास हो गया कि अब थोडी दूर जाकर बैठता ही है। हम जहाँपर बैठे थे, नीचे की सब उपत्यका दिखाई दे रही थी, इससे उसके ओझल हो जाने का भय भी नही था। हमारा कैम्प भी दिखाई दे रहा था। सब नौकर तथा भोटे इधर-के-उधर भागकर ऊँचाई पर चढकर देखने का प्रयत्न कर रहे थे। मैने भी रूमाल हिलाकर सकेत किया, जिसे वे समझ गये और उन्होने भी साफे फेककर उत्तर दिया। मैने अपनी बन्दूक मोख्तालोन को दी और उससे दूरबीन लेकर न्यान को देखते हुए कहा, "गोली मर्मस्थल पर नही लगी है। फिर भी इतनी खराब भी नही है कि भाग जाय। बीचो-बीच है, दूर नही जायगा। देखो, वह रुक रहा है। बस, अब बैठने ही वाला है। ठीक कह रहा हूँ न ?" जब कोई उत्तर नही पाया तो दूरबीन हटाकर मोख्तालोन को देखने के लिए पीछे फिरा। देखता क्या हूँ कि वह उत्तर की ओर सपाटे से भागा जा रहा है। चिल्लाकर उसे रोक भी नही सकता था, अन्यथा न्यान सुनकर बैठने के बजाय भागना प्रारम्भ कर देता। करता भी तो क्या ? विवश था। मन-ही-मन क्रुद्ध हो रहा था कि अच्छे मूर्ख से पाला पडा। इससे कह दिया था कि जब न्यान बैठ जायगा तब तरकीब से पास पहुँचकर दूसरा फैर कर देगे। इस मूर्ख को इतना भी ज्ञान नही है। मोख्तालोन के दौडने की आहट पाकर न्यान भी थोडा तेज हो गया और उत्तर की ओर नीचे न उतरकर कैम्प की ओर चला। मोख्तालोन भी यह देखकर उसका रास्ता रोकने के लिए तेज दौडने लगा। मुझसे न रहा गया। मैं भी मोख्तालोन की ओर बढा और मेरे पीछे घोडेवाले भोटे हो लिये। हवा मेरी ओर से कैम्प की ओर बह रही थी। मै जोर से चिल्लाकर उसे रोक रहा था और गालियाँ दे रहा था, परन्तु वह न रुका। हमारे बीच का अन्तर बढता जा रहा था। कैम्पवालो ने हमें जब उनकी ओर बढते देखा तो समझ गये कि न्यान घायल होकर उनकी ओर आ रहा है। जितने टट्टू पर चढ सके वे चढकर तथा शेष पैदल भागकर अपनी बुद्धि के अनुसार रोकने के लिए बिखर गये। उत्तर

की ओर ग्या के मार्गवाले एक भोटे ने उसे आते देखकर हल्ला किया। फल यह हुआ कि न्यान मुडकर दक्षिण की उपत्यका की ओर, जहाँ से हम चढे थे, बढ गया। हल्ले से अब वह धीरे-धीरे दुडकी लगा रहा था। उसे अपनी ओर आते देखकर मोख्तालोन एक पत्थर की आड मे बैठ गया। मुझे भी सन्तोष हुआ कि चलो, ईश्वर ने बात बना दी। मैं भी रुक गया। दम काफी फूल चुका था। कैम्प के लोग हमें देख ही चुके थे। अत. उन्होंने हबीबा के नेतृत्व मे न्यान मेरी ओर भगाना चाहा और कैम्प की ओर से खूब हल्ला किया, परन्तु न्यान सीधा मोख्तालोन की ओर बढता गया। जब वह उससे पचास गज (मुझे तो ऊपर से ऐसा प्रतीत होता था, मानो पॉच ही गज है) पर होगा कि उसने फ़ैर किया, परन्तु गोली ने उससे कही दूर धूल उडाई। इसके पश्चात् न्यान मेरी दृष्टि से ओझल हो गया। मोख्तालोन ने उसी स्थान से दो फ़ैर और किये और वह भी दौड़कर ओझल हो गया। मैं समझ गया कि मूर्ख ने तीनो फ़ैर बचा दिये। मैंने टट्टूवाले दोनो भोटो से कहा कि वे दौडकर मोख्तालोन को रोकें और कहे कि फ़ैर न करे। मुझसे जिनना बना मैं भी चिल्लाया कि फ़ैर मत कर और उसी ओर बढा। जब बिल्कुल नीचे पहुचा तो हबीबा तथा कैम्प के भोटे मिले और लगे अपना-अपना वृत्तान्त सुनाने। मैं समझ गया कि गोली न्यान के बीचो-बीच लगी है और काफी खून गिर रहा है, जो उन लोगो ने नाले मे पत्थरो पर पडा हुआ मुझे बताया। एक तो दम फूल रहा था, दूसरे ऊँचाई के कारण सिर मे दर्द था। इससे विश्राम करने को बैठ गया और हबीबा से कहा से कि वह तुरन्त दौड जाय और मोख्ता-लोन से कह दे कि न्यान को निगाह मे रक्खे, फ़ैर न करे। हबीबा को गये पॉच मिनट हुए होगे कि फिर बन्दूक चली। सुनते ही मैं उठ बैठा और दक्षिण की ओर, जिधर से आहट आई थी, चल दिया। फिर एक फ़ैर हुआ। इस प्रकार पॉच-पॉच मिनट मे चार फ़ैर हुए। तबतक मैं टट्टू पर काफी ऊपर चढ चुका था। मन-ही-मन कोसता जा रहा था कि इतने मे एक भोटे ने ऊपर की ओर सकेत कर बताया कि न्यान पहाड पार कर गया, परन्तु मोख्तालोन नही दीखता। अब आगे

चढना व्यर्थ था। अतः उसकी प्रतीक्षा मे नाले के पास बैठ गये। कुछ ही देर मे मोख्तालोन लौटा। उसने पास पहुँचकर मेरे पैरो में साफा रख दिया और बोला, "हुजूर, मुझे बख्श दीजिये। आपके रोकने पर भी मै नही माना। यह सब इस उम्मीद मे किया कि दौडकर पास पहुँच जाऊँगा और न्यान को मार लूँगा। यह सब इस धरती का नतीजा है। यहाँपर किसीका दिमाग ठीक नही रहता। घायल जानवर को बैठ जाने देना चाहिए। तब उसे ढूँककर मारना चाहिए। यह तो मामूली शिकारी भी जानता है। मैने बिल्कुल अनाडीपन किया।"

मैने कहा, "जब तुम्हारी यह हालत है तो मेरा चिढना ठीक ही है। तुम तो प्रेसिडेण्ट रूजवेल्ट के लडके के साथ जायट पडा की शिकार के लिए चीन तक गये हो। तुम्हारा ऐसा व्यहार देखकर अचरज होता है। खैर, जो हुआ सो ठीक, अब कैम्प पर चलो। वहाँ जबतक खाना खायगे तबतक सामान लादकर तैयार हो जायँगे।" मोख्तालोन बोला, "अब मुझे शर्मिन्दा न कीजिये। हमे आज यही रहना चाहिए। मैं दो भोटे लेकर न्यान के पीछे जाता हूँ। वह पडाव के पार नही जा सकता। शाम तक लेकर आ जाऊँगा।"

सुनकर एक भोटा बोला कि न्यान तो बर्फ पर होता हुआ पहाड़ पार कर गया है। मोख्तालोन ने बहुत चाहा कि वह यह कह दे कि न्यान पहाड के ऊपर नही पहुँचा, परन्तु वह कब माननेवाला था। उसने कहा कि उसने अपनी आँखो देखा है। जब उसका पीछा करने का विचार होने लगा तो उक्त भोटे ने जीभ बाहर निकालकर हाफना प्रारम्भ किया और सिर पकडकर यह बताया कि इतनी ऊँचाई पर दम फूलेगा और सिर फटने लगेगा। बेचारे का हिन्दी का ज्ञान सीमित था। उसने भोटिया भाषा मे बताया कि अब समय नही रहा। कल सवेरे बयामर के दर्रे से पहाड पारकर पीछे की ओर से पहुँचा जा सकता है। इसमे दो दिन, अर्थात् एक जाने मे और एक आने मे, लगेंगे। मै अब दो दिन और ठहरने के लिए राजी न था। कैम्प पर लौटकर भोजन करने के पश्चात् लगभग चार बजे हम लोग ग्या के लिए चल दिये। मोख्तालोन तथा दूसरे नौकर बहुत समझाते रहे कि दो दिन ठहरकर न्यान को ढुंढवा लेना चाहिए,

परन्तु मैंने एक न मानी।

वादल घिर आये थे तथा थोडी बूंदे भी गिर रही थी। ग्या से दो मील इधर एक वडा नाला मिलता है। लगभग आठ वजे जव सन्ध्या हो रही थी, हमलोग ग्या पहुँचे। कई दिनो के पश्चात् आज वस्ती देखने को मिली। वर्षा के कारण ठड भी अधिक थी। जगह-जगह वच्चे खेल रहे थे और स्त्री-पुरुप या तो भेड के चमडो को दोनो हाथो से मसल रहे थे या तकली से ऊन कात रहे थे। यहाँ के रहनेवाले चमडे को पकाना नही जानते। जव चमडा सूख जाता है तो उसे मसल-मसलकर कपडे जैसा कर लेते हैं। इस कार्य में उन्हे दस-वारह दिन लग जाते होगे।

दिनभर के थके तथा निराश थे। अत अन्य दिनो के अनुसार आज पडाव पर न जाकर गॉव के वीच की सराय मे ही ठहर गये। आज पहला दिन था कि हम गदी सराय मे ठहरे। यदि वर्षा न होती और हम-लोग थके न होते तो कदापि न ठहरते।

एक कमरे के कोने में मेरा टूटदार पलग लगा दिया गया और दूसरी ओर सामान तथा नौकर ठहर गये। नीचे भेड-वकरियो का पेशाव और लेडी बिछी थी। मुझे चुशल मे रमजानखाँ ने वताया था कि ग्या में थिरिङ्ग नाम का भोटा रहता है, जो उस प्रदेश को खूव जानता है। यदि उसे साथ ले लिया तो वह मार्सलग (हिमिस) के मार्ग मे शग नाले पर अच्छे भरल वता देगा। मैंने उसे वुला भेजा। थिरिङ्ग भली प्रकार अपने विचारो को हिन्दी में व्यक्त कर लेता था। फोवरग के कॉचोक के वाद मुझे यह दूसरा भोटा मिला, जिससे वात करने मे आनन्द आया। दूसरो से तो मोख्तालोन के द्वारा ही वात होती थी। थिरिङ्ग कई शिका-रियो को जानता था। उसका रमजानखाँ से भी अच्छा परिचय था। मोख्तालोन को देखकर वोला कि यह लद्दाख की शिकार के लिए कम आता है, जो उसे वुरा लगा। वातचीत करने पर मैंने उसे वताया कि मुझे २० तारीख की सन्ध्या तक मार्सलग पहुच जाना चाहिए और उसके पहले अगर वह शिकार खिला दे तो अच्छा होगा। उसने कहा कि कल ग्या से चार मील चलकर पडाव किया जाय। वही से उसके पास शिकार खेली जायगी तथा दूसरे दिन सामान को मीरू भेजकर हम पहाड चढ

जायँगे और दिनभर शिकार खेलते हुए शाम तक मीरू पहुँचेगे। मैं इस प्रस्ताव से सहमत हो गया और मोख्तालोन से तदनुसार प्रबन्ध करने को कहकर सो गया। उन लोगो ने खाने के लिए बहुत आग्रह किया, परन्तु थकावट और नीद के कारण मैंने उनकी एक न मानी। लेटते ही दस मिनट मे नीद आ गई।

: २३ :

भरलों की शिकार

गुरुवार, १७ अगस्त

लगभग एक महीने के पश्चात् रात को अच्छी नीद आई। सवेरे पॉच वजे उठकर देखा कि चारो ओर कूडा पडा था। रातभर वर्षा होने के कारण ठड भी वहुत थी। नौकरो के वहुत कहने पर दाढी तो वना डाली, परन्तु स्नान के लिए राजी न हुआ। यह कहकर टाल दिया कि सराय मे गदगी वहुत है। जव उन लोगो ने चौक मे तम्बू लगाकर सूचना दी कि गरम पानी तैयार है तो भी ठड के मारे साहस नही हुआ। थिरिङ्ग से शिकार के विषय मे बातचीत होती रही। नौकर भोजन तैयार करने मे लगे थे और मैं थिरिङ्ग से जंगली जानवरो के विषय में पूछ-ताछ कर रहा था। उसने वताया कि लेह के रास्ते पर दो मील चलने के वाद लाथो नाला मिलेगा। उसी के सहारे पच्छिम की तरफ तीन-चार मील चलने पर पडाव किया जायगा और आज ही यदि वादल न रहे तो भरल की शिकार हो जायगी। ग्या काफी वड़ा गॉव है। वड़े गाँव से मेरा अभिप्राय लद्दाख के वडे गाँव से है। यह कुलू से लेह के मार्ग पर है। अत इसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। मेरा अनुमान है कि यहाँपर लगभग दो सौ परिवार रहते होगे। अतरप्रान्तीय मार्ग होने के कारण रास्ता अच्छा है और नाले तथा नदियो पर लकडी के पुल वने हैं। यही मार्ग मीरू होता हुआ मार्सलग ग्राम के पास सिंधु को पार करता है जहाँ लकडी का पुल वना है। इस स्थान से ऊपर सिंधु में कही भी पुल नही है।

जबतक हमने भोजन किया तबतक हमारे रसोई बनानेवाले गफ्फारा तथा नौकर हबीवा ने एक-एक पिल्ला सवा-सवा रुपये मे खरीद लिया। इस प्रकार अब हमारे पास चार कुत्ते हो गये। दस बजे हमने भोजन किया और बादल खुलने पर हमलोग थिरिङ्ग के नेतृत्व मे चल दिये। जबतक हमलोग लेह के मार्ग पर चल रहे थे हमें कई जगह व्यापारी तथा देहाती आते-जाते मिले। ग्या से सिंधु तक बराबर उतार है। उधर कुलू की ओर चढाई है और कोई गाँव भी नही है। दो मील चलकर हमने मार्ग छोड दिया और बॉई ओर लाथो नाला मे घुस गये। यहाँ कोई मार्ग न होने के कारण हम बडी कठिनाई से चल रहे थे। यह थिरिङ्ग का ही काम था जो घुमा-फिराकर हमे उक्त पडाव पर ले गया। इस नाले मे पत्थर बहुत हैं। हम नाले मे चार मील चले होगे, परन्तु पहुँचने में हमे तीन बज गये। पडाव क्या है, मजाक है। तीन ओर ऊँची चट्टाने हैं, जिससे ठडी हवा से बचत हो सके। इस जगह कठिनाई से दो तम्बू लग सकते हैं। जबतक तम्बू लगाकर सामान लगाया जा रहा था, तबतक मै और मोख्तालोन थिरिङ्ग के आदेशानुसार ऊँचे पत्थरो पर चढ गये और दूरबीन से आस-पास के पहाड देखने लगे। इस नाले की उपत्यका बहुत तग है। अतः बहुत दूरतक नही दिखाई देता। फिर भी हमे तीन-चार जगह भरल चरते हुए दिखाई दिये। बादल घिर आये थे और बर्फ की वर्षा हो रही थी। तीन बजे से छह बजे तक हम लोग तीन बार बन्दूक लेकर निकले, परन्तु कुछ ही दूर जाकर वर्षा तथा ठड के कारण लौट आये। हमे भय यह था कि कही बडे-बडे ओले न गिर जायँ। अन्त मे छ बजे के बाद हमने निश्चय किया कि कुछ भी हो, शिकार खेली जाय। उत्तर की ओर एक मील गये होगे कि बडे जोर की आँधी आई और बादल गरजने लगे। पुन भागकर डेरे पर आना पडा और हताश होकर आज के लिए शिकार स्थगित करनी पडी। कई जगह भरल देखकर मुझे पूरा विश्वास होता था कि कल शिकार अवश्य होगी। थिरिङ्ग ने कहा कि दो दिन यदि इसी जगह पडाव डाला जाय तो भरल की शिकार अच्छी हो सकती है, परन्तु मैंने उससे कह दिया कि बीस तारीख की सन्ध्या के समय मार्सलग पहुँचना अनिवार्य है। कारण, वहाँ-

पर मेरे मित्र भी उसी दिन पहुंचेगे। अंत मे यह तय हुआ कि सवेरे सामान तो मीरू भेजा जाय और हमलोग पहाड पर चढकर भरल की शिकार खेलते हुए गाम तक मीरू पहुँच जायँ। यह स्थान काफी ऊँचा है। वर्षा के कारण ठड काफी है। बादल की गडगडाहट और चार कुत्तो के भोकने के कारण रातभर नीद नही आई।

शुक्रवार, १८ अगस्त

आज सवेरे सात बजे सामान को मीरू भेजा और हम थिरिङ्ग के नेतृत्व में उत्तर-पश्चिम की ओर पहाड पर चढने लगे। थिरिङ्ग हमे बता चुका था कि उधर बहुत भरल मिलेगे। नौ बजे के लगभग जब हम पहाड की चोटी पर पहुँचनेवाले थे तो बडे जोर से एक पक्षी के बोलने की आहट मिली। हमसे सौ गज की दूरी पर मुर्गे के बराबर एक पक्षी दिखाई दिया। पूछने पर मालूम हुआ कि रामचकोर है। इसे अग्रेजी में 'स्नो कॉक' (Snow Cock) अर्थात् बर्फानी मुर्ग कहते हैं। काश्मीर तथा आस्तोर की तरफ जहाँ शिकारी 'आइबेक्स' (जिसे काश्मीरी केल कहते हैं) मारने जाते हैं तो रामचकोर बहुत मिलते हैं। यह प्राय. चिल्लाकर केल को भगा देते हैं। रामचकोर को देखने का मेरा यह पहला अवसर था। जब हम पहाड की चोटी पर, जो लगभग सोलह या सत्रह हजार फुट ऊँची होगी, पहुँचे तो हमने वहाँ पैमाइश का चौतरा पाया, जिसपर सर्वेवालो के नम्बर पडे थे। इसी चौतरे के पास बैठकर आस-पास के पहाडो को दूरबीन से देखते रहे। बडा अच्छा दृश्य था। हमसे आस-पास के पहाड प्राय नीचे थे। अत कई चोटियाँ दिखाई दे रही थी और कही-कही बादल भी उनमे लिपटे हुए थे। हमसे पश्चिम की ओर एक बडा खड्ड था और उससे पश्चिम में अच्छा मैदान दिखाई दे रहा था। सूर्य पीठ पर था इसलिए दृश्य साफ दीख पडते थे। थिरिङ्ग का कहना था कि हमारे आस-पास पश्चिम की ओर के मैदान मे भरल दोपहर के वक्त आ जाते हैं और चार बजे तक आराम करते हैं। दूरबीन मोरुतालोन के पास थी। कुछ ही देर मे उक्त मैदान की ओर सकेतकर कहा कि कैसा उत्तम भरलो का झुण्ड हमारी ओर आ रहा है। यदि खड्ड पारकर हमारे नीचे आ गया तो मारना सरल है। बारी-बारी से मैंने

और थिरिङ्ग ने दूरबीन से देखा। वे हमलोगो की ओर चरते-चरते चले आ रहे थे। वास्तव मे वे सब बडे थे। इनमे छोटा २४ इच से कम न होगा और बडा ३० इच से ऊपर भी हो तो आश्चर्य नही। ग्यारह-बारह होगे। हिमालय मे मादाएँ और नर उनके खास समय, गर्भाधान, के अतिरिक्त पृथक्-पृथक् रहते हैं। नरो मे बडे-बडे पृथक् और नये-नये एक साथ रहते हैं। मादा तथा बच्चे इकट्ठे रहते हैं।

हम लोग गृद्ध-दृष्टि से इस झुँड को देख ही रहे थे कि इतने मे दस बजे के लगभग चार मादा तथा दो बच्चे हमारे ठीक नीचे पूर्व की ओर आ गये और चरते-चरते बैठ गये। इसी प्रकार एक झुण्ड जो सात-आठका होगा, उत्तर की ओर से आया और चरते-चरते हमसे दो सौ गज पर बैठ गया। इनमे मारने लायक एक भी भरल नही था। सब बीस इच से कम होगे। एक झुँड लगभग बीस का हमसे उत्तर-पूर्व की ओर से आया और चरते-चरते बैठ गया। इसमें दो-तीन भरल २५ इच से बडे मालूम देते थे। ग्यारह बजे तक हमें आशा रही कि पश्चिम की ओर का बडे भरलो का झुड खड्ड पारकर हमारे नीचे आयगा। वह खड्ड मे उतर गया था, परन्तु बाहर नही निकला। थिरिङ्ग कह रहा था कि खड्ड मे छाया है। इसलिए वह बाहर जरूर आयगा। खड्ड उत्तर-दक्षिण की ओर था। इसका सिरा हमसे उत्तर-पश्चिम की ओर था। जब बैठे-बैठे निराश हो गये तो यह सलाह ठहरी कि खड्ड पर पहुँचकर दूरबीन से इसकी छानबीन की जाय। दो सलाह थी। एक तो सीधे पश्चिम की ओर उतरकर दोनो ओर देखा जाय और दूसरी सलाह मोख्तालोन की यह थी कि सिरे पर पहुँचकर देखा जाय ताकि दोनो पथ दिखाई दे। हमने मोख्तालोन की सलाह मानी। जब हम आधा मील चलकर खड्ड के सिरे पर पहुँचे तो देखते क्या हैं कि जहाँ से उठकर आये थे वहीपर सब बडे भरल खडे हैं। हम पन्द्रह मिनिट और ठहर जाते तो कहना ही क्या था, परन्तु यदि हम सीधे पश्चिम की ओर उतरते तो उनसे अवश्य मुठभेड हो जाती। सिवाय अपने आपको कोसने के हम कर ही क्या सकते थे? उन सबने हमको देख लिया था और कतार बाँधकर 'जैसे फौज के सिपाही खडे हो' हमे देख रहे थे। इनमे एक गोल सींग-

वाला भरल बडा ही विचित्र था। मोख्तालोन ने उत्तेजित होकर कहा, "हुजूर, इतने वडे और नायाव भरल मैने कभी नही देखे। एक फैर करके तकदीर क्यो नही आजमाते ?" मैने उसकी सलाह नही मानी। कारण, मेरे पास चालीस कारतूस रह गये थे और भरल हमसे आठ सौ गज से कम न होगे। जब वे भाग गये तो हमने लगभग बीस भरलवाले झुण्ड को ढूँक देखने का विचार किया। हम उन्हे ऊपर से देख चुके थे। अत. बडी आसानी से एक चट्टान के पास पहुच गये, जहाँ से भरल लगभग दो सौ गज होगे। खूब दम साधकर इनमे से सबसे बडे को लक्ष्यकर फैर किया, परन्तु गोली चूक कई। धडाके की गूँज पहाडी मे चारो ओर से आई। भरलो को यह पता न लगा कि बन्दूक कहाँ से चली है। वे घवरा कर सीधे हमारी ओर भागे। जब पचास गज रहे होगे, तव मैने एक वड़े को छाँटकर गोली चलाई और उसे वही गिरा लिया। इससे वे और भी पास अर्थात् चालीस गज पर आगये। दूसरे फैर मे एक और गिरा लिया। मोख्तालोन के कहने पर एक और फैर किया, परन्तु वह जिसमे लगना था, न लगकर छोटे मे लगा और वह भी गिर पडा। थिरिङ्ग तथा अन्य सव 'वाह वाह' करने लगे। भोटे भरलो की ओर उठाने को वढे। जव भरल से मोख्तालोन दस गज होगा तो उसे देखकर वह उठ वैठा और चलने लगा। मोख्तालोन उसे पकडने को लपका, परन्तु वह भी गिरता पडता एक फर्लाङ्ग दूर खड्ड मे उतर ही गया। जव मै मोख्तालोन के पास पहुँचा, जगह-जगह खून पडा देखा। दोनो भरल मर चुके थे। अतः टट्टू के पास एक भोटा को छोडकर मै, मोख्तालोन तथा थिरिङ्ग खून को देखते हुए खड्ड मे उतर गये, जो वहुत गहरा था। हमे कुछ दूर तो खून तथा भरल के खाद दिखाई दिये, परन्तु फिर कुछ न मिला। देर वहुत हो गई थी और हम थक भी गये थे। आशा छोडकर वापस टट्टुओ के पास लौट आये। फोटो लेने के पश्चात् हलाश हो, मीरू की ओर वढे। थिरिङ्ग वरावर कहता जाता था कि उसे जाने दिया जाय तो वह अवश्य ढूढ लायगा, चाहे दो दिन लग जायँ। मेरे पास कल का एक ही दिन था और कल मुझे मीरू से पूर्व मे शापू की शिकार खेलनी थी। भरल तो सव जगह मिलने की सम्भावना थी, परन्तु शापू सिवाय लद्दाख के और जगह

नही मिलते। मैंने टट्टूवाले दोनो भोटो को घायल भरल को ढूँढने भेज दिया और उनसे कहा कि सन्ध्या तक ढूँढ लाओगे तो इनाम दूँगा। दोनो मरे हुए भरलो को एक टट्टू पर लादकर मैं और मोख्तालोन थिरिङ्ग के पीछे-पीछे मीरू की ओर चल दिये। कुछ ही चलने पर हमे पहाड उतरना पडा और हम 'कुलू' लेह के मार्ग पर पहुँच गये। यहाँ से तीन मील चलकर मीरू पहुँचे। यह जगह नीची होने के कारण गरम थी।

: २४ :

शापू हाथ से निकल गये

शनिवार, १६ अगस्त

तीन-चार भोटो को कलवाले भरल को देखने के लिए फिर भेजा। सवेरे कलवाले दोनो भोटो ने कहा कि वह भरल या उसके खून के निशान तक नही मिले। आज चाय के समय मैंने अपने नौकरो से कह दिया था कि रात को कुत्तो ने भौंककर नीद न आने दी तो वदूक मार दूँगा। इस पर उसने कहा कि आज वे कुत्ते को इतनी दूर बाँधेगे, जहा से भौंकने की आहट भी न आयगी। सात बजे के लगभग हम थिरिङ्ग के नेतृत्व मे गाँव से पूर्व की ओर के नाले के सहारे चल दिये। गाँव के पास उपत्यका चौडी थी, परन्तु ज्यो-ज्यो ऊपर को जा रहे थे, सकरी होती जाती थी। जब हम चार मील चले होगे तो दो जगह बहुत ऊँचाई पर शापू दिखाई दिये। एक झुण्ड मे बीस तथा दूसरे मे सात थे। परन्तु सव मादा थी। दो मील और चलने पर हमने दाहिनी ओर सात जानवर वैठे देखे। हम समझे कि इनमे जो चार वडे हैं वे नर तथा तीन छोटे मादा हैं और सब शापू है। वे एक छोटे-से नाले के पास वैठे थे। अतः ढूँकने का अच्छा मौका था। धीरे-धीरे सावधानी से ढूँक कर जव हम पास पहुँच गये तो देखा, सातो न्यान थे। चार वडी मादा और तीन छोटे वच्चे। हताश होकर वापस टट्टू के पास लौटे और ऊपर की ओर चल दिये। लगभग डढ वजे हम लोग नाले के सिरे पर पहुँचे और वहाँ वैठकर भोजन किया। थिरिङ्ग का कहना था कि अव तो लौटते मे शापू मिलेंगे।

अर्त. एक घण्टा विश्राम कर लौट पडे। लगभग तीन बजे जब हम वापस आरहे थे तो हमारे दाहिनी ओर अर्थात् उत्तर के पहाड पर चार नर शापू बैठे हुए दिखाई दिये। इनके पास ही पनट्टटा (छोटा नाला) था, जिसमे बडी आसानी से ढूँका जा सकता था, परन्तु पहाड ठाटा (करारा) होने के कारण टट्टू नही जा सकते थे। शापू हमसे सात-सौ आठ-सौ गज पर होगे। जब थिरिङ्ग ने कहा कि क्या मै पैदल पहुँच सकूँगा तो मैने कहा कि एक साँस मे तो नही, परन्तु विश्राम लेता हुआ धीरे-धीरे दो घटे मे तो पहुँच ही जाऊँगा। हमने अपने टट्टू रास्ते पर छोड़ दिये और जो पनट्टटा शापू के पास से आया था उसी मे ढूँक गये और चढ़ना प्रारम्भ कर दिया। ऊँचाई के कारण दम फूलता था। बार-बार विश्राम करना पडता था। दो घटे की चढाई के पश्चात् हमने देखा कि शापू तीन सौ गज रह गये हैं और निश्चिन्त बैठे हैं। पनट्टटा गहरा था। अत हमे पूर्ण आशा थी कि एक घण्टे मे हम उनसे पचास गज पर पहुच जायगे और एक-दो को अवश्य मार लेगे। इतने मे देखते क्या हैं कि पूर्व की ओर से बकरियाँ चरती हुई चली आ रही हैं। यह देखकर मोल्तालोन उत्तेजित हो गया और लगा गालियाँ देने। मुझसे कहा कि जल्दी चढ चलना चाहिए ताकि बकरियो से पहले हम शापू के पास पहुँच जायँ और मार ले। मेरे फेफडे फटे जा रहे थे। मैंने साफ इन्कार कर दिया। निराश होकर मोल्तालोन थिरिंग से बोला, "यह बकरियोवाला भी ऐन मौके पर आ मरा।" ऐसी जगह सबके दिमाग का पारा चढा रहता है। थिरिग ने तमककर कहा, "जगल तुम्हारे और मेरे बाप का नही है। उसे क्या मालूम कि हम यहाँ शिकार खेल रहे हैं।" अब ऊपर चढना व्यर्थ था। कुछ ही देर मे जब बकरियाँ चरते-चरते शापू के पास आ गई तो वे खडे हो गये और भागकर उत्तर की ओर के पहाड पर चढ गये। हम भी पनट्टटा से निकलकर बाहर आ गये। हमे देखकर बकरीवाला, जो मीरू का था, हमारे पास आ गया। अब छ बजे होगे, अत. सब-के-सब साथ-साथ मीरू की ओर चल दिये। सात बजे के लगभग हम पडाव पर पहुँचे। जो भोटे कलवाला भरल देखने गये थे, वे भी खाली हाथ लौट आये थे। आज लेह से एक भोटा हमारे लिए सिगरेट लेकर आया।

कई दिनो के पश्चात् सिगरेट पीने को मिली। आज कुत्ते ॥ाँव दिये थे। अतः नीद ठीक आई।

रविवार, २० अगस्त

आज सबेरे सात बजे हम पश्चिम की ओर के पहाड पर चढने लगे। जब ऊपर पहुँचे तो सामानवालो को तो शग नाले की उपत्यका मे चलने को कहा और हम ऊपर-ऊपर चले। थिरिग ने सामानवालो को समझा दिया था कि वे हमे देखते रहे। जब हम दिखाई न दे तो रुक जायँ। जब हम ऊपर से सकेत करे तब चलने लगे। थिरिग काफी चतुर शिकारी है। इसके प्रबन्ध मे मैने कही त्रुटि नही पाई। जैसा कहा गया था उसी प्रकार सामानवाले भोटे करते चले गये, मानो सेना के सिपाही हो। आज के पहाड बड़े ठाटे है। टट्टू पर बराबर यही डर लगा रहता था कि न जाने कब लुढककर खड मे पहुच जायँ। सबसे पहले हमे पच्चीस-तीस भरल दिखाई दिये। ढूककर पास पहुँचे तो मालूम हुआ कि सब मादा हैं। हम बराबर उत्तर की ओर बढते जा रहे थे। पाँच बजे के लगभग छ-सात भरल फिर दिखाई दिये, परन्तु पास पहुँचने पर वे भी मादा निकली। वैसे दूरी पर इधर-उधर भागते हुए कई भरल के झुण्ड दिखाई दिये। यदि कोई शिकारी यहाँपर तीन-चार दिन का पडाव करे तो भरल की शिकार अच्छी हो सकती है। जब थोडा-सा दिन रहा तो हमलोग पहाड से नीचे उतर कर सामानवालो के पास पहुच गये। मैने थिरिंग को उसके प्रवन्ध के लिए धन्यवाद दिया। जब सब इकट्ठे होकर मार्सलग की ओर वढे तव दिन डूब चुका था। ओझो, जो एक छोटा-सा गाँव है और मार्सलग से चार मील है, पहुँचते-पहुँचते दस बज गये और काफी अँधेरा हो गया। आज परिश्रम के मारे हम तथा जानवर, सभी बहुत थक गये थे। अत यही पर नाले के सहारे पडाव डाला। यह जगह काफी हरी और नीची है। रात को पडते ही नीद आ गई।

सोमवार, २१ अगस्त

सबेरे उठकर थिरिग तथा ग्या के टट्टूवाले भोटो को रुपया चुका-कर विदा किया और ओझो के टट्टू लेकर सात बजे चले। दो मील

चलने पर हमें दाऊसाहब मिले। वे हमें देखने इधर बढे थे। कहने लगे, "कल यानी २० तारीख को मार्सलग मे मिलना था। आप न आये तो मैं शग नाले से आपको देखने आया हूँ। इधर भरल की भी सुनी है।" जब मैंने बताया कि इधर मादा ज्यादा है तो वे भी मेरे साथ मार्सलग लौट पड़े। हमे ऐसा मालूम हो रहा था मानो बरसो बाद मिले हो। दाऊ-साहब ने बताया कि उन्होंने एक आयबेक्स (केल) ४० इंच का, एक शापू ३८ इच का तथा एक न्यान (अमन) २७ इच का मारा है। मार्सलग में उक्त तीनो के सीग देखे। मैंने भी अपना पूरा वृत्तान्त कह सुनाया कि किस प्रकार दो अच्छे असन तथा एक अच्छा भरल गिर पडे और उठकर भाग गये। इसपर वे बोले, "आपको इनाम की कह देना था, वे ढूँढ लाते।" । मैंने बताया कि इस प्रकार प्राय: धोखा होता है। इधरवाले मरे जानवर को बर्फ मे ढाँक रखते है और जब किसी शिकारी का जानवर घायल होता है तो उक्त मरे जानवर का सिर लाकर दे देते हैं और इनाम ले लेते हैं। अत: जब कभी जानवर इस प्रकार घायल हो जाय तो स्वयं ढूँढे अथवा जब भोटे लोग ढूँढकर लाये तो उसकी खाल को देख-भालकर यह निश्चय कर ले कि यह हमारा ही मारा हुआ है। इसमे थोड़ा भी सदेह हो तो न ले। बिना खाल (चमडे) के सिर को तो कभी न ले। इन सब कारणो से मैंने इनाम को नही कहा।

: २५ :
हिमिस का गोम्पा

दस बजे भोजन करने के पश्चात् मार्सलग से सिन्धु पार स्तकना पडाव के लिए सामान भेज दिया और हम हिमिस देखने गये। जब हम चाँग-चेन-मो गये थे तो स्तकना के पासवाले नाले मे शापू देखे थे और सुना भी था कि वहाँ अच्छे सिरवाले शापू हैं। हमने शिकारियो से कह दिया था कि वे तम्बू लगाकर डावनारो को देखने जायँ। हम भी हिमिस को देखकर सन्ध्या तक आ जायँगे। मार्सलग से स्तकना एक मील तथा हिमिस दो मील है। हिमिस का गोम्पा ल्हासा से दूसरे नम्बर

पर है। पश्चिमी तिब्बत मे यही मुख्य स्थान है। दूर से तो हिमिस बडा हरा-भरा दिखाई दिया, परन्तु वहाँ जाने पर कच्ची मिट्टी के मकान देखे। गोम्पा या मठ काफी लम्बा-चौडा है जहाँ लगभग छः-सात सौ लामा रहते हैं। कई द्वारो को पार कर हम एक आँगन मे पहुँचे और एक लामा से मिलकर वहाँ की दर्शनीय वस्तुएँ बताने की प्रार्थना की। यह कोई महत था। उसने एक लामा को बुलाकर चाबियो का गुच्छा दिया और उसे हमे सब जगह बताने की आज्ञा दी। यह लामा हिन्दुस्तानी अच्छी बोल लेता था।

कई यात्री प्रतिवर्ष जून के महीने मे यहाँ प्रेतो का नाच (Devil Dance) देखने आते हैं। इन यात्रियो मे बौद्ध तो हजारो होते ही हैं, परन्तु कई हिन्दुस्तानी, यूरोपियन तथा अमरीकन भी होते हैं। राहुलजी भी यहाँ पहुँचे थे। वे या अन्य हिन्दी के लेखक यदि यहाँ आवे और विस्तारपूर्वक लिखे तो एक अच्छी पुस्तक बन सकती है। मेरा तो इतना ही लिख देना यथेष्ठ होगा कि कई कमरो मे हस्तलिखित तथा छपी पुस्तके रेशमी कपडो मे लपेटी हुई सुरक्षित रक्खी हैं। कहते हैं कि इनमे सस्कृत के भी कई ग्रन्थ है। मैंने तो केवल लकडी की आल्मारियो मे उन्हे कपडे मे लिपटा हुआ देखा। जब उन्हे खोलकर देखने की इच्छा प्रकट की तो हमारे दुभाषिये ने कहा कि इसके लिए खास आज्ञा लेनी होगी और हमे दो-तीन दिन ठहरना होगा। एक बडे कमरे मे इनके धर्म-गुरुओ की प्रतिमाएँ तथा चित्र देखे, जो बहुत उत्तम थे। इसी प्रकार इनके बर्तन तथा कपडे आदि सब देखे। हमे तो अपने शिकार की पडी थी। अत एक बजे तक जितना देख सके, देखकर चल दिये। मकान सब-के-सब मिट्टी के है। हाँ, कहीपर लकडी की खुदाई का काम अच्छा हैं। कई जगह बडे तथा छोटे भोटिये कुत्ते साँकलो से बँधे थे। बडे कुत्ते बडे भयावने थे। जब मैंने छोटी जाति के कुत्ते को खरीदने की इच्छा प्रकट की तो मालूम हुआ कि वे बहुत कम हैं। जो कुछ हैं वे ल्हासा से लामा लोग अपने साथ लाये हैं और बेचने को राजी नही है। दो घण्टे तक जितना भी हो सका देखने के पश्चात् हिमिस से चलकर तीन बजे के लगभग स्तकना नामक पडाव पर, जहाँ पर हमारे तम्बू थे, पहुँच गये।

अभी शिकारी शापू देखने नहीं गये थे। मैंने इनको उधर भेजा और हबीबा से स्नान के लिए पानी गरम करने को कहा। आज इक्कीस दिन के पश्चात् स्नान करने का साहस हुआ। दाढी बनाते हुए मैंने दाऊसाहब को बताया कि न मालूम क्यो गरदन, बगल तथा पेडू में खुजली चलती है। वे बोले कि स्नान न करने तथा कपड़े न बदलने से जुएँ पड़ गई होगी। मैं इसे असम्भव समझकर हँस दिया, इसपर वे बोले, "कल मैंने भी स्नान किया था। मेरे भी इसी प्रकार खुजली चलती थी। यह खुजली जुओ के काटने की है। वे गरम जगह पर रुकती हैं, जैसे बगल आदि। स्नान के पश्चात् जब पहने हुए कपडे देखे तो उनमे कई जुएँ दिखाई दी।" मेरी भी यही दशा हुई। पहने हुए कपडे उतार-उतार कर देखा तो कपडो मे बीसियो जुएँ तथा उनके अडे-बच्चे थे। मैंने तो कहा कि कपडे जला दो, परन्तु हबीबा ने बताया कि कनस्तर में कपडे रखकर पानी में खूब उबाल देने से जुएँ मर जायँगी, साथ ही उसने मुझसे कहा कि इन्हीके डर के मारे वह मुझसे कई बार कपड़े बदलने की कह चुका था। मैंने उसकी बात का ध्यान रखने का आश्वासन दिया। स्नान करने से शरीर हल्का हो गया और जुएँ न रहने से खुजली भी बन्द हो गई। यह जगह सिन्धु के किनारे काफी नीचे है। अत गर्मी भी है। सन्ध्या समय बडा सुहावना मालूम दे रहा था। कई लोग आते-जाते दिखाई दे रहे थे। हम दोनो को गप-शप करते शीघ्र सन्ध्या हो गई। आज कुछ लोगो से सुना कि यूरोप मे युद्ध छिड़ गया है। जब हमने उनसे पूछा कि उन्हे कैसे मालूम हुआ तो बताया कि लद्दाख मे जितने फौजी अफसर शिकार या यात्रा के लिए आये हुए हैं, सबके पास खबर भेज दी गई है और सब श्रीनगर की ओर चले जारहे हैं। अँधेरा होते-होते हमारे दोनो शिकारी नाला देखकर लौटे और बताया कि उन्हे पाँच-छह अच्छे शापू दिखाई दिये हैं। कल बड़े तडके उठकर अगोट दी जाय तो शापू मिल जायँगे। अत. हम लोग खा-पीकर शीघ्र सो गये। यह स्थान गरम तथा नीचा होने के कारण नीद भी शीघ्र आ गई।

: २६ :

शे के मेले की मुसीबत

मगलवार, २२ अगस्त

यहाँ सूर्योदय लगभग पाँच बजे होता है और उजेला तीन बजे के पश्चात् होने लगता है। हमे शापू की अगोट देनी थी। अतः तीन बजे तैयार होकर नाले की उपत्यका मे जा बैठे। हमने नौकरो को समझा दिया था कि वे भोजन तथा सामान लेकर आठ वजे लेह के मार्ग पर, जहाँ नाला मिलता है, हमारी प्रतीक्षा करे। पडाव से नाला लगभग दो मील होगा और सिन्धु के सहारे मार्ग था, अत' समतल था। हम चार बजे के पूर्व ही अपने-अपने स्थान पर पहुँच गये थे। उपत्यका के पूर्व मे दाऊसाहब तथा पश्चिम मे मै वैठा था। हमे पूरी उपत्यका दिखाई दे रही थी। जगली जानवर सन्ध्या समय नीची भूमि मे चरने आते है और सबेरे ऊँची जगहो मे जहाँ कोई न जाता हो, जाकर विश्राम करते हैं। जबतक उन्हे कोई खटका न हो, प्राय एक ही मार्ग से जानवर आते-जाते हैं। इसी मार्ग पर उनके खॉद देखकर उनके आने-जाने के मार्ग पर जा बैठने को अगोट की शिकार कहते है। कुछ ही देर बाद हमने देखा कि छह शापू हमसे उत्तर की ओर उपत्यका मे ऊपर चढते जा रहे हैं। हम समझ गये कि हमे देर हो गई। इनका पीछा करना व्यर्थ था। दूसरे हमे आशा थी कि सम्भव है, कोई दूसरा झुड सिन्धु के किनारे से आ जाय। जब नौ बज गये और हमे दूसरे शापू के आने की आशा न रही तो उतरकर लेह के मार्ग पर पहुँचे, जहाँ हमे हमारे नौकर मिल गये।

लगभग बारह बजे हम रनबीरपुर पहुँचे। इसी समय लेह से पादरी वाल्टर एसबो का भेजा पत्र तथा कुछ समाचार-पत्र मिले। पादरी ने पत्र मे लिखा था कि यूरोप मे युद्ध छिड जाने की पूरी सम्भावना है। अत जहाँतक हो सके हम लद्दाख की शिकार खेलकर श्रीनगर की ओर चल दे। उसने यह भी लिखा था कि जितने भी फौजी अफसर इधर शिकार

खेल रहे थे, वे सब बुला लिये गये हैं। हमें लद्दाख छोडने के पूर्व रम्पक ब्लाक मे, जो मेरे नाम था, शापू की शिकार खेलनी थी, अत मैंने कहा कि आज लेह से दक्षिण मे सिन्धु के पुल पर रातभर रहा जाय ताकि कल उठकर, पुल को पार कर रम्पक पहुँचा जाय। वहाँपर शापू की शिकार खेलकर लेह होते हुए श्रीनगर लौटा जाय, परन्तु नौकरो ने कहा कि कल शे मे, जो हमारे मार्ग मे है, बडा मेला लगने वाला है। अभीतक हम-लोगो ने मेला नही देखा था। यह निश्चय हुआ कि हमलोग आज रन-बीरपुर में ठहरे और यही किया।

सध्या समय मालूम हुआ कि लद्दाख के वजीरसाहब भी शे पहुँच गये है। शे के मेले की वडी चर्चा थी। सुनने से ऐसा मालूम पडता था कि कल वडी भीड देखने को मिलेगी।

बुधवार, २३ अगस्त

सबेरे सात वजे तक हमलोग तैयार हो गये। इसी समय कलवाला भोटा अपने कोट मे छिपाये एक काला कुत्ता लाया। मुझे बहुत पसन्द आया। इसका नाम टुडुप था। मैंने पाँच रुपये कीमत के तथा एक रुपया इनाम का देकर कुत्ता ले लिया। चलते समय हिसाव तथा इनाम-इकराम को लेकर खूब चख-चख हुई। आखिर जैसे-तैसे निपटाकर आगे बढे। दस वजे के लगभग जव हम शे के पास पहुँचे तो मोख्तालोन तथा हमारे सामान के टट्टू खडे हुए मिले। कुछ देर विचार-विमर्श के पश्चात् यह तय हुआ कि मेला देखने के लिए दिन खराव करना उचित नही है। लेह के पासवाले पुल को पारकर ठहरना ठीक होगा, ताकि कल रम्पक पहुँचकर शापू की शिकार खेली जाय।

शे एक वडा गाँव है और यहाँ एक पहाड पर वड़ा सुन्दर गोम्पा वना हुआ है। सडक के दोनो ओर कुछ दुकाने लगी हुई थी और थोडे आदमी भी आ गये थे। पूछने पर मालूम हुआ कि सन्ध्या समय यहाँ वजीर आयँगे और कल मेला पूरा भर जायगा। सडक के पास दोनो तरफ थोडा पानी भरा हुआ था, जिसमें हमे सैकडो स्नाइप (जाड़े में आनेवाले पक्षी, जिनकी शिकार खेली जाती है) दिखाई दिये। वे हमसे विल्कुल नही डरते थे। आश्चर्य में आकर दाऊसाहव वोले कि यहाँ के स्नाइप

ऐसे मालूम होते हैं मानो पाले हुए हो। वास्तव मे वे हमसे पाँच-छह गज की दूरी पर बैठे हुए दिखाई दिये। जब हम शे से आगे बढने लगे तो हमारे भोटे बोले कि वे चकलुनसर के पासवाले पुल से आगे नही जायगे। हमने उन्हे बहुत लालच दिया कि वे हमें रम्पक तक छोड आये, परन्तु उन्हे तो शे का मेला देखना था, अत राजी न हुए। हम भी समझते थे कि शे के मेले के कारण हमें चकलुसनर में टट्टू न मिलेंगे। लद्दाखी लालची नही होते। इसलिए इन्हे राजी करना कठिन है। लगभग दो बजे हमलोग पुल के पास पहुँच गये और सरकारी पडाव पर हमारा सामान उतार कर रनबीरपुर के भोटा चल दिये। यहाँ से लेह लगभग तीन मील है। मैंने हबीबा को डाक लेने भेजा और दोनो शिकारियो को चकलुनसर तथा स्ताक की ओर टट्टू के लिए भेजा। स्ताक सिंधु के दक्षिण मे अच्छा गाँव है, जहाँपर लद्दाख का राजा रहता है। इसे काश्मीर राज्य से कुछ रुपया मिलता है तथा इसकी कुछ भूमि तथा मकान भी हैं। लद्दाखी इसे अब भी बडे आदर की दृष्टि से देखते हैं। यहाँ के चौकीदार ने बताया कि राजा की एक जवान बहन दो वर्ष से एक मकान मे बन्द है और तपस्या कर रही है। चौकीदार ने यह भी बताया कि आज सन्ध्या समय इसी पुल पर होकर राजा लेह से स्ताक को लौट रहे हैं। छह बजे के लगभग पुल पर चालीस-पचास आदमी राजा को देखने इकट्ठे हो गये। जब राजा घोडे पर चढा हुआ वहाँ से निकला तो सबने झुककर 'जू ले' कहकर उसका अभिवादन किया। हमने भी जब अभिवादन किया तो घोडा रोककर हमसे थोडी देर दुभाषिया द्वारा बात करके चला गया।

हबीबा ने आकर हमारी डाक दी और जो सामान मँगवाया था वह भी ले आया। हबीबा के साथ शिकार-विभाग का जमादार भी आकर मिला। दिन डूबनेवाला था, तब भी हमारे शिकारी नही लौटे थे। यह देखकर हमारे नौकर कह रहे थे कि सामान खोलकर तम्बू लगाये जायँ और भोजन पकाना प्रारम्भ करे। इतने मे दोनो शिकारी थोडे-से भोटे लेकर आये और बताया कि शे के मेले के कारण यथेष्ट टट्टू नही मिलेंगे। आज हमे पुल पारकर एक मील की दूरी पर ठहरना होगा। आवश्यक

सामान भोटे सिर पर ले जायँगे और शेष सामान एक भोटा के घर छोडना होगा। सवारी के लिए दो टट्टुओ का प्रबन्ध हो गया है। अंधेरा होते हमलोग चकलुनसर के एक खिरक मे जा ठहरे।

गुरुवार, २४ अगस्त

आज सबेरे सात बजे रवाना हुए। हमलोग सिंधु के किनारे लगभग बारह मील चलकर रम्पक नाले की उपत्यका मे दक्षिण की ओर मुड गये। लगभग बारह बजे हम जिचेन पहुँचे। रास्ता पथरीला और खराब है। कई जगह नाले को पार करना पडा। जिचेन मे दो घंटे विश्राम किया और खाना खाया। जिचेन से आगे मार्ग और भी खराब था। कई जगह टट्टू से उतरना पडा। रम्पक के पास पहुँचते ही उपत्यका चौडी हो गई और खेत दिखाई दिये। अब खूबानी के फल बिलकुल नही रहे थे, परन्तु सेब पक रहे थे।

हम लोगो को रम्पक जानेवाले बडी कठिनाई से मिले थे। इनसे यह शर्त भी थी कि वापसी मे यही लोग हमारा सामान लेह तक ले जायंगे। तब कही वे हमे रम्पक लाने को तैयार हुए थे, अन्यथा सब गे के मेले मे जा रहे थे।

यहाँपर लोगो से पूछने से पता चला कि अभी-अभी तीन साहब रम्पक मे शिकार के लिए आये, परन्तु किसीको भी शापू नही मिला। यह तो मै पाठको को बता चुका हूँ कि लायसेंस मे ब्लाक लिखे होते हैं, परन्तु यह प्रदेश जन-शून्य होने के कारण शिकारी जहाँ जी मे आता है शिकार खेलता रहता है। उदाहरणार्थ रम्पक ब्लाक मेरे नाम है, परन्तु तीन साहब शिकार खेल चुके हैं। लोगों से पूछ-ताछ करने से यह भी पता चला कि यहाँ इस साल शापू बिल्कुल नही दिखाई दिये। वैसे यह ब्लाक शापू की शिकार के लिए प्रख्यात है। जब हम काश्मीर से लेह आ रहे थे तब लामायुरु के पड़ाव पर हमे बताया गया था कि वहाँ शापू बहुत हैं। अतः यह तय हुआ कि काश्मीर लौटते समय लामायुरु दो-तीन दिन ठहर कर शापू की शिकार खेली जाय। हम लोगों ने यहाँ की परि-स्थिति समझकर कल के दिन शिकार खेलना और परसो चल देना ठीक समझा।

दाऊसाहब शापू मार चुके थे, अत वे चाहते थे कि कल विश्राम करे। परन्तु मैने उनसे अनुरोध किया कि मै दक्षिण-पश्चिम मे शापू के लिए जाऊँगा और वे पूर्व मे, जहाँ भरल बहुत बताये जाते हैं, जायँ।

: २७ :
फिर भरल मारे

शुक्रवार, २५ अगस्त

आज सवेरे छह बजे हम शिकार के लिए दक्षिण की ओर नाले के सहारे चले। यहाँ से (रम्पक) तीन मील पर थोडे से घर हैं, जहाँ से हमे एक भोटा को लेना था जो इस ओर की शिकार की जानकारी रखता था। बडा खराब रास्ता था। कई जगह घोडो से उतरना पडा। घोड़े की काठी बिल्कुल टूट चुकी थी। केवल तग (जो कपडे का था) के अतिरिक्त चमडे का सामान कुछ नही रहा था। ऊपर कम्बल कसा था तथा बाग और रकाब रस्सी के बना लिये थे। भोटे को लेकर कई पहाडियाँ चढते-उतरते फिरे, परन्तु मामट के अतिरिक्त कोई जानवर नही दिखाई दिये। इधर के मामट हिमालय की चोटी के मामटो से बहुत छोटे है। दोपहर के समय खाना खाकर जब वापस होने लगे तो लगभग दो बजे हमे एक भरल का झुड दिखाई दिया। तीन घटे तक इसका पीछा किया, परन्तु पास नही पहुँच सके। आज भटकते-भटकते काफी थक गये थे और दूर भी बहुत निकल गये थे, अत. उक्त झुड को छोडकर रम्पक के लिए चल दिये। दिन डूब चुका था, परन्तु उजाला काफी था और रम्पक आधा मील रहा होगा, इतने मे हमारे साथ के एक भोटा ने दाहिनी ओर के पहाड की ओर हाथ उठाकर बताया, 'देखिये, भरल खडे हैं।" हमारे ठीक ऊपर लगभग एक हजार फुट की ऊँचाई पर सोलह-सत्रह भरल कतार बाँधे खडे हमे देख रहे थे। पास ही एक बडी चट्टान थी। उसपर मैने बन्दूक रक्खी और मोल्लालोन से दूरबीन लगाकर देखने और दाहिनी ओर से गिनती प्रारम्भ कर के यह बताने को कहा कि कौन-सा भरल सबसे बडा है। वे हमसे इतनी ऊँचाई पर थे कि वैसे

यह नही मालूम देता था कि कौन-सा बडा है। भोटे तथा टट्टुओ को आगे बढकर आड मे खडे रहने को कह दिया।

मोख्तालोन ने पाँच मिनट तक देखकर कहा कि नम्बर दो सबसे बडा है और मुझे भी दूरबीन से देखने का अनुरोध किया। मैंने इसकी आवश्यकता नही समझी। तबतक मैंने चट्टान पर साफा रखकर उसपर रायफल जमा ली थी। सावधानी से लक्ष्यकर बन्दूक चला दी। धडाके के साथ ही नम्बर दो वाला भरल उछलता दिखाई दिया और मोख्तालोन ने मेरा हाथ पकडकर चट्टान के नीचे छिपने को कहा। कुछ ही सैकिंड मे उक्त भरल लुढकता हुआ हमसे कुछ ही दूर पर नीचे नाले के किनारे जा ठहरा। मोख्तालोन बोला, "खूब चोट लगाई !" मै भी प्रसन्न था। इतनी दूर और बारीक चोट बहुत कम लगाई थी। गोली भरल के सीने मे लगी थी और वह मरा पडा था। केवल एक सीग थोडा-सा टूट गया था। सीग मामूली यानी बहुत बडे नही थे। बन्दूक का धडाका सुनकर कई भोटे दौड आये थे और इतनी दूर की चोट देखकर आपस मे मेरी प्रशसा कर रहे थे। अधेरा होते-होते पडाव पर लौटे तो दाऊसाहब ने बताया कि वे भी एक भरल घायल कर आये हैं, जो बहुत बडा है। वे पहले की भाँति भोटो को इनाम की कह रहे थे। मुझे यह तरीका पसन्द न था, परन्तु इन्हे मैं रोक नही सकता था। रात को खाना खाते समय हमारे साथ के भोटो ने बताया कि यहाँवाले उनसे लड रहे थे, कह रहे थे कि सामान वे ले जायँगे। हमने आश्वासन दिया कुछ भी हो, सामान हमारे वचनानुसार वे ही ले जायँगे।

: २८ :

हमारा बुरा हाल

शनिवार, २६ अगस्त

आज सवेरे से ही सामान ले जाने के लिए रम्पकवालो मे और हममे झगडा प्रारम्भ हो गया। कल हमने दूध, लकडी आदि लिये थे, जिनके दाम देने थे। वे नही लेने लगे और बोले कि सवारी के टट्टू भी ही हम

रक्खे, परन्तु समान वे ही ढोवेंगे । जब हमने इन्कार कर दिया तो सब हमारी शिकायत के लिये लेह को चल दिये । हमने भी कह दिया कि हम दाम लेह मे वजीरसाहब के पास जाकर देंगे । जैसा कि वे कहते थे, रेस का नियम है कि जिस गाँव मे पडाव हो, वहाँवाले सामान ले जायँ, परन्तु अब हमे इस प्रदेश मे काफी समय हो गया था और हम जानते थे कि रेस के नियम केवल श्रीनगर से लेह की सडक तक लागू हैं । अत. हमने कह दिया कि वे लेह जा सकते हैं । इसी झगडे मे काफी देर हो चुकी थी । जब हम रम्पक से तीन मील पहुँचे तो सब रम्पकवाले नाले मे मिले और क्षमा-याचना करने लगे । हम भी यही चाहते थे । दाम चुकाकर आगे बढे । आज हमे सिधु का पुल पार कर लेह की ओर के किनारे ठहरना पडा । हमारे भोटे आज लेह जाने को तैयार न थे । यहाँ-से लेह लगभग पाँच-छः मील होगा ।

अब मेरा खरीदा हुआ कुत्ता, जिसका नाम टुँडुप था, काफी हिल गया था । रात को पाँव की ओर पलँग पर बैठता था और तम्बू के पास कोई आता था तो भौकता था । पडाव पर पहुँचते ही काफी दौड लगाने लगा । रास्ते मे मै भोटा को उसे उठाने के लिये कह देता था । शेष शिकारियो के कुत्ते पैदल आते थे ।

रविवार, २७ अगस्त

आज सवेरे छः बजे के पश्चात् हम चल पडे । अन्य दिनो की भाँति आज दोपहर का भोजन पकाकर साथ नही लेना था, कारण थोडी देर मे लेह पहुँचना था । अत वहीपर गरम खाना खाने की इच्छा थी । टुँडुप आज भोटा के पास काफी चिल्ला रहा था । जब शिकारी ने कहा कि इसे घोडे पर बैठा लीजिये तो मैंने कहा कि एक तो कुत्ता घोडे पर कैसे सम्भलकर बैठ सकेगा । दूसरे, मै ऐसा निपुण सवार नही कि अपने आपको सम्भालने के साथ कुत्ते को भी सम्भाल सकू । तब शिकारी ने कहा, "इधर के छोटी जात के कुत्ते घोडे पर बैठने के आदी हैं, आप बैठा-कर देखिये तो सही ।" टुँडुप को जब मैने अपने आगे बिठाया तो तुरन्त चुप हो गया और अपने आपको खूब साधने लगा । जब मैंने यह देखने के लिये कि यह फिर भोटा के पास जाता है कि नही, उसे घोडे से उतार

दिया, तो फिर चिल्लाने लगा। अब तो टुँडुप सिवा घोडे के चलते भी नही थे।

नौ बजे के लगभग हम पडाव पर पहुँचे। यहाँ की चौकीदारिन आज साफ-सुथरे कपडे पहने हमारे स्वागत को आई। पडाव भी झाड़ू लगाकर साफ कर रक्खा था और जलाने के लिए लकडी भी थी। हमे देखकर बोली, "आपके आने की तो कल खबर थी, इसीसे मैंने कल गुसल किया था और पडाव साफ किया था। कल से मैंने यहाँ किसीको टट्टी भी नही जाने दिया। अब तो आप मुझे सामान मे हाथ लगाने देगे?" दाऊसाहब की ओर सकेत कर बोली, "जब आये थे तब आप बहुत साफ थे, अब तो आप भी हम जैसे दिखाई देते हैं।" वास्तव मे उसका कहना ठीक था, हमे लेह छोडे चालीस दिन हो चुके थे। इस बीच हमने कुल दो बार स्नान किया था। कपडे मैले हो चुके थे। काठी का चमडा टूट चुका था। मुँह का चमडा भी कई बार निकल चुका था। होठ फटे हुए थे। सामान की पेटियाँ प्राय सब टूट चुकी थी। जब मैंने स्वीकृति दी, तो तुरन्त रमजानखाँ से बोली, "साहब का सामान कौन-सा है?" वह जानती थी कि रमजानखाँ दाऊसाहब का शिकारी है। रनबीरपुर से रमजान खाँ झेपा हुआ था, अत बेचारा चुप रहा। मैंने मोख्तालोन को आज्ञा दी कि वह दाऊसाहब के सामान का टट्टू बता दे। सब सामान खोलने मे लगे, तब दाऊसाहब बोले, "आज बडे साहब तथा मै एक ही तम्बू मे रहेगे। मेरा तम्बू थोड़ी दूर लगा दो ताकि उसमे हम स्नान कर सके।" मोख्तालोन बोला, "हुजूर, एक झुँगी में स्नान कर लीजिये।" दाऊसाहब बोले—"नही, मेरा तम्बू उधर लगा दो। मैं अपने तम्बू मे नही ठहरूँगा। पहले की भाँति आज भी यह मुझे हैरान करेगी।"

एक तम्बू में हम दोनो का सामान लगाया गया। दाढी बनाकर स्नान करने के पश्चात् तुरन्त डाकखाने गये। श्रीनगर से हमारे एजेंट मुहम्मद बाबा का पत्र था कि हमारे आदेशानुसार वह पाँच सौ रुपये का मनीआर्डर कर चुका है तथा और आवश्यकता हो तो तार से मनीआर्डर द्वारा भेजे। पोस्टमास्टर से जब हमने मनीआर्डर के लिये कहा तो वे बोले कि आज रविवार है, कल जितना जल्दी हो सकेगा, तहसील से

रुपये मँगवा कर देंगे। यहाँ का डाकघर काश्मीर राज्य का है, अत डाक-खाने के रुपये तहसील में रहते हैं। जब हमने पोस्टमास्टर से कहा कि हम कल जितनी जल्दी हो सके जाना चाहते हैं तो वे बोले कि यदि हम तहसीलदार से मिलकर कह दें कि पोस्टमास्टर के लिखने पर शीघ्र रुपये दे दे तो काम जल्दी हो जायगा, नही तो दिन के दो बजे तक रुपये मिल सकेंगे।

स्टोर से सिगरेट तथा बिस्कुट लेते हुए ग्यारह बजे पडाव पर पहुँचे। भोजन करने के पश्चात् हम दोनो मि० वाल्टर एसबो के पास गये। उन्होने हमे दस-बारह दिन के समाचार-पत्र देकर सक्षेप मे ससार के समाचार बताये और कहा कि हमें अब काश्मीर की ओर चले जाना चाहिए। जर्मनी शीघ्र ही पोलेण्ड पर चढाई करनेवाला है और युद्ध अनिवार्य है। उन्होने यह भी कहा कि हम खल्तसी, कर्गिल तथा द्रास के डाकघर में उनके पत्र या तार की तलाश करे। यदि युद्ध छिड गया तो वे हमे खबर देगे। समाचार-पत्र तो दिल्ली से लेह आठ दिन मे पहुँचते हैं, परन्तु मि० वाल्टर एसबो के पास रेडियो है, जिससे उन्हे सब खबरें मिलती रहती है। इन्हे धन्यवाद देकर जब हम लौटे और यह सोच रहे थे कि तहसील-दार से मिलने जायँ, इतने मे उन्हीकी ओर से हमे निमन्त्रण मिला। लद्दाख के गवर्नर का तबादला हो गया था। अत उनके सम्मान में आज चार बजे चाय-पानी था।

हमारे यहाँ आने की खबर गाँवभर मे हो गई थी। वही आर्य-समाजी महाशय तथा दो-चार हिन्दू भाई आ पहुँचे और हमें भोजन तथा भाषण के लिए निमत्रण देने लगे। हमने सबको यह कहकर टाल दिया कि हम लोग थके हुए हैं, दूसरे हमे कल जाना है और आज ही बाजार का कार्य पूरा करना है।

नौकर टूटे हुए सामान को ठीक कराने में लगे हुए थे। हम दोनो चार बजे गवर्नर के मकान पर पहुँचे। लेह के प्राय. सब भले आदमी उप-स्थित थे। गवर्नर से मैं मिल चुका था। मैंने डाक्टसाहब को उनसे मिलाया तथा अपने शिकार का सब वृत्तान्त कहा। वे बोले कि वे मुजफ्फराबाद जा रहे हैं और हमें वहाँ शिकार के लिये निमन्त्रण दिया।

जब हमने तहसीलदारसाहब से मनीआर्डरवाली बात कही तो उन्होंने पोस्टमास्टर से, जो वही उपस्थित थे, कह दिया कि जिस समय वे लिखेगे उसी समय रुपये दे दिये जायँगे। पूछने पर मालूम हुआ कि यहाँ से यात्री लोग चीन की हरी चाय, जिसकी ईटे बनी रहती हैं, ले जाते हैं। कुछ यहाँ से शिगर के आये हुए पत्थर के प्याले तथा कटोरे भी ले जाते हैं। इस पत्थर के लिये कहा जाता है कि कोई भी विष इसमें डाला जाय तो यह टूट जाता है। यहाँ पीरोजा (एक प्रकार का सस्ता रत्न) भी बहुत मिलता है।

हमने हरी चाय, शिगर के कटोरे तथा गिलास खरीदे। सध्या समय पडाव पर आये तो सब नौकर भी उपस्थित थे। अघेरा पडते-पडते भोजन करके जब सोनेवाले थे, रम्पक से एक भोटा आया और दाऊ-साहब का घायल किया हुआ भरल का सिर लाया। अच्छा, वडा २६ इच के सीगवाला भरल था।

सोमवार, २८ अगस्त

सबेरे पोस्टमास्टर ने खबर भेजी कि रुपये ग्यारह वजे मिलेंगे। दस वजे के लगभग हमने भोजन करके सामान टट्टू पर लदवा दिया और नेमू पर पडाव डालने के लिए आगे भेज दिया। अपने साथ के लिए एक नौकर रख लिया। कल की भाँति आज भी यहाँ के चौकीदार ने सामान लादने मे सहायता दी।

हमे डाकघर एक घटे के लगभग ठहरना पडा। जव रुपये मिल गये तब साढे ग्यारह वजे के लगभग लेह से चले। आज मुझे वहुत खराव टट्टू मिला था। कई जगह ठोकरे खाई और गिरते-गिरते वचा। टुँडुप जो मेरे सामने वैठा था, तीन-चार वार गिरा। लेह से खल्तसी तक सिधु का उत्तरी किनारा वडा उपजाऊ है। गेहूँ और जौ के खेत पके हुए हैं और सेव के पेड भी पके फलो से लदे हुए हैं। गेहूँ के खेतो मे एक प्रकार की तरकारी, जो मालवा मे अफीम के खेतो मे होती है और जिसे वहाँ दक्षिणी मटर कहते है, वहुत लगी है। लगभग छह वजे थके-माँदे नेमू पहुँचे। एक तो लगभग अठारह मील चलना पड़ा, दूसरे इस रास्ते मे घूल वहुत थी। हमारा सामान पहुँच चुका था। लेह से

खल्तसी तक बरावर उतार है और गरमी अधिक होती है । आज यहाँ के डाक-बँगले मे एक अमरीकन तथा उसकी पत्नी आकर ठहरे । ये लोग लेह से वापस श्रीनगर जा रहे थे ।

मगलवार, २९ अगस्त

सबेरे उठे तो मालूम हुआ कि दोनो अमरीकन चले गये है । शिकारियो के साथ सामान विशेष होता है, अत इन्हे लादने में काफी समय लग जाता है । पर्यटन करनेवाले के साथ बिस्तर के अतिरिक्त कुछ भी नही होता , अत वे तुरन्त तैयार हो जाते हैं । लगभग सात बजे हम भी चल पडे । बडा सुन्दर तथा हरा-भरा प्रदेश है । जगह-जगह छोटे-छोटे बालक फूल लिये हुए हमारे स्वागत के लिये खडे मिले । अन्य जगहो की भॉति यहाँ कोई कुछ नही माँगता । केवल पास पहुँचने पर मुस्कराकर फूलवाला हाथ सामने बढा देता है । यदि इच्छा हो तो ले लो और कुछ दे दो, अन्यथा उन्हे कोई ऐतराज नही । बारह बजे के लगभग शुरापुल पहुँचे । यह बहुत बडा गॉव है और यहाँपर सेव के कई बाग हैं । पडाव के दक्षिण की ओर एक धनी का घर तथा बाग है । यह लद्दाख के प्रतिष्ठित घराने का है और राज्य मे गिरदावर कानूनगो है । बाग मे सेव तथा खूबानी के कई पेड हैं । खूबानी मे तो थोडे फल रह गये थे, परन्तु सेव खूब पके थे । यहाँ तम्बू लगा दिये गये ।

हम चाहते थे कि आज हम मि० वाल्टर एसबो से लाये हुए समाचार-पत्र पढे, परन्तु शिकारियो का विशेष अनुरोध देखकर हिसाव करने को बैठ गये । मैंने अपना हिसाब आध घटे के भीतर देखकर मोल्तान्नोन को रुपये दे दिये और समाचार-पत्र पढने लगा । दाऊसाहब रमजानखाँ से बहस कर रहे थे । हमारे तम्बू से दस गज दूर बाग की पत्थर की दीवार थी, जहाँ धनिक के घर की दो युवतियाँ तथा एक दस-बारह वर्ष का बालक खडे हुए हमे और हमारे सामान को देख रहे थे । इन तीनो के कपडे रेशम के थे और दोनो युवतियाँ असाधारण सुन्दर थी । इससे हठात् मेरी दृष्टि अखवार से उचटकर उनकी ओर जा रही थी । रमजानखाँ ताड गया । वह दाऊसाहब को समझाते-समझाते हैरान हो गया था, अत तुरन्त लद्दाखी में उन तीनो से बाते करने लगा । हम

तो कुछ नही समझे, परन्तु वे सब हँस रहे थे। थोडी देर मे रमजानखाँ मुझसे बोला, "लीजिये हुजूर, इनके हाथ का सेव तो आप खायगे। मैंने इन्हे यह बता दिया है कि आप गदे हाथ से तोडे सेव नही खाते और ये दोनो कहती हैं कि लद्दाख से बिना सेव खाये जाने मे हमारा अपमान है। तुम साहब से कहो कि हम खुद पेड पर चढकर सेव तोडकर लाती हैं और साहब को देती हैं।" जब मैंने कहा कि इनके हाथ के सेव तो खालेगे, परन्तु इन्हे दाम लेने होगे तो वे बोली कि वे गरीब नही हैं और हमे तो वे अतिथि समझती हैं। जब हमने दाम देने के लिए हठ ठानी तो वे इस शर्त पर राजी हो गई कि हम सब जितने चाहे सेव और खूबानी खायँ, परन्तु वे लेगी सिर्फ चार आने। अच्छे-अच्छे सेव तथा खूबानी तोडकर लाती थी और पत्थर की दीवार के उधर से हमे देती जाती थी। एक युवती कानूनगो की बेटी, दूसरी पुत्र-वधू तथा बालक (द्वितीय-पुत्र) था। बडी स्वादिष्ट खूबानी तथा सेव थे। मैंने पुत्र-वधू से पूछा कि क्या यह बालक भी उसका पति है ? उसने जवाब दिया, "अभी नही, जब बडा होगा, तब।" दूसरी अभी क्वारी थी। बहुत देर तक वार्त्तालाप होता रहा। जब हम सब खूब खा चुके तो चार आने लेकर वे चले गये।

रातवाले अमरीकन यहाँ नही ठहरे थे। घोड़े बदलकर आगे बढ गये थे, अत हमने भी यह तय किया कि सामान से आगे चलकर नुर्ला मे टट्टू तैयार रक्खे जायँ और वहाँ से आगे बढकर खल्तसी मे रात को रहा जाय।

खल्तसी के पास शापू भी मिलते हैं। रात मे यहाँ भी काफी गरमी थी। वैसे यह गाँव काफ़ी हरा-भरा है।

बुधवार, ३० अगस्त

आज सवेरे साढे पाँच बजे सामान को पीछे छोड़कर हम दोनो चल दिये और ग्यारह बजे नुर्ला पहुँचे। शिकारी को भेजकर टट्टुओ का प्रबन्ध कराया। लगभग दो बजे जब हमारा सामान आया तो नुर्ला के टट्टू पर लादकर चार बजे के लगभग हम खल्तसी पहुँचे। नुर्ला से खल्तसी केवल सात मील है। खल्तसी मे तार तथा डाक घर भी है।

इसीके पास यहाँ का पडाव है, जो अच्छा नही है। लद्दाख मे सिंधु उपत्यका का यह सबसे निचाई पर गाँव है। जनसख्या मे लेह से दूसरे नम्बर का है। यहाँ पर अखरोट के पेड काफी हैं। गरम होने के कारण अन्य ग्रामो की अपेक्षा बहुत हरा-भरा है। शापू के लिये पूछने पर मालूम हुआ कि गरमी के कारण इस समय शापू यहाँ नही मिलेगे। वे इस समय लामायुरु की ओर होगे। हमें उधर जाना ही था, अतः यह तय हुआ कि कल यहाँसे चलकर लामायुरु पहुँच जाय।

गुरुवार, ३१ अगस्त

सवेरे छह बजे चले और सिंधु का पुल पारकर ग्यारह बजे लामायुरु पहुँचे। आज केवल दस-ग्यारह मील चलना पडा, परन्तु सिंधु का किनारा छोडते ही हमे लगभग सात मील चढना पडा। थक गये। लामायुरु ऊँचाई पर होने के कारण सिधु के किनारे के गाँवो से ठडा है। यहाँके चौकीदार को हम जानते थे। उसके द्वारा शापू की शिकार को जाननेवाले आदमी बुलाये गये। पूछने पर मालूम हुआ कि यहाँ बहुत शापू हैं और आसानी से शिकार हो सकती है। कल यही ठहरने का निश्चय हुआ। सोनम नामक भोटा तथा दो और भोटे एक रुपया रोज पर हमने रख लिये। यहाँ का पडाव नाले के किनारे है और पेडो की छाया भी काफी है। बडा सुहावना है। नाले में बहुत-से चकोर हैं। चार बजे के लगभग एक मेम आकर डाक-बँगले मे ठहरी। यह भी श्रीनगर जा रही थी।

यहाँका चौकीदार औरो की अपेक्षा धनी और पढा-लिखा है। इसने भारतवर्ष के बौद्ध तीर्थो का वर्णन पूछा। हम जितना जानते थे उसे बता दिया। यूरोप के युद्ध की चर्चा भी चली। जिसे देखो, युद्ध की पूछता था, परन्तु हम क्या बता सकते थे?

शुक्रवार, १ सितम्बर

आज सवेरे छः बजे मैं, मोस्तालोन, सोनम, एक भोटा तथा दो टट्टू लेकर शिकार को निकले। इसी प्रकार दाऊसाहब भी गये। हम उत्तर-पश्चिम की ओर तथा दाऊसाहब उत्तर-पूर्व की ओर गये। पहाडो पर पत्थर बहुत होने के कारण आज मुझे पैदल बहुत चलना पडा। दोपहर

मे एक नाले के सहारे भोजन करते समय एक घटा विश्राम किया होगा, अन्यथा चलते ही रहे। चार बजे के लगभग जब हताश होकर लौट रहे थे तो सात शापुओ का झुण्ड दिखाई दिया, जो हमसे एक हजार फुट की ऊँचाई पर था। टट्टू छोडकर दाव लगाते हुए हम शापू से तीन सौ गज पर पहुँच गये। यहाँसे आगे छिपने की जगह न थी, अतः थोडी देर ठहरकर फैर करने का निश्चय किया। सब शापू बैठे थे। दूरबीन से देखने पर मालूम हुआ कि सब अच्छे सीगवाले है। मोख्तालोन ने कहा, "अभी तक आप बहुत सोच-समझकर बन्दूक चलाते आये हैं, लेकिन आज आप नये शिकारियो की तरह बराबर फैर करते रहिए। मुमकिन है कि अघे के हाथ बटेर लग जाय।" मैं भी जानता था कि कल तो चल ही देना है। जो कुछ करना-धरना है, अभी कर लिया जाय। पत्थर के ऊपर साफा रखकर उसपर रायफल जमाकर बड़े ध्यान से फैर किया। धडाके के साथ सब शापू उछलकर एक चट्टान की ओट मे ओझल हो गये। जबतक नली मे दूसरा कारतूस डाला, शापू ऊपर की ओर भागते दिखाई दिये। देखकर मोख्तालोन ने कहा, "सिर्फ छ शापू जा रहे हैं। एक गिर गया। अब आप सबसे ऊपरवाले शापू पर फैर कीजिये और बराबर फैर करते जाइये।" मैने वैसा ही किया। गोली से बरावर धूल उडती रही। शापू हमसे उत्तर की ओर पहाड़ चढते जा रहे थे। चौथे फ़ैर के बाद मोख्तालोन ने और कारतूस दिये। शापू एकदम बाँई ओर मुडकर पहाड उतरने लगे। मैने मेगज़ीन मे चार कारतूस और डाले और अब की बार थोडा ठहरकर जब शापू खड के पार हमारी बरावरी पर आये तो फैर किया। फैर के साथ ही शापू, जिसके गोली लगी थी, गिर पडा और खूब धूल उडी। शेष पाँच भागते रहे गये। मैने छठा फैर किया, परन्तु वह बच गया। अब वे बहुत दूर निकल गये थे। अत मैंने फैर करना बद कर दिया। जिसपर पाँचवाँ फैर किया था वह शापू फिर उठ खडा हुआ और गिरता-पडता धीरे-धीरे खड में उतरकर ओझल हो गया।

पाँचवे फैरवाला शापू गिरता दिखाई दिया था और लुढकता हुआ खड मे उतरा था। सो इसका तो निश्चय ही था कि मर जायेगा, परन्तु

पहले फैरवाले शापू को देखना था कि क्या हुआ ? अनुमान यह था कि चट्टान की आड मे मरा पडा होगा। हॉफते हुए जब ऊपर चट्टान के पार पहुँचे तो वहाँ खून अथवा ऐसा कोई चिन्ह न था, जिससे यह मालूम हो सके कि शापू को गोली लगी है। उधर हमे सात शापुओ मे केवल छ ही दिखाई दिये। अत सातवाँ मरना ही चाहिए था। ऐसी कोई आड नही थी, जहाँसे वह पहाड पार कर सकता था।

मै बहुत थक गया था और छ बज चुके थे। मोख्तालोन और सोनम को आगे बढकर देखने लिये छोडकर, मै भोटे के साथ पडाव के लिये लौट पडा। थोडा-सा उतरने पर हमे लामायुरु का मार्ग मिल गया और सात बजे के लगभग पडाव पर पहुँचे।

दाऊसाहव तीन बजे लौट आये थे। एक शापू मार कर लाये थे, जो बहुत छोटा था। अठारह इच लम्बे सीग थे। इनको थोड़े ही शापू दिखाई दिये, जिनमे भी अधिकाश मादाएँ थी। जब मैने अपना हाल सुनाया और कहा कि पॉचवॉ फैर लगभग छ सौ गज पर भागते हुए शापू को लगा तो वे बोले, "अधे के हाथ बटेर लगना इसीको कहते हैं। यदि आप फैर करने मे कजूसी करते तो शापू कैसे मार सकते थे?"

हमलोग यही बाते कर रहे थे कि यदि दोनो शापू मिल जायँ तो उत्तम होगा, इतने मे लगभग आठ बजे मोख्तालोन तथा सोनम आ गये और बताया कि पहला शापू चट्टान से सौ गज की दूरी पर गिर गया था, जहाँ काफी खून था, परन्तु अपने पहुँचने की आहट पाकर, सम्भव है, और ऊपर चढ गया। एक जगह और वह गिरकर घिसिटता हुआ गया है। कुछ समय और देखने के पश्चात् देर होते देखकर वे दूसरे शापू को विना देखे लौट आये। वैसे दूसरे शापू के मिल जाने की पूरी सम्भावना थी। जहाँ मैंने फैर किये थे उसी पहाड के नीचे से हमे कल जाना था। दाऊ-साहव ने कहा कि सोनम तथा एक और भोटे को तलाश के लिये भेजा जाय। यदि ये ढूँढकर ला दे तो इनको इनाम दिया जाय। मैने शर्त यह रक्खी कि यदि उक्त शापू मरे होगे तो कल गिद्ध दिखाई देंगे, तब मै इन्हे भेजूंगा। सोनम तथा मोख्तालोन को दूसरे का तो पूरा विश्वास था कि मर गया है, परन्तु पहले के लिए सोनम ही कहता था कि वह भी मर

गया है। सोनम ने कहा कि यदि दो दिन में भी मिल गये तो वे कर्गिल तक पहुँचकर हमे ला देगे।

: २६ :
शापू हाथ लगे

शनिवार, २ सितम्बर

आज सवेरे जान-बूझकर चलने मे देर की गई, ताकि शापू यदि मरे हो तो गिद्ध उन्हे देख ले और मॅडराते हुए दिखाई दे। हम लोग सात बजे के पश्चात् चले। चार मील चलने के बाद हम उस जगह पहुँचे जहाँ से उत्तर की ओर के पहाड पर मैंने शापू पर फैर किये थे। टट्टू से उतरकर मैंने दाऊसाहब को दोनो स्थान बताये, जहाँ शापू गिरे थे। दूरबीन लगाकर मोख्तालोन देख रहा था। उसने देखकर कहा, "देखिये, दोनो जगह गिद्ध बैठे हैं। अब तो आपको यकीन हो गया कि शापू मर गये। अगर आप चार घटे ठहर जायँ तो हम लोग अभी उठाये लाते हैं।" दूरबीन से देखने पर मुझे भी विश्वास हो गया कि शापू मर गये। दोनो जगह गिद्ध दिखाई दिये थे। मैंने सोनम तथा दो भोटो को शापू उठा लाने को कह दिया। हमलोग भोटखर्बू के लिये चल दिये। आज का पडाव दूर था। तीन बजे खर्बू पहुँचे।

सध्या समय यहाँपर पोलो का मैच होना था। अत हम भी पाँच बजे देखने गये। घोडे तथा सामान को देखते यहाँवाले पोलो अच्छा खेल लेते हैं।

रविवार, ३ सितम्बर

सोनम का भेजा हुआ भोटा दोनो शापू लेकर रात मे आ गया। सवेरे जागने पर उसने दोनो शापू बताये। गिद्धो ने थोड़ा चमडा खा लिया था, परन्तु और सब ठीक था और मुझे भी विश्वास हो गया कि वे परसो के मरे हुए तथा मेरे ही मारे हुए हैं। एक के सीग २६½ इच तथा दूसरे के २५ इच थे। भोटे को इनाम देकर विदा किया। तब दाऊसाहब बोले, "यदि इसी प्रकार आप अपने घायल जानवर ढुंढवाते तो

कितने ही आपको और मिल जाते।" मैंने कहा, "आप ठीक कहते हैं। दो तिब्बती हिरन, तीन अमन और एक भरल और मिल जाते, परन्तु मेरे पास समय कहाँ था ? उस जन-शून्य प्रदेश मे ज्यादा ठहरना पसन्द न था, दूसरे वहाँपर ढूँढना असम्भव न हो, परन्तु कठिन अवश्य था।"

आज सवेरे छह बजे तापमान ५६ डिगरी था। हम लोग लगभग सात बजे चले और लगभग दो बजे मुलबेख पहुँचे। गाँव के पास वही चतुर्भुजी मूर्ति फिर मिली। आज आकाश मे बादल न होने के कारण मूर्ति को भली प्रकार देखा। मुझे यह मूर्ति बुद्ध भगवान की नही जान पडी, विष्णु भगवान की-सी लगी। हो सकता है, मेरे समझने मे गलती हो। जब हम नाले के पास पडाव पर पहुँचे तो हमे दो लडके और दो लडकियाँ गदहे पर बैठे पोलो खेलते दिखाई दिये।

भोटखर्बू से द्रास तक पोलो का प्रचार बहुत है। मैंने चारो को पैसे देकर उनकी फोटो खीची। मुलबेख मे हवा बहुत चलती है। आज भी यहाँ हवा खूब चल रही थी। केवल बर्फ गल जाने के कारण नाले मे पानी कम था।

: ३० :

वापसी

सोमवार, ४ सितम्बर

सवेरे पाँच बजे हम लोग मुलबेख से चल दिये, कारण आज हमे काफी दूर जाना था। लगभग दो बजे कार्गिल की तहसील के पास पहुँचे। तहसीलदारसाहब से मिले। युद्ध के बारे मे उन्होंने बताया कि १ सितम्बर को जर्मनी ने पोलेण्ड पर धावा बोल दिया और उसी दिन इगलैण्ड और फ्रास ने जर्मनी को ४८ घटे का अल्टीमेटम दे दिया है, जो रात को पूरा हो गया, परन्तु अभीतक मालूम नही कि दोनो ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की या नही। कार्गिल मे किसीके पास रेडियो नही है। यहाँपर तारबाबू के पास श्रीनगर तथा खल्तसी से खबरें आती हैं। खल्तसी के पादरी के पास भी रेडियो है।

पाठकों को बता चुका हूँ कि यहाँके तारघर काश्मीर राज्य के है। सीमा-प्रान्त होने के कारण तार-घर बनाये गये हैं, ताकि आवश्यकता पड़ने पर सीमा पर घटना विशेष हो तो तुरन्त श्रीनगर खबर भेजी जा सके। तारबाबू को कोई काम नही होता।

लगभग तीन बजे हम लोग लोहे की रस्सी की पुल पार कर कर्गिल के पडाव पर पहुँचे। चार बजे देखा तो तापमान ८६ डिगरी था। स्कूल की छुट्टी होते ही हमारे पूर्व परिचित पडितजी, जो यहाँ ड्राइंग-मास्टर हैं, आकर मिले। वही आवभगत। हमारी शिकार का सब वर्णन सुनने के पश्चात् हमे अपने घर भोजन के लिये आग्रह करने लगे, परन्तु हमने धन्यवाद देकर इन्कार कर दिया।

हमारा सब सामान टूट चुका था। जब नौकरो ने उसको ठीक करने का प्रस्ताव रक्खा तो हमने कह दिया कि घोडे की काठियाँ बैठने योग्य ठीक करा ली जायँ, शेष को वैसे ही रहने दिया जाय। हम लोग सोच रहे थे कि मछोई के पास सखना नाले मे दो-तीन दिन आय-बेक्स तथा लाल भालू की शिकार खेलकर काश्मीर की तलहटी मे उतर जायँगे। अमरनाथ के दर्शन तथा बारहसिंघा की शिकार खेलकर श्रीनगर पहुँचेगे। दूसरा प्रस्ताव यह भी था कि बारहसिंघा की शिकार न खेली जाय, क्योकि हमारे पास रुपये नही रहे थे। दोनो की आर्थिक स्थिति ऐसी नही थी कि घर से रुपये मँगा लेते। यदि घर तार देते तो उधार लेकर ही रुपये भेजे जा सकते थे।

सध्या समय आठ बजे पडितजी डाकखाने से आये और खबर दी कि कल इगलैण्ड और फ्रास ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी है। हमने तय किया कि अब बारहसिंघा की शिकार नही खेलेंगे और न मछोई के पास लाल भालू यथा आयबेक्स की ही। सीधे श्रीनगर पहुँच-कर घर जायगे।

पडितजी ने प्रार्थना की कि जो कुछ हमारे पास बचा हो वह सामान उन्हे दे दे। हमने भी उनसे पीछा छुड़ाने के लिये थोड़ी-सी ब्रॉडी, शक्कर तथा मक्खन के दो डिब्बे दे दिये।

मगलवार, ५ सितम्बर

आज पॉच बजे सवेरे कर्गिल से रवाना हो गये। काफी दूर जाना था। निचाई तथा रेत के कारण आज बडी गरमी थी। रास्ते में टुंडुप गर्मी के मारे हैरान था। मेरे सामने काठी पर बैठा था, इसकी गरमी मुझे भी लग रही थी। लगभग दो बजे गरमी से परेशान और पसीने मे लथपथ शमशाखबू पहूँचे। पेडो के नीचे तम्बू लगाकर एक घटे विश्राम किया, बाद मे स्नान करने पर चित्त प्रसन्न हुआ।

बुधवार, ६ सितम्बर

आज फिर सवेरे पॉच बजे चल पडे। कल की भॉति आज भी गरमी काफी थी, परन्तु हम बढते जा रहे थे। द्रास जब चार मील रहा तो हमें पीले रग का गुलाब जो हम जाते समय देख गये थे, मिला। पौधा उखाडकर ले जाने मे एक बोझ और होता था तथा कलम ले जाने मे यह आशका थी कि जबतक टीकमगढ पहुँचेगे तबतक लकडी सूख जायगी। अत ऐसे ही चल दिये। लगभग दो बजे द्रास पहुँचे। यह स्थान काफी ठडा है।

गुरुवार, ७ सितम्बर

आज ऊँचाई के कारण गरमी बहुत कम थी। हमारे शिकारी बराबर हमे आयबेक्स की शिकार के लिये कह रहे थे। हम कर्गिल मे ही निश्चय कर चुके थे कि अब शिकार नही खेलेगे। मटायम में दोपहर का भोजन करके आगे बढ गये। हमारा विचार था कि मचोई मे जो मटायम से पॉच मील है, ठहरा जाय। परन्तु शिकारी एक मील इधर ही ठहरना चाहते थे। कहते थे कि मचोई के पास बर्फ होने से रात को बहुत ठड लगेगी। वास्तव मे वे इस आशा मे हमे एक मील नीचे नाले के पास ठहराना चाहते थे कि रात मे हम अपना विचार बदल दे और लाल भालू तथा आयबेक्स की शिकार खेले। जब उक्त नाले पर पहुँचे तो उन लोगो ने पुन आग्रह किया। हमने स्पष्ट कह दिया कि हमलोगो की जेब खाली हो चुकी है। वे आगे बडे। मचोई हिमालय पार करते ही पहला पडाव है। यह जोजीला की चोटी पर है। यहॉपर तारघर, डाकखाना तथा ठहरने के लिए डाक-बँगला भी है। पास मे

ग्लेशियर होने से बहुत ठंडा रहता है और हवा भी बहुत चलती रहती है हमलोग तीन बजे के लगभग मचोई पहुँचे। हमारे शिकारी एक प्रकार से निराश हो चुके थे। हमने उन्हे आश्वासन दिया कि चाहे हम शिकार न खेलेंगे, परन्तु तुम्हे सितम्बर के महिने भर का पूरा वेतन दिया जायगा।

सध्या समय चौकीदार ने आयबेक्स के सीग जो ४१ इच लम्बे थे लाकर दिखाये। मैंने दो रुपये मे खरीद लिये। इधर आयबेक्स तथा लाल भालू भी काफी बताये। रात को शिकारी विचार बदलने के लिये काफी कहते रहे, किन्तु हम अपने विचार पर दृढ रहे।

कई दिनो बाद आज हमे कडी ठड मालूम हुई और लकडी जलाकर तापने की आवश्यकता हुई।

शुक्रवार, ८ सितम्बर

आज सवेरे तापमान ५६ डिगरी था। हम लोगो ने तय कर लिया था कि बालतल, जो मचोई से सात-आठ मील है, न ठहरे, आगे बढकर सोनमर्ग ठहरा जाय। मार्ग मे पुँछ, जम्मू तथा उत्तरी पजाब के गूजर अपनी भेड तथा बकरियाँ लेकर वापस जाते हुए कई जगह दिखाई दिये। पुँछ की बकरियाँ बहुत बडी होती हैं। जब हम लद्दाख जा रहे थे तब हमे कई जगह बर्फ पर चलना पड़ा था, परन्तु आज कही भी बर्फ नही था। जब हम काश्मीर की घाटी पर पहुँचे तो दक्षिण ओर की सघन उपत्यका स्वर्ग जैसी दिखाई दी। बड़े आश्चर्य की बात है कि हिमालय का दक्षिणी हिस्सा इतना हरा-भरा है और उत्तरी हिस्से मे कुछ भी नही है। प्रकृति ने मानो भारतवर्ष पर खुले दिल से कृपा की है।

बारह बजे के लगभग बालतल तथा सोनमर्ग के बीच, हम भोजन एव विश्राम के लिये ठहर गये। यहाँ भी भेड-बकरीवाले कई गूजर मिले, जिनसे मालूम हुआ कि पहाडो मे काफी बारहसिंघे हैं। काश्मीर मे शिकार का ठीक पता गूजरो से लगता है, क्योंकि वे भेड-बकरी को चराने के लिये प्रायः सब जगह घूमते रहते हैं। लेह से चलने के बाद पहली बार हमे यात्री मिले। एक सिख सरदार तथा उनका कुटुम्ब बालतल जा रहा था। जब उसने हमसे पूछा कि जोजीला के परे हिमालय का दृश्य कैसा है तो हमने कह दिया कि प्राकृतिक दृश्य देखना है तो भारत-

वर्ष की ओर ही रहे। वैसे हिमालय पार करने की इच्छा हो तो मचोई तक जा सकते हैं। वे भी यही चाहते थे, परन्तु समझते थे कि जोजीला चढने मे कष्ट होगा। हमने वता दिया कि इन दिनो कोई कष्ट नही होता।

हमलोग काश्मीर प्रदेश मे पहुँच चुके थे। वादल भी वहुत घने थे। लगभग तीन वजे सोनमर्ग पहुँचे। डाक-वँगले मे ठहरे। हमे आशका थी कि कही रात मे वर्षा न हो। आज ही हमने अपने एजेंट मुहम्मद वावा को पत्र लिखा कि हम परसो दोपहर के समय वायल पुल पर पहुँच जायँगे, अतः वे एक लारी हमारे लिये भेज दे ताकि हम तथा हमारा सामान श्रीनगर जल्द पहुँच जाय। आज हमे भोटो से विदा लेनी पडी। कारण, कल हमे काश्मीरी टट्टूवाले मिलेगे। सध्या होते-होते वादल छा गये और वर्षा होने लगी, जिससे ठड भी वढ गई। वैसे भी सोनमर्ग आठ हजार फुट से कुछ ऊपर है और ठडा है। रात को हमे तापने की आवश्यकता हुई। हमारे शिकारी अव समझ गये थे कि हम शिकार न खेलेंगे, अत. कुछ उदासीन-से थे।

शनिवार, ६ सितम्वर

रातभर थोडी-थोड़ी वर्षा होती रही थी और आज सवेरे भी घने वादल थे। रुक-रुककर पानी वरस जाता था। अन्य दिनो की भाँति हम तैयार तो छह वजे ही हो गये थे, परन्तु वर्षा के डर के मारे रुके रहे और आठ वजे वादल खुलने पर चले। हमने तय कर लिया था कि आज गूंड न ठहरकर कगन के इधर कही अच्छी जगह ठहरेगे, जिससे कल दोपहर तक वायलपुर पर पहुँच जाय। गूंड के पास दोपहर के भोजन तथा विश्राम के पश्चात् मै और दाऊसाहव दो नौकरो को लेकर आगे वढ गये। सामान के साथ दोनो शिकारी तथा रसोइये थे। हमारे साथवाले नौकरो को शिकारियो ने स्थान वता दिया था और जो-जो खाद्य वस्तुएँ खरीदनी थी वे भी वता दी थी। लगभग चार वजे हम निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचे। यहाँपर काश्मीर राज्य के जगल के अफसर के तम्वू लगे हुए थे। जव हम वहाँ पहुँचे तो तम्वू मे साहव के कुत्तो ने हमारे कुत्तो को देखकर भौंकना प्रारम्भ किया। इधर हमारे कुत्ते भी भौंकने लगे। साहव तो जगल देखने गये थे, उनकी श्रीमतीजी डेरे पर

थी। एक नौकर से हमे कहलवाया कि यदि हम एक मील और आगे जा
ठहरे तो बड़ी कृपा होगी, अन्यथा कुत्ते रातभर सोने नही देंगे।
बिल्कुल उचित था। हमे लगभग एक घटा ठहरना पडा, तब कही
के साथ शिकारी पहुँचे। हमे खडे देखकर रमजानखाँ ने दाऊसाहब
नौकर आलिया से, जो हमारे साथ था, कहा, "अभीतक तुम क्या
रहे हो ? चाय के लिए लकडी तक नही लाये !" दाऊसाहब बोले, "
नही ठहरना है। देखो, पास मे जगल के साहब ठहरे हुए हैं।
श्रीमतीजी कहती हैं कि रात को कुत्ते भौक-भौंककर सोने नही देंगे
इसलिए आगे चलकर कही ठहर जायँगे।" सुनकर रमजानखाँ ने
कर कहा, "डेढ पडाव चल चुके हैं। क्या मै गधा हूँ जो
चलता जाऊँगा ?" मैने कहा, "तुम गधे नही हो, गधे तो हम
जो तुम सरीखे धूर्तो को साथ रखे हुए हैं।" यह सुनकर
लोन ने रमजानखाँ को खूब सुनाई। वह भी गिडगिडाने लगा। एक
और आगे बढकर लगभग छह बजे एक नाले के पास तम्बू लगा दिये
जबतक लकडी आदि आई, अँधेरा हो गया।

रमजानखाँ ने कहा, "गूजर लोग वापस जा रहे हैं तथा इस ओर
पठान भी बहुत हैं। रात को काफी सावधानी से रहना होगा, नही तो
सामान चोर ले जायँगे।"

हमारे साथ छह नौकरो के अतिरिक्त पाँच कुत्ते भी थे। अत ह
इतना भय न था। भोजन करने के उपरात जब सोने लगे तब
घिर आये और बिजली की कडक के साथ जोर की वर्षा प्रारम्भ हुई।
रातभर थोडी-बहुत वर्षा होती रही और कुत्ते भी बहुत भौके। वर्षा के
कारण उन्हे तम्बू के अन्दर रखना पडा था। नीद बिल्कुल नही आई।
बडी मुश्किल से सवेरा हुआ।

रविवार, १० सितम्बर

सवेरे उठकर देखा तो चारो ओर खेतो मे पानी भरा था और हमारा
सामान भी भीग गया था। नौ बजे के लगभग जब तम्बू सूखे, तब
सामान लादकर आगे बढे। मक्का के खेत पके हुए थे। जहाँ भी पूछते,
वहाँ लोग बताते कि मक्का खाने को रात मे भालू बहुत आते हैं।

दोपहर के समय जब भोजन करने ठहरे तो एक किसान ने आकर हमसे पूछा कि क्या आप भुट्टे खायँगे ? जब हमने उसे लाने को कहा तो वह कुछ भुट्टे ले आया, जिन्हे भूनकर हम सबने खाया। दाम चुकाते समय उसने भुट्टो के अतिरिक्त लकडी के भी दाम माँगे, जो वहीसे बीनकर इकट्ठी की गई थी। यह देखकर हमे आश्चर्य हुआ और जब हमने शिकारियो से पूछा तो वे भी उक्त किसान के पक्ष मे बोले। हमको बीनी हुई लकडी के दाम भी चुकाने पडे।

लगभग दो बजे हम वायल पुल पर पहुँचे, परन्तु वहाँ लारी नही थी। पुल पारकर लगभग एक मील पर एक गाँव मे पेड के नीचे बैठे सामान की प्रतीक्षा करते रहे। यहाँ से कुछ ही दूर खीर भवानी का मदिर है, जिसके दर्शन करने बहुतसे काश्मीरी पडित अपने कुटुम्ब-सहित जा रहे थे। थोडी देर मे हमारा सामान भी आ गया। हम सोच रहे थे कि आज गाँदरबल ठहरा जाय और कल श्रीनगर पहुँचा जाय। लगभग चार बजे लारी आ गई।

जब हम श्रीनगर पहुँचे तो मुहम्मद बाबा ने हमारा स्वागत किया और शिकार का हाल पूछकर खेद प्रकट किया कि हम लाल भालू तथा बारहसिंघा की शिकार नही खेल सके। वैसे हमे २६ सितम्बर के दिन श्रीनगर पहुँचना था।

सब नौकरो को सामान सौपने के लिये मुहम्मद बाबा की दूकान पर छोडकर हम दोनो होटल को चल दिये।

हमने शिकारियो को समझा दिया था कि हमारी मारी हुई शिकार की ट्राफी (सिर, चमडे आदि) भली प्रकार लकड़ी के खोखो मे बद कर दे, ताकि टीकमगढ ले जाने मे सुविधा रहे।

होटल मे पहुँचते ही हमने अपने साथ के गदे कपडे एक कोने में डाल दिये और स्नान करके साफ कपडे पहने। इतने मे मोख्तालोन ने आकर कहा कि एजेंट ने कहलाया है कि शिकार ट्राफी वे बनायँगे। हमने कहला दिया कि हम इसे मैसूर भेजेंगे।

सोमवार, ११ सितम्बर

सवेरे चाय पीकर तैयार हुए, तबतक हमारे छहो नौकर आ गये।

सुब्रन्हा हिसाब करके दाम चुकाये, साथ ही कुछ इनाम दिया। मैंने अपने शिकार के कपडे तीनो नौकरो को दे दिये। मुहम्मद बाबा की दुकान पर पहुँचकर हिसाब किया गया और दाम चुकाये गये। बुड्ढा बोला, "हमारी असली कमाई तो शिकार की ट्राफी बनाने मे थी। जब आप इसे मैसूर भेज रहे हो, तो सिवाय तम्बू आदि के किराये के हमे मिला ही क्या ?"

उसका हिसाब चुकाने के बाद जो रुपया हमारे एजेट के पास शेष था, लेकर होटल आये। शिकार की ट्राफी भी उठवाकर होटल मे मँगवाई और खोखो मे बद करवाई। लगभग बारह बजे सब सामान लेकर रेलवे एजेंसी मे गये। वहाँ सामान तुलवाया तथा टिकट भी ले लिये। हमें परसो, १३ तारीख को, रावलपिडी पहुँचना था और वहाँ रात की ट्रेन से दिल्ली जाना था। अत. कल सवेरे की बस से चलना था। होटल आकर हमने होटल के कल तक के दाम चुकाये।

मगलवार, १२ सितम्बर

सवेरे नौ बजे रेलवे एजेन्सी मे जाकर पूछा तो मालूम हुआ कि हमारा सामान कल ही चला गया है। रात को बारामूला से कुछ दूर वर्षा के कारण पहाड टूट गया, जिससे सडक बद है। आज सध्या तक रास्ता साफ होगा। जो लोग बस मे जायँगे, उन्हे कल रावलपिडी में सध्या की ट्रेन नही मिलेगी। यदि पहले दर्जे का टिकट रावलपिंडी का लिया जाय तो मोटर कार मिल सकेगी, जिससे कल सध्या तक रावल-पिंडी पहुँचा जायगा। हमने चालीस रुपये और दिये और अपने लिये एक कार पक्की की। ड्राइवर ने बताया कि रात रामपुर मे रहना है, क्योकि उरी और रामपुर के बीच सडक बन्द है। ऐसी दशा मे दोपहर के पश्चात् तीन बजे चलना ठीक होगा। रेलवे एजेसी मे हम सरीखे कई यात्रियो की भीड थी। सब जाने के लिये उत्सुक थे। युद्ध छिड जाने के कारण फौजें तैयार हो रही थी। कई अफसरो ने, जिनकी पत्नियाँ काश्मीर में थी, तार देकर उन्हे तुरन्त बुलाया था। कई अग्रेज महिलाएँ रो रही थी। कहती थी कि कही ऐसा न हो कि ट्रेन चूकने से वे अपने पतियो से न मिल सकें! भोजन के लिए होटल में पहुँचे तो मोल्तालोन बिस्तरा लिये

वहाँ तैयार था।

तीन बजे मोटरवाला होटल पहुँचा और हमने बिस्तरे लादकर होटलवालो से विदा ली।

आगे बढने पर दृश्य बडे सुन्दर दिखाई दिये। मोटर पश्चिम की ओर काश्मीर के मैदान में जा रही थी। हमे बारामूला से पहाड मिले। बारा-मूला अच्छी वडी बस्ती है। यहीसे झेलम काश्मीर के मैदान को छोडकर पहाडो मे घुसती है। लगभग छ बजे हम रामपुर पहुँचकर वहाँ के डाक-बँगले में ठहरे।

हमने उत्सुकतावश ड्राइवर से जब पूछा कि हमे कल रात की ट्रेन मिलेगी या नही तो वह बोला कि कल दस बजे तक भी अगर सडक खुल गई तो वह शाम तक रावलपिंडी पहुँचा देगा। यहीपर हमे मालूम हो गया कि सडक रुकने के पूर्व ही रेलवे एजेंसी की बस निकल चुकी थी। कई बसे तथा लारियाँ यहाँपर रुकी पडी थी।

बुधवार, १३ सितम्वर

सवेरे कलेवा करते समय खानसामा से मालूम हुआ कि झेलम के पार उत्तर की ओर के पहाडो मे बहुत मारखोर हैं। शिकारी मोटर द्वारा रामपुर तक जाते हैं और वहाँसे टट्टू लेकर दो दिन मे शिकार की जगह पहुँच जाते हैं। आठ वजे के लगभग रावलपिडी से श्रीनगर जाने-वाली कई वस और मोटरे निकली, जिनसे हमे पता चल गया कि सडक साफ कर दी गई है। हम भी तैयार होकर चल दिये। सडक झेलम के किनारे बनी हुई है। कुछ ही देर बाद उरी गाँव मिला, यहाँसे दुमेल वस्ती मिली। दुमेल से एक सडक झेलम पार कर मुजफ्फराबाद जाती हे। झेलम में काश्मीर के जगलो की लकडी बहती हुई देखी। इसे नीचे जाकर पजाब में ठेकेदार लोग इकट्ठी कर लेते हैं और मडी मे बेचते हैं। सब लकडी पर ठेकेदारो के चिह्न होते हैं ताकि वे अपनी-अपनी छाँट लें। कोहाला के पास हमने झेलम पार की। नदी के दोनो ओर काश्मीर तथा सीमाप्रान्त के कस्टम के नाके हैं। कोहाला सीमाप्रान्त का कस्वा है। कोहाला से मरी तक बराबर चढाई मिली।

इस प्रदेशवाले फौज में वहुत भरती होते हैं। कई जगह फौजी

अफसरों के बड़े सुन्दर मकान दिखाई दिये। मरी अच्छी साफ-सुथरी बस्ती है। मरी से रावलपिंडी तक एकदम उतार है। रावलपिडी हम लोग दिन डूबते पहुँचे।

रावलपिडी काफी बड़ा शहर है। स्टेशन पर पहुँचते ही हमने पूछा तो मालूम हो गया कि हमारा सामान आ गया है और आज ही रात दस बजे वाली एक्सप्रेस मे हम दोनो के लिये सीटे रिजर्व कर दी गई है। दाऊसाहब ने टुँडुप का टिकट खरीद लिया। टुँडुप गरमी के मारे घबरा रहा था। बेचारा लद्दाख का जीव रावलपिंडी की गरमी के मारे हाँफ रहा था।

गाड़ी आने पर हमलोग वहाँसे रवाना हुए। दिल्ली पहुँचे और वहा से टीकमगढ। इस प्रकार हम लोगो की यह लम्बी यात्रा समाप्त हुई।

निर्देश
१० २० ३० मील
नुर्ला
११
१२
१०

लद्दाख का नकशा
१५
१४७६०
पमजल
चेग मो
फोवरग
मसविक
१८८००
सकरतलाव
१४
मनपदम
१३२२०
चुशल
१४२२०
कर्दमलुगपा
रदोक
१३
सिंधु नदी
माहिया
पलकोको
नीमुमोतू
खर्गीक
रमका
११
तायो
१२
१०
नीट
हनले
सिंधु नदी
२० १० मील